I.S.S.N. 0975-6531

₹50/-

वैचारिकी

VAICHARIKI

मार्च-अप्रैल/मई-जून 2020 (संयुक्तांक) * भाग 36 - अंक 2/3

भारतीय विद्या मन्दिर

भारतीय विद्या मंदिर की द्वैमासिक शोध प्रधान पत्रिका

• वैचारिकी •

मार्च-अप्रैल/मई-जून 2020 (संयुक्तांक) भाग 36 - अंक 2/3

भारतीय विद्या मंदिर के प्रकाशन

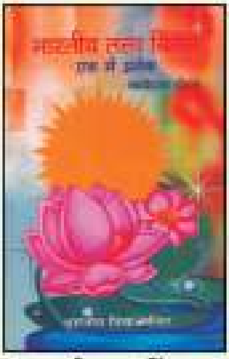

भारतीय तत्त्व चिंतन
माधोदास मूंधड़ा
मूल्य 150/- पृ.सं. 190
ISBN : 978-81-89302-15-9

रसो वै सः
माधोदास मूंधड़ा
मूल्य 150/- पृ.सं. 165
ISBN : 978-81-89302-16-7

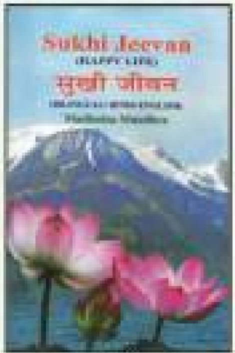

सुखी जीवन
माधोदास मूंधड़ा
मूल्य 275/- पृ. सं. 216
ISBN : 978-81-89302-52-8

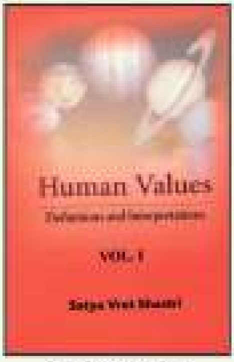

Human Values
Satya Vrat Shastri
Price : Rs. 395/- Pages : 264
ISBN : 978-81-89302-45-0

मानव मूल्य परिभाषाएं और व्याख्याएं
सत्यव्रत शास्त्री
मूल्य 550/- पृ. सं. 304
ISBN : 978-81-89302-52-8

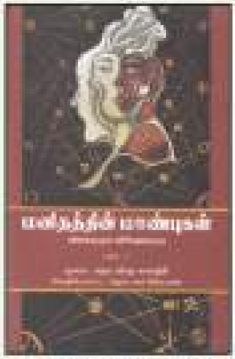

Human Value (Tamil)
Satya Vrat Shastri
Price : 450/- Pages : 320
ISBN : 978-81-89302-56-6

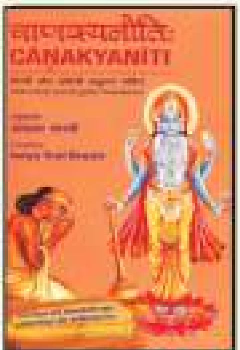

चाणक्यनीतिः
सत्यव्रत शास्त्री
मूल्य 295/- पृ.सं. 194
ISBN : 978-81-89302-42-9

Kamayani
Tr. Jaikishandas Sadani
Price : Rs. 900/- Pages : 477
ISBN : 978-81-89302-44-3

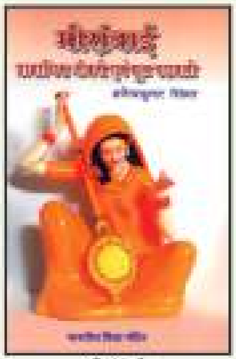

मीरांबाई
प्रामाणिक जीवनी एवं मूल पदावली
सम्पा. ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल
मूल्य 900/- पृ.सं. 584
ISBN : 978-81-89302-41-2

वैचारिकी

भारतीय विद्या मन्दिर की द्वैमासिक शोध प्रधान पत्रिका

वर दे, वीणावादिनि वर दे !
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मंत्र नव भारत में भर दे !
काट अंध-उर के बंधन-स्तर बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर;
कलुष-भेद-तम हर प्रकाश भर जगमग जग कर दे!
नव गति, नव लय, ताल-छंद नव नवल कंठ, नव जलद-मन्द्ररव;
नव नभ के नव विहग-वृंद को नव पर, नव स्वर दे!
वर दे, वीणावादिनि वर दे!

डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा
अध्यक्ष एवं प्रधान सम्पादक

भारतीय विद्या मंदिर

I.S.S.N. 0975-6531 **वैचारिकी** वर्ष : 36 अंक 2-3

धर्म-दर्शन-विज्ञान, साहित्य-लोकसाहित्य, इतिहास-पुरातत्व, कला-लोककला
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त

मार्च-अप्रैल/मई-जून 2020 • फाल्गुन शुक्ल 21-आषाढ़ शुक्ल 10, 2077 वि.सं.• रु. 50

अध्यक्ष एवं प्रधान संपादक
डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा

संपादकीय कार्यालय
भारतीय विद्या मंदिर
12/1, नेली सेनगुप्ता सरणी
कोलकाता-700087
दूरभाष : 033-71001614
ई-मेल : bvm.vaichariki@gmail.com
वेबसाइट : www.bharatiyavidyamandir.org

साहित्य सम्पादक
रावेल पुष्प

प्रबंध सम्पादक
शंकरलाल सोमानी
27, शेक्सपीयर सरणी
कोलकाता-700017
मो. 09830559364
ई-मेल : shankar.somani@simplexinfra.com

सदस्यता शुल्क :-
एक प्रति 50/- रुपये
वार्षिक 300/- रुपये
द्वैवार्षिक 600/- रुपये

भुगतान
Payee's Name :
BHARATIYA VIDYA MANDIR
Current A/c.No. : 32030320176
Bank : State Bank of India
Branch : New Market
IFSC Code No. : SBIN0004662

अनुक्रम

- हिन्दी काव्य में गंगा का पौराणिक व आध्यात्मिक स्वरूप - **डा. मृदुल जोशी** 06
- विज्ञान जगत में महिलाएं - **डॉ. विद्या केशव चिटको** 16
- इतिहास लेखन की भारतीय अवधारणा - **डॉ. सतीश कुमार त्रिगुणायत** 25
- साहित्य और प्रकृति का सामंजस्यपूर्ण संबंध- **डॉ. वासुदेवन 'शेष'** 29
- होला महल्ला - **रावेल पुष्प** 33
- 'राम हमारी संस्कृति का सारस्वत हस्ताक्षर है' - **डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी** 35
- तमिलनाडु में रामनवमी - **डॉ. आर. एन. श्रीनिवासन** 39
- लाहौर दरबार में अल्पज्ञात कवि माधोदास और उनकी पांडुलिपि : रामचरित्र - **डॉ. सुनीता शर्मा** 42
- ऋग्वेद, बाईबल और कुरान में सृष्टि-प्रक्रिया एवं सृष्टि-पूर्व की स्थिति - **डॉ. गोपाल शर्मा** 52
- हिंदी भाषा का आरंभिक संघर्ष - **डॉ. बीरेन्द्र सिंह** 60
- हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श - **अंजना देवी** 64
- हिंदी-गुजराती गजल : एक तुलनात्मक दृष्टि- **प्रो. भगवानदास जैन** 72
- अहिल्या की अन्तर्व्यथा - **सीताराम पांडे** 77
- हम न मरिहें, मरिहें संसारा - **डॉ. पूरन सहगल** 81
- हिन्दी भाषा के मुसलमान कवियों का स्वर्णकाल - **अक्षय कुमार देराश्री** 85
- **पाठक मंच** - 87

  मैं अचल सनातन आत्मा हूं (गिरीश चौबे), **गीता और सूफीमत** (वीरेंद्रनाथ भार्गव), **अद्वितीय-मेहकर बालाजी (विष्णु)**, **स्वर्ण मयूर घड़ी**, **यूरोपीय सभ्यता में नदी को देवी मानना** (जितेन्द्रनाथ जौहरी), **साग-सब्जियों में प्रचूर औषधि** (शंकरलाल सोमानी).
- **प्रतिस्वर** - 94

एक अनचाहे अंतराल के बाद आप सब के समक्ष पुनः उपस्थित हूं। मेरी सदिच्छा तो यही थी कि हर दो महीनों में आप सबके बीच वैचारिकी का नया अंक लेकर हाजिर हो सकूं, लेकिन जैसा कि आप सब जानते ही हैं कि हम सब, यहां तक कि सारी दुनिया ही एक अनजान अति सूक्ष्म वायरस कोरोना के प्रकोप से बुरी तरह आक्रांत हो चुके हैं। हमारा जनवरी-फरवरी 2020 अंक जो मुद्रण के आखिरी चरण में था, अचानक इस महामारी के कारण हुए लॉकडाउन में लॉक हो गया था। हमने कुछ महीनों तक इंतजार किया लेकिन स्थितियां अनुकूल न होने के कारण उसे ई.पत्रिका के रूप में ही जारी करना पड़ा।

आज हम इस कोरोना महामारी से आक्रांत हैं लेकिन हम इंसानों ने प्रकृति के साथ बुरी तरह छेड़छाड़ भी तो की है। हमने पर्यावरण को प्रदूषण के ऐसे स्तर तक लाकर खड़ा कर दिया है कि कई पशु पक्षियों की प्रजातियां तक लुप्त हो गई हैं। मानव के रहने लायक भी स्थितियां कोई बहुत अधिक अनुकूल नहीं रह गईं। वैसे शायद प्रकृति ही जनसंख्या संतुलन हो या फिर पर्यावरण संतुलन को सही रास्ते पर लाने की? बात हो, शायद ऐसी किसी बड़ी महामारी को आमंत्रित कर लेती है। ऐतिहासिक तथ्य ये बताते हैं कि लगभग हर 100 सालों में ऐसी कोई विश्व में महामारी अवश्य आती है ।

आज से लगभग 102 साल पहले 1918 की बात को लें तो उस समय सारी दुनिया में स्पेनिश फ्लू फैल गया था। भारत में तो इस प्रकोप ने भयंकर रूप धारण कर लिया था और लगभग डेढ़ करोड़ लोगों को अपना ग्रास बना लिया था। इस फ्लू से गांधी जी का परिवार भी अछूता नहीं रहा था और उनके बड़े पुत्र हरीलाल की पत्नी गुलाब और बेटी शांति राजकोट में इसी फ्लू की शिकार हुई और महज एक सप्ताह के अंतराल पर ही मौत के मुंह में चली गईं। वैसे एक आलेख के अनुसार विदेशी इतिहासकार डेविड किलिग्रे और हावर्ड फ़िलिप की पुस्तक ' दि स्पैनिश इन्फ्लुएंजा पैनेडेमिक ऑफ 1918-1920 न्यू पर्सपेक्टिव' में साफ़ लिखा है कि सावरमती आश्रम में भी ये बीमारी फैली थी और स्वयं महात्मा गांधी,चार्ल्स एंड्रयू और शंकरलाल पारीख संक्रमित हुए थे ।

अब जरा और देखें तो प्रसिद्ध साहित्यकार सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के पिता, चाचा और पत्नी की मृत्यु भी इसी महामारी से हो गई थी। निराला जी ने अपने एक संस्मरण में लिखा है कि इलाहाबाद में गंगा लाशों से पट गई थी। वर्ष 1918 की सैनिटरी कमिश्नर की रिपोर्ट बताती है की उस समय अंतिम संस्कार के लिए लकड़ियां तक कम पड़ गई थीं और शव नदी में बहाये जाने लगे थे। उस समय हर और मौत का सन्नाटा पसर गया था और उस फ्लू का कोई माकूल इलाज या टीका उपलब्ध नहीं था।आज जब विज्ञान ने

इतनी तरक्की कर ली है लेकिन फिर भी इस कोरोना वायरस के इलाज की अब तक कोई भी कारगर दवा उपलब्ध नहीं हो पाई है। पूरी दुनिया के वैज्ञानिक बड़ी तेजी से इसके इलाज के लिए किसी वैक्सीन की खोज में लगे हैं। परीक्षण पर परीक्षण हो रहे हैं और इसका माकूल इलाज तो निकलेगा ही, लेकिन तब तक लाखों इंसानों की जानें जा चुकी होंगी।

इस कोरोना के कारण हुए अपने देश में लॉकडाउन में लाखों प्रवासी मजदूरों को शहरों में काम छिन जाने की वजह से गांव की ओर पैदल ही पलायन करना पड़ा था। इनकी त्रासदी सचमुच इतनी भयानक थी जो अंदर तक झकझोर कर देने वाली है। उनकी त्रासदी पर सत्ता पक्ष और विपक्ष में काफी कुछ लानत- मलामत भी हुई और उस पर काफी कुछ लिखा पढ़ा भी गया।

आज हम देख रहे हैं कि इस कोरोना के कारण हुए लॉकडाउन में लोगों को घरों के अंदर बंद रहने को विवश कर दिया है। तेज रफ्तार जिंदगी जैसे एकाएक ठहर-सी गई है। किसी के पास बात करने का वक्त नहीं था, यहां तक की काम पर जाते समय लोग किसी तरह निवाला निगल भर रहे थे। अपने बीबी-बच्चों की तरफ भी जी भरकर देख लेने की सुधि नहीं थी। ऐसे समय मुझे वो किस्सा याद आ रहा है, जब किसी से उसके बच्चों के बारे में पूछा गया कि वे अब कितने बड़े हो गये हैं? तो उसने अपने दोनों हाथों को फैला कर बताया कि इतने बड़े हो गये हैं। उससे जब इसका कारण पूछा गया कि बड़े बताने के लिए तुम एक हाथ को जमीन से ऊपर उठाकर भी बता सकते थे। तब उसने बड़ी मायूसी से जवाब दिया कि वो जब भी सुबह काम पर जाता है बच्चे अभी सोये हुए होते हैं और देर रात जब काम से लौटता है तो भी बच्चे सोये हुए ही मिलते हैं। दरअसल अपने बच्चों को खड़े हुए अवस्था में तो उसने देखा ही नहीं। वैसे ये बात भले ही साधारण तौर पर मज़ाहिया लग सकती है, लेकिन आम आदमी के जीवन का यथार्थ तो यही है। इस लॉकडाउन का सकारात्मक पहलू ये भी रहा कि लोग-बाग अपने परिवार के साथ वक्त बिता सके। अपने बच्चों को जी-भर कर निहार सके, उनके साथ खेल सके, पढ़ाई में कुछ मदद कर सके और पत्नी को भी प्यार-भरे कुछ पल दे सके। कुछ लोगों को घर के रोजमर्रा के कामों में सहयोग कर इस बात का भी बखूबी एहसास हुआ कि एक गृहिणी का भी सुचारु रूप से घर चलाने में कितना बड़ा योगदान होता है। पारिवारिक संबंधों में भी इस बीच नजदीकियां निश्चित रूप से बढ़ी हैं। हां, इसमें कुछ अपवाद हो सकते हैं जहां स्थितियां विपरीत भी हुई हैं। इसके अलावा व्यक्ति ने आत्मालोकन भी किया है और लगा कि जीवन का हर पल कितना महत्वपूर्ण है उसे किस तरह सार्थक रूप से जी लिया जाये। व्यक्ति ने अपने अंदर झांकने की कोशिश की और शांति की नैसर्गिक इच्छा को कुछ पलों के लिए ही सही उसे रूपायित होते हुए देखा है।

ये कोरोना-काल, करुणा-काल भी बना है और इसने जीवन की क्षणभंगुरता का ऐहसास तीव्रता से करवाया है और लोग-बाग अध्यात्म की ओर भी उन्मुख हुए हैं। इसी ऐहसास की ओर इंगित करता रहीम खानखाना का एक पद है-

सदा नगारा कूच का बाजत आठो जाम,
रहिमन या जग आई कै का करि रहा मुकाम।

सचमुच दुनिया से कूच करने का नगाड़ा तो हर पल बज रहा है इसलिए इस जीवन में जितना भी परमार्थ कर लिया जाए वही श्रेयस्कर है।

वैचारिकी भी जैसा कि मैंने कहा है कि पिछले अंक से ही ई. पत्रिका के रूप में जारी हो रही है और स्थितियां अनुकूल होने पर इसके मुद्रित रूप में भी प्रकाशित करने की चेष्टा तो रहेगी ही। इस अंक को हम मार्च-अप्रैल, मई-जून 2020 संयुक्त- अंक के रूप में ही प्रकाशित कर रहे हैं, ताकि समय के साथ सामंजस्य स्थापित किया जा सके। हमारी ई. पत्रिका जनवरी-फरवरी 2020 अंक से ही हमारे वेबसाइट www.bhartiyavidyamandir.org पर

भी उपलब्ध है, आप चाहें तो वहां जाकर भी पढ़ सकते हैं और इसे अपने मोबाईल या कंप्यूटर पर भी डाउनलोड कर सकते हैं।

हमने इस अंक के संयोजन में यह भी चेष्टा की है कि इस दौरान पड़ने वाले पर्व- त्योहारों से संबंधित कुछ आलेख भी शामिल किए जा सकें। हमने इन महीनों के दौरान अपने कई साहित्यकारों, रंग कर्मियों तथा अन्य क्षेत्रों से जुड़े महत्वपूर्ण व्यक्तियों को खोया है ,मसलन- रंगकर्मी उषा गांगुली, वरिष्ठ कवि नवल, नृत्यांगना अमला शंकर, उर्दू लेखक/ अनुवादक नुसरत ज़हीर तथा और भी कई- उन सब के प्रति हमारी भावपूर्ण श्रद्धांजलि।

इसके अलावा इस कोरोनावायरस के दौरान अपना जीवन दांव पर लगाकर लोगों की जिंदगी बचाने के क्रम में जो डॉक्टर, पैरा मेडिकल स्टाफ, पत्रकार, पुलिस या और भी तमाम ऐसे लोग जो लगे हुए थे और हमसे विदा हो गए, उनके प्रति भी हम श्रद्धावनत हैं ।

हम चाहते तो यहीं थे कि हम नियमित आप तक वैचारिकी के माध्यम से पहुंच सकें, लेकिन फिर भी हमें विश्वास है कि हम इस कोराना से जंग में अवश्य विजयी होंगे और एक बार फिर हमारी जिंदगी पटरी पर लौट आएगी और हम एक नियमित अंतराल पर आपकी प्रिय पत्रिका वैचारिकी आप तक पहुंचा सकेंगे।

हम ये भी चाहेंगे कि आप अपनी प्रतिक्रिया से हमें अवश्य अवगत कराते रहें ताकि हमारा ये सफ़र सुगम और सार्थक हो सके ।

इसी आशा और विश्वास के साथ

आपका ही -

(बिट्ठल दास मूंधड़ा)

लेखकों से अनुरोध

1) वैचारिकी में प्रकाशनार्थ विभिन्न विषयों पर अनावश्यक विस्तार से रहित शोध पूर्ण आलेख संदर्भ सहित सहर्ष आमंत्रित हैं। इसके अलावा खास मौकों, उत्सव या पर्वों से संबंधित आलेख भी समय से कम से कम 3 माह पूर्व भेजे जा सकते हैं।

2) प्रकाशन हेतु भेजे गए किसी भी आलेख का प्रकाशन संपादक का विशेषाधिकार है और प्राप्त होने वाले प्रत्येक आलेख को पत्रिका में प्रकाशित करना बाध्यता नहीं है।

आलेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें क्योंकि अस्वीकृत आलेख वापस करने का हमारे यहां कोई प्रावधान नहीं है।

3) आलेख/ रचना वर्तमान समय की मांग के अनुसार टाइप करवा कर यूनिकोड या DV-TTSurekh फोंट में हमारे ईमेल bvm.vaichariki@gmail.com पर ही भेजें, तथा उसकी प्रति डाक से भी भेज दें। नितांत असुविधा होने पर ही सुस्पष्ट लिखे हुए आलेख स्वीकार किए जाएंगे।

4) अपने आलेख के साथ पूरा नाम, परिचय, पता, चित्र, ईमेल तथा मोबाइल नंबर/ व्हाट्सएप नंबर अवश्य लिखें।

हिन्दी काव्य में गंगा का पौराणिक व आध्यात्मिक स्वरूप

डा. मृदुल जोशी

गमनार्थक 'गम' धातु से व्युत्पन्न 'गंगा' शब्द का जहाँ सामान्य शाब्दिक अर्थ 'निरंतर गतिशील जल प्रवाह' है, तो वहीं 'गम्यते ब्रह्मपदम् अनया' अथवा 'गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत् पदम् या शक्ति:विग्रह द्वारा इसे ब्रह्म पद प्राप्त कराने का सशक्त कारण भी माना गया है। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से लेकर शतपथ ब्राह्मण, जैमनीय ब्राह्मण, तैत्तिरीय आरण्यक, ब्रह्म पुराण, पद्म पुराण, विष्णु पुराण, शिव पुराण, मत्स्य पुराण, श्रीमद्भागवत, देवी भागवत, बृहन्नारदीय पुराण, मार्कण्डेय पुराण, अग्नि पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, लिंग पुराण, वराह पुराण, भविष्य पुराण, स्कन्द पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण, वामन पुराण, वाल्मीकि रामायण, महाभारत से लेकर हिन्दी की विविध विधाओं में गंगा का भौतिक व आध्यात्मिक महत्त्व विस्तार से वर्णित है।

कल-कल निनादिनी सदानीरा 'गंगा' भारतीय जनमानस के लिए केवल एक अतुलनीय प्राकृतिक सम्पदा ही नहीं है बल्कि एक समृद्ध संस्कृति की संवाहिका भी रही है। इसकी उठती-गिरती तरंगें न जाने कितनी पुरानी सभ्यता और संस्कृतियों के बिगड़ते-बनते स्वरूप की साक्षी रही हैं। 'गोमुख' से 'गंगा सागर' तक अपनी सकारात्मक उर्जा प्रवाह के साथ यह नदी अपने उपजाऊ तटों पर सघन जनसंख्या वाली मानव आबादी को भी संरक्षित करती चली है, जो एक महनीय सभ्यता की जन्मदात्री है। उत्तराखण्ड में हिमालय से लेकर बंगाल की खाड़ी के 'सुंदरवन' तक के एक बड़े भू-भाग का बारहमासी सिंचन का अनूठा स्रोत यह नदी उपजाउ कृषि, मत्स्य उद्योग, पर्यटन, साहसिक खेलों व विविध उद्योगों के विकास का प्रमुख कारक तो है ही, साथ ही उन्नत समाज के प्रमुख घटक धर्म, अध्यात्म, पर्यावरण, राजनीति, अर्थ नीति सबके सब इससे प्रभावित होते रहे हैं। यह भारत से लेकर बांग्लादेश तक की 2525 किलोमीटर की विशाल यात्रा करती है और इस तरह यह अपनी सहायक नदियों के साथ 10 लाख किलोमीटर क्षेत्रफल के अत्यंत उपजाउ मैदान की रचना करती है।

अपने उद्गम में प्रधान धारा भागीरथी के रूप में विख्यात गोमुख के गंगोत्री हिमनद से निकलती है, जिसकी उँचाई 3140 मीटर है। इस हिमनद में नंदा देवी, कामत पर्वत और त्रिशूल पर्वत की बर्फ पिघलकर आती है। यद्यपि गंगा को आकार लेने में अनेक धाराएँ सहायक हैं लेकिन 6 बड़ी धाराओं का भौगोलिक और सांस्कृतिक महत्त्व असंदिग्ध है।

अलकनंदा की तीन सहायक नदियाँ धौली, विष्णु गंगा तथा मंदाकिनी हैं। धौली गंगा का अलकनंदा से विष्णुप्रयाग में संगम होता है और अलकनंदा और मन्दाकिनी नंदप्रयाग में आकर मिलती हैं। यही अलकनंदा कर्ण प्रयाग में कर्ण गंगा या पिंडर से मिलती हैं। रुद्रप्रयाग में अलकनंदा और मन्दाकिनी आकर मिलती हैं। देवप्रयाग में भागीरथी व अलकनंदा संगम करती है और यहीं से यह सम्मिलित जलधारा गंगा के नाम से जानी जाती है।

आगे चलकर ऋषिकेश से हरिद्वार होती हुई यह मैदानी यात्रा करती हुई गढ़मुक्तेश्वर सौरों, फर्रुखाबाद, कन्नौज, बिठुर, कानपुर होते हुए प्रयागराज पहुँचती है, यहाँ इसका संगम अदृश्य सरस्वती और यमुना नदी से होता है। त्रिवेणी नाम से विख्यात यह संगम हिन्दुओं का एक महत्वपूर्ण तीर्थराज माना गया है। मोक्षदायिनी नगरी काशी में गंगा उत्तरवाहिनी होती है। तद्नन्तर मिरजापुर, पटना, भागलपुर पहुँचती है। मार्ग में अनेक सहायक नदियाँ जैसे सोन, गण्डक, सरयू, कोसी इत्यादि अनेक नदियाँ इसमें मिल जाती हैं। भागलपुर पहुँचकर गंगा दक्षिणावर्ती हो जाती है। पश्चिमी बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले के गिरिया नामक स्थान पर गंगा दो शाखाओं में विभाजित होती है- भागीरथी और पद्मा। भागीरथी नदी गिरिया से दक्षिण की ओर तथा पद्मा दक्षिण पूर्व की ओर बहती हुई बांग्लादेश में प्रवेश करती है। यहाँ से गंगा का डेल्टा प्रदेश प्रारम्भ हो जाता है। मुर्शिदाबाद से हुगली शहर तक गंगा भागीरथी के नाम से जानी जाती है और हुगली से मुहाने तक गंगा हुगली नदी है। हुगली नदी कोलकता, हावड़ा होते हुए सुन्दरवन के भारतीय भाग में सागर से जाकर मिलती है। पद्मा ब्रह्मपुत्र से निकली शाखा जमुना नदी और मेघना नदी से मिलती है जो आगे चलकर सुन्दरवन डेल्टा में जाकर बंगाल की खाड़ी में सागर संगम करती है। यहाँ गंगा और बंगाल की खाड़ी के संगम पर एक प्रसिद्ध हिन्दू तीर्थ 'गंगा-सागर-संगम' है। सुन्दर वन डेल्टा में भूमि का ढ़ाल कम होने के कारण अत्यंत धीमी गति से गंगा का प्रवाह होता है। सुन्दर वन अपनी अत्यंत प्रसिद्ध वनस्पतियों और वन्य जीवों के कारण विख्यात है। इस प्रकार हम देखते हैं कि पर्वत की उँचाइयों से तीव्र गति से बहती गंगा की धारा मैदानी इलाकों में मंथर होती चलती है।

भारतीय जनमानस के लिए 'गंगा' केवल नदी न होकर देवी तुल्य पूज्या और आराध्या है। समग्र विश्व के लिए कल्याणकारी अनूठी भारतीय संस्कृति और सभ्यता का उन्मेष और अभ्युदय भी इसके ही पावन तट पर हुआ है। कृषि प्रधान देशों की मेरु दण्ड नदियाँ विश्व के अन्य भागों में भी देव तुल्य श्रद्धा की पात्र रही हैं। उद्धाहरण के रूप में हम मिश्र की 'नील' नदी व इराक की 'दजला' और 'फरात' को ले सकते हैं जिन्हें अपने-अपने देशों में देवतुल्य माना गया है।

'गंगा' एक है लेकिन इसके अनन्त रूप हैं और प्रत्येक जन इसे अपने-अपने दृष्टिकोण से देखता रहा है। अमरकोश में गंगा के विभिन्न नाम इस प्रकार दिये गये हैं-

गंगा विष्णुपदी जह्नुतनया सुरनिम्नगा।
भागीरथी त्रिपथगा त्रिस्त्रोता भीष्मसूरपि।[1]

यह नदी विष्णु के चरणों से निकलने के कारण 'विष्णुपदी', भगीरथ की तपस्या से अवतरण के कारण 'भागीरथी', जह्नु की कृपा से मुक्त होने के कारण 'जाह्नवी' और पृथ्वी पर अवतरण के कारण 'गंगा' नाम से जानी गई है। महाभारत के वन पर्व में 'एषा गंगा सप्तविधा' कहते हुए गंगा के सात प्रकार माने जाते हैं। मत्स्य व वायुपुराण में इसकी सप्त धाराएँ मानी गयीं हैं। वाल्मीकि रामायण में स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल में बहने के कारण इसे 'त्रिपथगा' व विष्णुधर्मोत्तरपुराण में 'त्रैलोक्यव्यापिनी' कहा गया है। कई विद्वान यह भी मानते हैं कि विष्णु के चरणों से निकलने, ब्रह्मा के कमण्डल में रहने व शिव की जटाओं से निकलकर गंगा 'त्रिपथगा' कहलाई है। गंगा की प्रसिद्धि पृथ्वी लोक में ही नहीं द्युलोक व नक्षत्र लोक में भी है-

ख्यातिर्यस्याः खं दिवं गां च नित्यं
पुरा दिशो विदिशश्चावतस्थे।[2]

महाभारत के अनुशासन पर्व के 26 वें अध्याय में गंगा की प्रशस्ति उन्मुक्त कण्ठ से की गयी है-

वर्णाश्रमा यथा सर्वे धर्मज्ञान विवर्जिताः
क्रतवश्च यथा सोमास्तथा गंगा विना जगत्
यथा हीन नभोऽर्केण भूःशैलैः खं च वायुना।
तथा देशा दिशश्चैव गंगाहीना न संशयः।।[3]

वृहद्धर्मपुराण में गंगा के आविर्भाव तिथि का वर्णन किया गया है-

तृतीया नाम वैशाखे शुक्ला नाम्नाक्षया तिथिः।
हिमालय गृहे यत्र गंगा जाता चतुर्भुजा
वैशाख मासि शुक्लायां तृतीयायां दिनार्धके
बभूव देवी सा गंगा शुक्ला सत्ययुगाकृतिः।[4]

वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया) भी गंगा के आविर्भाव की मान्य तिथि है। ऋग्वेद के दशम मण्डल में अन्य नदियों के साथ गंगा का नाम सर्वप्रथम लिया गया है। इमं मे गंगेयमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमम्[5] इन प्रमुख प्राचीन नदियाँ के कारण ही भारत को 'सप्त सिन्धु' की उपाधि प्राप्त हुई।

शास्त्रों में 'ब्रह्मद्रव' के नाम से विख्यात 'गंगा' हमारी माँ है, जो अपनी क्रोड़ में मानव जीवन के साथ-साथ न जाने कितने ही मनुष्येतर जीव-जन्तु, कीट पतंगों व पर्यावरण को संरक्षित-सम्पोषित करती चली है। हिमालय के औषधीय वनस्पतियों से मिश्रित इसका जल स्वास्थ्यवर्धक माना जाता रहा है। वैज्ञानिकों ने इसमें 'बैक्टीरियोफेज' नामक विषाणु की उपस्थिति पायी थी जिसके फलस्वरूप अनेक हानिकारक सूक्ष्म जीवों को नष्ट कर इसमें रोगहरण क्षमता की परिपुष्टि भी की गई थी। हमारे शास्त्रों में यहाँ तक कह दिया गया था कि–

शरीरे जर्जरी भूते व्याधि ग्रस्ते कलेवरे,
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः।

हमारे ऋषि मुनियों ने इसकी स्वच्छता, निर्मलता, पवित्रता को बनाये रखने के लिए अनेक कठोर नियम बनाये थे। जिनमें वस्त्र प्रक्षालन, मल-मूत्र विर्सजन सदृश तेरह कर्मो का निषेध माना था-

गंगां पुण्यजलं प्राप्य त्रयोदश विवर्जयेत
शौचमाचमनंचैव निर्माल्यं मलघर्षणम्
गात्र संवाहनं क्रीड़ां प्रतिग्रहमथो रतिम्।
अन्यतीर्थरतिंचैव अन्यतीर्थ प्रशंसनम्
वस्त्रत्यागमथाघातं सन्तारंच विशेषतः।।
नाभ्यंगितः प्रविशेच्च गंगायां न मलार्दितः
न जल्पन्न मृषा वीक्षन्न वदन्ननृतं नरः।।

पद्मपुराण में भी वर्णित है कि गंगा के तट पर मूत्र, पुरीष, श्लेष्मा, निष्ठीवन, दूषिका, अश्रु अथवा मल से दूषित करने वाला पातकी होता है, यहाँ तक कि दन्त-धावन तथा वस्त्र प्रक्षालन आदि क्रियाएँ भी वर्जित की गई हैं-

मूत्रं वाथ पुरीषं वा गंगातीरे करोति यः।
न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटिशतैरपि।।
श्लेष्माणं वापि निष्ठीवं दूषिकां वाऽश्रु वामलम्
गंगातीरे तज्यंजेद् यस्तु स नूनं नारकी भवेत्।।
परिधेयाम्बराम्बूनि गंगा स्त्रोतसि न त्यजेत्
न दन्तधावनं कुर्याद् गंगागर्भे विचक्षणः।।
कुर्याच्चेन्मोहतः पुण्यं न गंगास्नानजं लभेत्।[6]
पद्मपुराण में भी स्पष्ट कहा गया है-
पापबुद्धिं परित्यज्य गंगायां लोकमातरि
स्नानं कुरुत हे लोका यदि सद्गतिमिच्छथ।[7]

गंगा स्नान की बड़ी सूक्ष्म विधि है। हमारे ऋषियों ने बताया है कि स्नान करते समय शरीर को बिना मले मूसल की तरह गंगा में अवगाहन करना चाहिए और यह भावना बनानी चाहिए कि अमृत रूप में ब्रह्मद्रव के द्वारा परमात्मा से साक्षात् मिलन हो रहा है।

आज हम इन सभी शास्त्रोक्त निषेधों को भूल गये हैं और अपने गैर ज़िम्मेदाराना व्यवहार से इसे प्रदूषित कर रहे हैं, जिसके फलस्वरूप असीमित शुद्धिकरण क्षमता रखने वाली और हमारी आस्था का अटूट केन्द्र 'गंगा' प्रदूषण से बचायी नहीं जा सकी है। औद्योगिक कचरों व मल युक्त नालों के गिरने से गंगा का जल आज इतना प्रदूषित हो गया है कि यह स्नान-पान एवं सिंचन तीनों के योग्य नहीं

रह गया है। यह एक बहुत बड़ी चिंता का विषय है। हिमालय से निकली 'अलकनंदा' और 'भागीरथी' नदियाँ देव प्रयाग में आकर 'गंगा' का स्वरूप धारण करती हैं।

लेकिन आज का सच यह है कि हरिद्वार में भी अविरल 'गंगा' का मूल जल नहीं रह जाता। यह केवल सहायक नदियों, नालों व भूजल का सम्मिश्रण मात्र बनकर रह गया है। आज इसका घटता जल-प्रवाह, घटती जल-संग्रहण क्षमता चिंता का कारण है। जीवन दायिनी गंगा का जल प्रदूषण के कारण रोग दायिनी बनकर रह गया है। आज सरकार की ओर से इसकी स्वच्छता और निर्मलता को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए 'नमामि गंगे' जैसे अनेक प्रोजेक्ट कार्य कर रहे हैं। जन-जागरूकता, जन-सहभागिता, क्रियान्वयन में सायुज्यता के बिना इनका सफल होना बहुत कठिन हो गया है। सबके संकट दूर करने वाली गंगा आज खुद संकट में है, जिसके मूल में हम स्वयं हैं। यह एक विचारणीय विषय है। आज सभी को संकल्पबद्ध होने की आवश्यकता है कि गंगा की अविरल धारा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए हमें प्राण-प्रण से प्रयत्न करना चाहिए। हमें संकल्प लेना चाहिए की इस पर बँधें बडे-बड़े बाँधों व पावर प्लान्ट के स्थान पर छोटे-छोटे बाँध व पावर प्लान्ट मुख्य स्रोत से हटकर बनाये जायें ताकि मुख्य धारा अविरल बह सके और इसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बनी रह सके। साथ ही हमें संकल्पबद्ध होना चाहिए कि इसके स्रोत में किसी भी प्रकार के प्रदूषित पदार्थों को जाने से रोका जा सके।

जहाँ तक हिन्दी काव्य में 'गंगा' के वर्णन का सम्बन्ध है, वह अनेक स्थलों पर हमारी चिरन्तन आस्था का प्रतिरूप बनकर ही सामने आया है। हिन्दी के कवियों ने 'गंगा' को असीमित श्रद्धा के साथ देवनदी, पापनाशिनी, भुक्तिमुक्ति प्रदायिनी के रूप में ही चित्रित किया है। अन्य श्रद्धालुओं की भाँति ही इन कवियों ने भी 'गंगा' के जल-पान, स्नान यहाँ तक कि दर्शन मात्र से पाप नाश की आस्था दर्शायी है। ये कवि 'गंगा' के पौराणिक व मिथकीय स्वरूप को ही बल देते चले हैं। पुराणों में इसकी तीन धाराओं को- स्वर्ग गंगा(मन्दाकिनी), भू गंगा (भागीरथी) और पाताल गंगा(भोगावती) नाम से पुकारा गया है। विष्णु पुराण में 'गंगा' के नाम लेने, सुनने, उसे देखने, उसका जल पीने, स्पर्श करने, उसमें स्नान करने तथा सौ योजन दूर से उच्चारण करने मात्र से मनुष्य के तीन जन्मों के पाप नष्ट होने की बात कही गयी है-

गंगा गंगेति यो ब्रूयात् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः विष्णुलोकं स गच्छति।।

यहीं नहीं 'गंगा' को सद्यः पापनाशिनी, दुःख विनाशिनी, मोक्षदायिनी के रूप में स्वीकृति मिली है-

सद्यः पातक संहत्री सद्यो दुःख विनाशिनि।
सुखदा मोक्षदा गंगा गंगेव परमा गतिः।।

बृहन्नारदीय पुराण में 'गंगा' के संगम पर स्नान करने पर दिव्य लोक की प्राप्ति की परिकल्पना है और इसमें स्नान से संसार में आवागमन से मुक्ति की भी बात कही गयी है-

गंगाद्वारे प्रयागे च गंगा सागर संगमे।
ऐषुस्नाता दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः।।[8]

पद्मपुराण में वर्णित है कि अंतिमकाल में गंगा का एक बिन्दु पीने पर भी परम् पद की प्राप्ति होती है-

गंगाम्भः सीकरं यस्तु सम्मितं सर्षपस्य च।
प्राप्नोति मृत्युकाले तु स गच्छेत् परं पदम्।।[9]

गंगा अपना नाम ऊच्चारण करने वाले के पापों का नाश करती है, दर्शन करने वालों का कल्याण करती है तथा स्नान-पान करने वालों की सात पीढ़ियों तक को पवित्र करती है-

पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्।[10]

नृसिंह पुराण में गंगा में सभी तीर्थों को समाहित माना गया है- **'सर्वतीर्थमयी गंगा सर्वदेवमयो हरिः।'**

सभी पुराणों में 'गंगा' को महनीय माना है लेकिन तीन स्थान- हरिद्वार, प्रयाग तथा गंगासागर में स्नान करने वाले प्राणी स्वर्ग को प्राप्त होते हैं। यहीं नहीं जो इसके तट पर मृत्यु लाभ करते हैं वे पुनर्जन्म

नहीं धारण करते, ऐसा पुराणों में वर्णित है। इसी आस्था को महाकवि विद्यापति ने अपनी रचनाओं में सँजोया है। भाव विह्वल स्वर से उन्होंने 'गंगा' की स्तुति की है-

कर जोरि विनवउँ विमल तरंगे।
पुन दरसन हों पुनमति गंगे।

बृहन्नारदीय पुराण में 'हरिदक्षिणपादाब्जक्षालना-दमरापगा'[11] के अनुसार 'गंगा' को भगवान विष्णु के दाहिनी पैर के प्रक्षालन से उद्भूत माना है तथा ब्रह्मा के कमण्डल में इसका वास माना है। यही नहीं राजा भगीरथ द्वारा अपने पूर्वजों को तारने के लिए कठोर तप के बाद गंगा की उत्पत्ति की कथा कही गयी है। विद्यापति ने भी अपनी कविताओं में ऐसी ही मिथकीय विश्वासों की पुनरावृति की है-

ब्रह्मकमण्डलु वास सुवासिनी, सागर नागर गृह बाले
पातक महिस विदारन कारन, घृत करवाल बीचि माले
जय गंगे, जय गंगे, शरणागत भय गंगे।[12]

पुराणों के समान ही वे भी मानते है कि 'गंगा' स्नान से व्यक्ति कृतार्थ होता है-

कि करब जप तप जोग धेआने,
जनम कृतारथ एकहि सनाने
भनई विद्यापति समदजो तोही,
अन्तकाल जनु बिसरह मोही।[13]

आदिकालीन कवि जगनिक ने भी 'आल्हा खण्ड' में प्रयागराज की त्रिवेणी में स्नान को पाप नाशक बताया है-

प्रयागराज सो तीरथ ध्यावौं, जँह पर गंग मात लहराय
एक ओर से जमुना आई, दोनों मिलीं भुजा फैलाय
सरस्वती नीचे से निकलीं, तीरवेनी सो तीर्थ कहाय।
सुमिर त्रिवेनी प्रागराज की मज्जन करे पाप हौं छाय।

कबीर, जायसी, सूर, तुलसी इन सभी भक्ति कालीन कवियों की लेखिनी से गंगा का वर्णन प्रसवित हुआ है। कबीर का विद्रोही रूप भले ही धार्मिक पाखंडियों को सबक सिखाने के लिए 'सकल जनम सिव पुरी गवाया, मरती बार मगहर उठी आया।'[14] तथा 'अन्तरि मैल जे तीरथ न्हावै, तीसु वैकुण्ठ न जाना'[15] कहते रहे हैं लेकिन अपने दार्शनिक वक्तव्यों को उन्होंने गंगा के माध्यम से ही अभिव्यक्ति दी है-

कबीर खाई कोट की पाणीं पीवे न कोइ
आइ मिलै जब गंग मैं, तब सब गंगोदक होइ।[16] कहते हुए गंगा की महिमा का बखान किया है। इसी प्रकार गंगा जल के मिलने से सामान्य जल में भी गंगा की सी पवित्रता समाहित होने की बात कही है-

गंगा के संग सलिला बिगरी, सोइ सलिला गंगा होइ निबरी।

पौराणिक कथा के अनुसार सगर के साठ हजार पुत्रों की मुक्ति हेतु उनके एक पुत्र अंशुमान द्वारा गंगा की आराधना व उसके बाद उनके पुत्र दिलीप ने गंगा को पृथ्वी पर लाने का प्रयत्न किया। दिलीप की दूसरी पत्नी के पुत्र भगीरथ के प्रयत्नों से गंगा पृथ्वी पर आयी। 'सूरसागर' के नवम् स्कन्ध में गंगा अवतरण के वही पौराणिक कथा को सूर ने दोहराया है-

'अंसुमान सुनि राई बिहाइ,
गंगा हेतु कियो तप जाइ।
याही विधि दिलीप तप किन्हों,
पै गंगा जू पर नहीं दिन्हों।
बहुरि भगीरथ तप बहुं कियौ,
तब गंगाजू दर्शन दियौ।

भक्त शिरोमणि तुलसीदास जी ने भी गंगा के प्रति अगाध श्रद्धा प्रकट की है। 'रामचरितमानस' में सीता द्वारा गंगा की स्तुति समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाली देवी के रूप में की गयी है-

सियँ सुरसरहि कहेऊ कर जोरी, मातु मनोरथ पुरउबि मोरी।[17]

इन पंक्तियों में गंगा को मनोकामना प्रतिपूर्ति का अमोघ साधन माना गया है तथा 'सुरसरि सम सब कहँ हित होई' कहकर भागीरथी को सबके लिए हितकारी भी बताया गया है। तुलसी ने 'कवितावली' में भागीरथी के तट में रहने की अभिलाषा प्रकट की है-

बारि तिहारो निहारि मुरारि भएँ परसें पद पाप लहौंगो।

ईसु ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभु की समताँ बड़े दोष दहौंगो।।

बरु बारहिं बार सरीर धरौं, रघुबीर ह्वै तव तीर रहौंगो।

भागीरथी! बिनवौं कर जोरि, बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो।।[18]

पुराणों में जहाँ गंगा जल को ब्रह्मद्रव की संज्ञा दी गयी है, मानसकार ने भी गंगा को ब्रह्ममय ही माना है-

करहिं प्रनाम नगर नर नारी, मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी।[19]

श्रीमद्शंकराचार्य ने गंगा स्तुति में 'तव तट निकटे यस्य निवासः, खलु वैकुण्ठे तस्य निवास?।'[20] कहकर गंगा के तट में निवास को साक्षात विष्णु लोक के निवास के समान पवित्र माना है। तुलसी भी गंगा के इस पावन रूप को जानते हैं, जहाँ देवता तक गंगा की आराधना के लिए लालायित रहते हैं-

देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा कहुँ कोटि उधारे।
देखि जले झगरैं सुरनारि, सुरेस बनाइ विमान सँवारे।।
पूजा को साजु विरंच रचैं, तुलसी जे महातम जानि तिहारे।
ओक की नींव परी हरिलोक विलोकत गंग तरंग तिहारे।[21]
तव चेन्मातः स्रोतः स्नातः पुनरपि जठरे सोऽपि न जातः।
नरक निवारिणि जाह्नवी गंगे कलुष विनाशिनि महिमोत्तुगे।।[22]

कहकर शंकराचार्य जी ने गंगा को मुक्तिप्रदायिनी माना है। शंकराचार्य का भक्ति प्रपूरित अन्तःकरण गंगा के मातृ रूप का स्तवन करता है-

देवि सुरेश्वरि भगवति गंगे त्रिभुवनतारिणि तरलतरंगे।
शंकरमौलिविहारिणि विमले मम मतिरास्तां तव पदकमले।
भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव जलमहिमा निगमे ख्यात?।
नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपामयि मामज्ञानम्।
हरिपदपाद्यतरिगिंणि गंगे हिमविधुमुक्ताधवलतरंगे।
दूरीकुरु मम दुष्कृतिभारं कुरु कृपया भवसागरपारम्।।[23]

गंगा के पौराणिक स्वरूप को वर्णित करते हुए भक्त शंकराचार्य देवी के चरणावनत हैं और पूर्णतः समर्पित हैं। गंगा उनके लिए करुणामयी, दयामयी और सर्वशक्तिस्वरूपा माँ हैं। उनकी क्रोड़ में वे शिशु के समान पूर्णतः निर्भर और निश्चिंत हैं। वह स्वयं को परम् अज्ञानी मानते हुए केवल और केवल उनसे ही स्वयं की मुक्तिहेतु प्रार्थना करते हैं। उनका विश्वास है कि माँ गंगा की कृपा उनके समस्त कल्मषों का नाश कर मुक्तिप्रदान करेगी। शंकराचार्य जी के लिए गंगा से बढ़कर और कोई भी शरण्य नहीं है। वह उनके लिए परमानन्दमयी है और उसका पावन तट साक्षात् वैकुण्ठ के समान महनीय है-

रोगं शोकं तापं पापं हर मे भगवति कुमतिकलापम्।
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे।।
अलकानन्दे पमानन्दे कुरु करुणामयि कातरवन्द्ये।
तव तटनिकटे यस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः।।
वरमिह नीरे कमठो मीनः किं वा तीरे शरटः क्षीणः।
अथवा श्वपचो मलिनो दीनस्तव न हि दूरे नृपतिकुलीनः।।[24]

वे तो एक क्षण के लिए भी गंगा के तट का परित्याग करना नहीं चाहते। उन्हें जल में कच्छप या मीन बनकर रहना इष्ट है, यहाँ तक कि गिरगिट या चाण्डाल कुल में जन्म लेकर भी गंगा के तट में रहना उन्हें कुलीन राजा बनकर गंगा वास से दूर जाने से श्रेष्ठ प्रतीत होता है।

गंगा को समस्त कल्मषों का प्रक्षालन करने वाली देव नदी की संज्ञा भी प्राप्त है। तुलसीदास जी ने भी गंगा के इसी रूप की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है-

'जिनको पुनीत वारि धारि सिर पे मुरारि। त्रिपथगामिनी जसु वेद कहँ गाइ कै'।

आदिकवि वाल्मीकि ने रामायण में अनेक स्थलों पर गंगा की स्तुति की है। उनमें से एक है सीता द्वारा गंगा की वन्दना-

त्वं हि त्रिपथगे देवि ब्रहमलोकं समक्षसे
भार्या चोदधिराजस्य लोकेऽसिन सम्प्रदृश्यसे
सा त्वां देवि नमस्यामि, प्रशंसामि च शोभने।[25]

श्रीमद्भगवद्गीता के 'स्त्रोतसामस्मि जाह्नवी'[26] की तर्ज पर तुलसी ने भी गंगा को साक्षात् परब्रह्म माना है-

ब्रह्म को व्यापक वेद कहैं,

गम नाहिं गिरा गुन-ग्यान-गुनी को।

जो करता, भरता, हरता, सुर साहिब, साहिब दीन दुनी को।।

सोइ भयो द्रव रूप सही जु है, नाथ विरंचि महेस मुनी को।

मानि प्रतीति सदा 'तुलसी', जल काहे न सेवत देव धुनी को।[27]

शंकराचार्य की 'पतितोद्धारिणी भगवति गंगे' रीतिकालीन कवि पद्माकर की आस्था का भी केन्द्र-बिन्दु रही है-

तेरो तोय छबै करि छुवति तन जाको बात
तिनकी चलै न जमलोकन में बात है।
जहाँ जहाँ मैया धूरि तेरी उड़ि जात गंगा
तहाँ तहाँ पावन की धूरि उड़ि जात है।

'गंगा लहरी' में गंगा के अद्भुत प्रताप का वर्णन कविवर इस प्रकार करते हैं-

विधि के कमण्डल कि सिद्धि है प्रसिद्ध यही,
हरिपद पंकज प्रताप की नहर है।।
कहे पद्माकर गिरीस सीस मण्डल के
मुण्डन की माल तत्काल आप हर है
भूषित भगीरथ के रथ की सुपुन्य पंथ,
जन्हु जप जोग फल फैल की लहर है
छेम की छहर गंगा रावरी लहर,
कलिकाल को कहर जगजाल को जहर है।

कवि पद्माकर तो पाप नाशिनी गंगा की शरण में इतने आश्वस्त हैं कि वे अपने समस्त कलुषों को ललकारते हुए कह उठते हैं-

जैसे ते न मोको कैहूँ नेकहू डरात हुतो ऐसे अब तोसों हौंहु नेकहूँ न डरिहौं।

कहै पद्माकर प्रचंड जो परैगो तो उमंडकरि तीसों भुजदंड ठोंकि लरिहौं।।

चलो चलु चलो चलु बिचलु न बीचही ते, कीच बीच नीच! ते कुटुम्ब को कचरिहौं।

ऐरे दगादार! मेरे पातक अपार तौंहि गंगा की कछार में पछारि छार करिहौं।

कविवर रसखान के हृदय में भी गंगा के प्रति अगाध श्रद्धा और भक्ति है-

वैद की औषधि खाउँ कुछ न करौ व्रत संजम री! सुनु मोसे।

तो जल-पान कियौं 'रसखानि' संजीवन लाभ लहौं सुख तोसे।

एसी! सुधामयी भागीरथी! नित पथ्य-कुपथ्य करै तोहि पोसे।

आक धतूरे चबात फिरैं विष खात फिरैं सिव तोरे भरोसे।[28]

इसी प्रकार रहीम, ताज व मीर इत्यादि मुसलमान कवियों ने भी अपनी कृतियों में गंगा के प्रति अगाध श्रद्धा प्रदर्शित की है।

आधुनिक काल में श्री जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' की कृति, 'गंगावतरण' में वही चिरपरिचित कलिकाल उद्धारिका, पतित पावनी रूप के ही दर्शन मिलते हैं-

पापी पतित, स्वजाति व्यक्ति सौ सौ पीढ़िनि के।
धर्म विरोधी कर्म भ्रष्ट च्युत स्रुति सीढ़िनि के।।
तव जल श्रद्धा सहित न्हाइ हरनाम उच्चारत।
ह्वै सब तन मन सुद्ध हौंहि भारत के भारत।

इसी प्रकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी अपने भावभरित हृदय से गंगा की महिमा का गायन किया है-

गंगा तुमरी साँच बड़ाई।
एक सगर सुत हित जग आई तारयो नर समुदाई।
एक चातक निज तृषा बुझावत जाँचत घन अकुलाई।।
सो सरवर नद नदी बारि निधि पूरत सब झर लाई।
नाम लेत पिअत एक तुम तारत कुल अकुलाई।।
'हरीचन्द' याही तैं तो सिब राखौं सीस चढ़ाई।

साकेत के रचियता मैथिली शरण गुप्त 'साकेत' के पंचम सर्ग में सीता के द्वारा गंगा की भावभरित स्तुति करवाते दृष्टिगत होते हैं-

जय गंगे, आनन्द तरंगे, कलरवे,
अमल अंचले, पुण्यजले दिव सम्भवे!
सरस रहे यह भरत-भूमि तुम से सदा,
हर सबकी तुम एक चलाचल सम्पदा।
दरस-परस की सुकृत सिद्धि ही जब मिली,
माँगे तुमसे आज और क्या मैथिली

बस, यह वन की अवधि यथा विधि तर सकूँ
समुचित पूजा-भेंट लौटकर कर सकूँ।[29]

एक अन्य स्थल पर गंगा की धवल धारा को मैथिलीशरण गुप्त मोतियों की माला की उपमा देते हैं-

यह थी एक विशाल मोतियों की लड़ी
स्वर्ग कण्ठ से छूट धरा पर गिर पड़ी
सह न सकी भव ताप अचानक गल गई
हिम होकर भी द्रवित रही कल जल गई।

प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानन्द पंत ने 'नौका विहार' कविता में गंगा को एक तापसी बाला के रूप में चित्रित किया है। ये स्वर उसके परम्परागत वर्णन से कुछ अलग हटकर हैं-

'तापस बाला गंगा निर्मल शशि मुख से दीपित मृदु कर तल' वहीं एक अन्य स्थान पर कविवर पंत भी गंगा को उसी परम्परागत रूप में चित्रित करते हैं-

गीले तन पर मृदु सन्ध्यातप
वह विष्णुपदी शिवमैलि स्रुता।
वह भीष्म प्रसू औ जन्हुसुता
वह देव निम्नगा स्वर्गंगा
वह सगरपुत्र तारिणी श्रुता।

महाप्राण सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ने भी गंगा को संबोधित करके एक स्वतंत्र कविता की रचना की है जहाँ कवि का भक्ति से आवेष्टित स्वर प्रबल है-

'गंगा ज्योर्तिजल कण धवल धार हार गले'

इन्होंने 'अर्चना' काव्य संकलन में गंगा के प्रति अपने भक्ति प्रसून कुछ इस प्रकार अभिव्यक्त किये हैं-

हे जननि, तुम तपश्चरिता
जगत की गाति सुमति भरिता
कामना के हाथ थक कर
रह गये मुख विमुख, बककर
निःस्व के उर विश्व के सुर
बह चली हो तमस्तरिता
विवश होकर मिले शंकर
कर तुम्हारे हैं विजय वर,
चरण पर मस्तक झुकाकर
शरण हूँ, तुम मरण सरिता।

मदन वात्स्यायन ने 'गंगा' नामक कविता में गंगा को किसानों के आँसू पोछने वाली माँ के रूप में चित्रित किया है। कवि सुरेन्द्र वाजपेयी की कविता में सांस्कृतिक, आध्यात्मिक उत्थान में निरत गंगा की दयनीय स्थिति को चित्रित किया है और 'मोक्षदायिनी स्वयं मोक्ष के द्वार खड़ी, पतित पावनी हैं दूषित बेजार बड़ी' कहकर पाठकों के समक्ष अनेक प्रश्न चिह्न लगाये हैं। इसीप्रकार युवा कवि अनुराग तिवारी 'गंगा केवल नदी नहीं है' कविता के माध्यम से 'श्री हरि के चरणों का अमृत, गंगा केवल नदी नहीं है। सदियों से बहती संस्कृति है, केवल जल की धार नहीं है' कहकर अपनी असीम श्रद्धा तो प्रकट करते ही हैं लेकिन गंगा की वर्तमान दशा को देखकर अत्यंत चिंतित होकर लिखते हैं-

'हे पाप नाशिनी गंगा माँ! दो जन को सुविचार।
विचलित और शर्मिदा हूँ, मैं तेरी दशा निहार।।'

लेकिन आज भी कई कवि गंगा की पावन जलधारा को अंतस् की शुद्धि का प्रबल कारक मानते हैं। गंगा का झिलमिलाता प्रवाह दर्शन मात्र से भावभरित हृदय में असीमित शांति और अखण्ड ज्ञान का स्रोत उमड़ पड़ता है-

हे राजरानी!
ये झिलमिलाते हज़ारों-हज़ार दिये
तेरे हज़ारों-हज़ार
चमचमाते गहने हैं/ख़ालिस सोने के
जिन्हें पहने तू/बेहद शाही अन्दाज़ में
बढ़ी चली आती है/ख़रामा-ख़रामा
तेरा बेहद खूबसूरत चेहरा
उस झिलमिलाती आब में
और भी रूहानी हो जाता है
इसकी एक चुटकी भर झलक
मेरे भीतर भी/बुरक जाती है
दूर तक/पलकों को फलाँगती हुई।
और फिर.................
कोना-कोना/रौशन-रौशन
हो उठता है।[30]

गंगा के पावन तट पर अनेक संस्कृतियाँ, सभ्यताएँ जन्मीं और उत्तरोत्तर विकसनशील होती चली गयीं। प्राचीनतम सभ्यता से वर्तमान की साक्षी 'गंगा' को अभिलक्ष्य कर समकालीन कवि डा. अम्बाशंकर नागर द्वारा रचा गया महाकाव्य 'पतित पावनी गंगा' एक अनूठी रचना है, जिसका प्रकाशन भारतीय विद्यामंदिर कोलकाता द्वारा किया गया है। प्रादुर्भाव, प्रणय, प्रतिवाद, प्रतिबोध और प्रस्थान सदृश पाँच खण्डों में विभक्तइस कृति में रचनाकार ने 'गंगा' को एक नदी, एक स्त्री तथा अखण्ड भारतीय संस्कृति की साक्षी के रूप में वर्णित किया है। इस महनीय कृति का अंग्रेजी अनुवाद श्रेष्ठ साहित्यकार, चिंतक, अनुवादक श्री जयकिशन सादानी ने 'होली गंगा' के नाम से किया है। हमारे पुराणों में गंगा एक जाग्रत देवी के रूप में वर्णित है, जिसे विष्णुप्रिया, शैलजा, जाह्नवी तथा भीष्म जननी के रूप में देखा गया है। हिमालय के गोमुख से उतरती गंगा अनेक मैदानी प्रदेशों का सिंचन करती हुई महासमुद्र में विलीन होती है। यह अपने अत्यंत उपजाउ तटीय प्रदेशों को पावन जल से अभिसिंचित करती हुई अनेक सभ्यताओं की साक्षी रही है। डा. नागर ने 'गंगावतरण' को आज की जल-समस्या-निवारण के प्रतीकात्मक आख्यान के रूप में भी देखा है। उनकी दृष्टि में 'सगर' से 'भगीरथ' तक ने गंगा को हिमालय से निकालकर 'गंगासागर' तक पहुँचाने का उत्कृष्ट कार्य किया। यह कवि की दृष्टि में एक अद्वितीय अभियांत्रिकी अभियान था। मानवीय सभ्यता को जीवित रखने हेतु जल-संरक्षण के कठिनतम और अभूतपूर्व कार्य हेतु सगर की अनेक पीढ़ियों ने आत्मोत्सर्ग किया, तब कहीं जाकर गंगा के रूप में जीवन दायिनी जल स्रोत इस देश में संरक्षित हो सका और इसी का माहात्म्य-गायन सदियों से हमारे ऋषि मुनि करते आये हैं। स्वयं डा0 अम्बाशंकर नागर ने इस पुस्तक के 'प्राक्कथन' में इस तथ्य को स्वयं भी स्वीकारा है- 'राष्ट्र के सामने, आज सबसे विकट समस्या जल की है, जल ही जीवन है। भारतभूमि गंगा के कारण ही 'सुजलाम् सुफलाम' है। पुराणों में लिखा है कि गंगा द्युलोक से पृथ्वी पर केवल पाँच हजार वर्षों के लिए आयी है, इसके पश्चात् वह लुप्त होकर पुनः द्युलोक चली जायेगी। ऐसे में सामाजिकों का गंगा की ओर ध्यान आकर्षित करने और उसे प्रदूषण-मुक्त रखने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से भी यह काव्य लिखा गया है।'[31]

प्रस्तुत महाकाव्य चरित्र प्रधान है, जिसकी नायिका गंगा अपने तीन रूपों में प्रकट हुई है। गंगा जहाँ विष्णु-पद-निर्गता विष्णुपदी, शिव की जटाओं में उलझी जटाशंकरी, जह्नु मुनी के जठर में निवास करने के कारण जाह्नवी, भगीरथ के महत् प्रयत्नों से अवतरित भागीरथी एक पुण्य सलिला नदी है तो वहीं शान्तनु-पत्नी और भीष्म-जननी (जिसे शंकराचार्य 'भीष्म जननि हे मुनिवर कन्ये'! कहकर सम्बोधित करते हैं) के रूप में एक नारी भी है। यही नहीं, अनादि काल से अद्यतन सतत प्रवहण शील भारत की अखण्ड और महान संस्कृति भी है। 'प्रादुर्भाव' में गंगा का प्रेयसी नारी रूप कुछ इन शब्दों में आकार ग्रहण करता है-

गंधवाही,
कुटिल कुतल थे घने,
चारु चितवन
मदभरी आह्लादिनी,
अधर पर
मुस्कान त्रिभुवन-मोहिनी,
पीत वस्त्रों में
छम छमा छम बज उठे
नूपुर वहाँ
और किंकिनि भी
कुलाहल कर उठी,
हाथ के कंगन
झनाझन बज उठे
साथ इस संगीत के
शुभ्रा चली![32]

कवि द्वारा वर्णित गंगा का एक रूप जाग्रत देवी

का है, जो सहसा ही जगन्नाथ जी की गंगा लहरी के निम्न श्लोक का स्मरण करा देता है-

शरच्चन्द्र[illegible]ितां शशिशकलशोभालमुकुटाम्,
करैः कुम्भाम्भोजे वरमय निरासौच दधतीम्।
सुधाधाराकारा भरणवसनां शुभ्रमकर-
स्थितां त्वां वे ध्यायन्त्वुदयति न तेषां परिभवः।।[33]

इस दिव्य रूप को कवि इन शब्दों में प्रकट करते हैं-

चार भुज थे, कंकणों से सुशोभित
एक में था कलश, दूजे कमल था
तीसरा वरदान, चौथा अभय दे,
कह रहा था, धन्य सारे जगत को।[34]

'प्रस्थान' खण्ड में गंगा द्वारा राजा को दिया आशीर्वाद भी अवलोकनीय है-

बस यही है, एक मेरी कामना,
तुम सदा, फूलो-फलो होकर सुखी!
पन्थ शिव हो, मार्ग में बाधा न हो
कीर्ति अक्षय हो, तुम्हारे वंश की।
अन्न जल से, पूर्ण भारतवर्ष हो,
कीर्ति उसकी हो, प्रसारित विश्व में।[35]

यह अविच्छिन्न, अक्षुण्ण और महनीय भारत की संस्कृति के चिरकाल तक बने रहने का अमोघ आशीष है। जल जीवनदायी है, इस सत्यार्थ को दृष्टिगत रखते हुए यह सत्य भी स्वयमेव उद्घाटित होता है कि जिस देश में 'गंगा' जैसी सदानीरा नदी होगी, वह देश सदैव जीवित और चिरस्थायी बना रहेगा।

इस प्रकार हम कह सकते है कि हिन्दी के कवियों ने गंगा को समर्पित करते हुए अपने भावभरित उद्गार दिये हैं। अधिकांश स्थलों पर भारतीय जन का धार्मिक आस्थामय स्वरूप ही स्वरित होता दिखाई पड़ता है।

संदर्भ संकेत :-

1. अमरकोश, 1/10/31
2. महाभारत, अनुशासन पर्व, 26/87
3. महाभारत, अनुशासन पर्व 26/35-36
4. वृहद्धर्मपुराण 15/22, 42/4
5. ऋग्वेद 10/75/5
6. पद्मपुराण 7/8, 8-9, 7/9, 44-45
7. पद्मपुराण 7/9/157
8. बृहन्नारदीय पुराण गंगा माहात्म्य, अध्याय 6, श्लोक 27
9. पद्मपुराण, क्रिया योग सार, खण्ड 7/172
10. महाभारत, वनपर्व/85/93
11. बृहन्नारदीय पुराण गंगा माहात्म्य, अध्याय 6, 37 वें श्लोक की अर्धाली
12. विद्यापति पदावली, (संपादक रामवृक्षबेनीपुरी) गंगा स्तुति, पदावली सं. 251, पृ. 155
13. वही, गंगा स्तुति, पदावली सं. 250, पृ. 155
14. कबीर ग्रंथावली, सम्पादक श्याम सुन्दर दास, पदावली सं. 103 संस्करण 2009, पृ. 342
15. वही, पदावली 2, पृ. 312
16. कबीर ग्रंथावली साधक को अंग 8, पृ. 113
17. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड, 102/3
18. कवितावली, उत्तराकाण्ड 147
19. रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, 197/5-6
20. श्रीमद् शंकराचार्य, विरचित गंगा स्त्रोत, श्लोक सं. 10
21. तुलसी दास कवितावली, उत्तरकाण्ड 145
22. श्रीमद्शंकराचार्य विरचित गंगा स्त्रोत, श्लोक 7
23. श्रीमद्शंकराचार्य विरचित गंगा स्त्रोत, श्लोक 1-3
24. श्रीमद्शंकराचार्य विरचित गंगा स्त्रोत, श्लोक 9-11
25. 86 वा.रा. बालकाण्ड, 52 वाँ सर्ग, श्लोक 86
26. श्रीमद्भगवद्गीता, दशम् अध्याय, श्लोक 31
27. तुलसीदास, कवितावली, उत्तराकाण्ड 146
28. रसखान ग्रथावली, सम्पादक देशराज सिंह भाटी, पृ. 59
29. साकेत पंचमसर्ग, पृ. 85
30. डा. मृदुल जोशी, इन दिनों, गंगा के प्रति, पृ. 17
31. डा. अम्बाशंकर नागर, पतित पावनी गंगा, प्राक्कथन, पृ. 18
32. डा. अम्बाशंकर नागर, पतित पावनी गंगा, छन्द 9-10, पृ. 57-59
33. जगन्नाथ, गंगा लहरी, श्लोक सं. 38
34. डा. अम्बाशंकर नागर, पतित पावनी गंगा, प्रस्थान, छन्द 17, पृ. 321
35. डा. अम्बाशंकर नागर, पतित पावनी गंगा, प्रस्थान, छन्द 29-30, पृ. 329

●

हिन्दी विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
मो. 9897458445

विज्ञान जगत में महिलाएं

डॉ. विद्या केशव चिटको

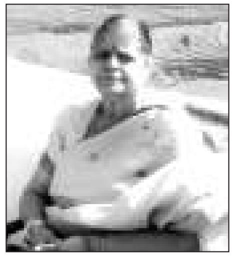

विज्ञान और मानव जाति का एक दूसरे के साथ सीधा संबंध है। चार हजार साल पहले लिखा गया इतिहास पुरुषों द्वारा की गई खोजों से भरा हुआ है। पर महिलाओं द्वारा की गई खोजों का कहीं भी उल्लेख नहीं है। जबकि ग्रीक देश में प्रसूति शास्त्र की अनेक जानकार विदुषियां रही हैं जिन्होंने शल्य क्रिया कर अनेक माताओं और शिशुओं को जीवन दान दिया था। इस क्षेत्र में पहला नाम 'इमहोटेप' का तो दूसरा नाम 'हेदुप्ला' का है जिसने चिकित्सा शास्त्र में अपने को प्रस्थापित किया। मिस्त्र के मेरिटताह के अनुसार दो हजार सात सौ ईसापूर्व 'एग्नोडाईक' पहली मिहाल फिजिशिएन थी। उसने अपनी प्रैक्टिस एथेन्स में शुरू की थी। सूर्य ग्रहण और चन्द्रग्रहण का अनुमान लगाने वाले गणितीय और फिजिशियन याने प्रसिद्ध गणितज्ञ पायथागोरस की पत्नी। उत्तम ढंग से उसने अनेक महिलाओं की प्रसूति की थी। जच्चा बच्चा दोनों के उपचार उसने किये थे। उससे जुड़ी ढेरों कहानियां आज भी लोक कथा रूप में माताएं अपने बच्चों को सुनाती हैं। एलेक्जिनड्रीया में एल्कमी के प्रोटो साईन्स में महिलाओं की संख्या अधिक होने का उल्लेख है।

16वीं सदी में विज्ञान के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिले। इस काल में महिलाएं विज्ञान में अनुसंधान के लिए आगे आईं। परन्तु उन्हें विश्वविद्यालयों में कोई विशेष स्थान नहीं था। मादाम क्यूरि का विज्ञान में दो बार नोबेल पुरस्कार दिया या। यह महिला जीवन भर अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए लड़ती रही। उसका समय था 1887-1934। मैदाम क्यूरि के पिता की आर्थिक स्थिति सामान्य थी। अट्ठारह साल की उम्र में उसने गवर्नेस की नौकरी की। पैरिस के सारबन में से फिजिक्स और गणित विषय लेकर मास्टर्स डिग्री लेने वाली यह पहली महिला उसकी प्रतिभा और अनुसंधान की रूचि से प्रभावित होकर फ्रेंच सायंटिस्ट पिअर क्योरी ने उसके साथ विवाह कर लिया था। एक स्वार्थी विचार था कि उसकी तीव्र निरीक्षण शक्ति का उसे फायदा होगा। और वह हुआ भी। दोनों की समान रुचि थी। 'बेकेरे किरण' पर खोज करते पोलिनियम और रेडियम ये दो रेडियो पीक्टव्ह मूल द्रव की उसने खोज की। न्यूक्लियर फिजिक्स का नोबल पुरस्कार उसे दिया गया। सन् 1911 में कैमेस्ट्री का नोबल पुरस्कार उसे मिला। इसके अतिरिक्त पंद्रह गोल्ड मेडेल, उन्नीस पदवी सम्मान प्राप्त करने वाली विश्व की प्रथम प्रतिभाशाली बुद्धिमान महिला है। आगे चल कर तो उसकी कन्या ने भी उसी मार्ग को अपनाया। अपनी माता के चरण चिन्हों पर वह चलती रही। वह भी नोबल पुरस्कार से सम्मानित की गई थी।

कॉर्निलिया सोरावजी भारत की पहली छात्रा जो आक्सफोर्ड में जाकर पढ़ी थी। सोमरविले में जाकर कानून की पढ़ाई करने वाली पहली यह महिला, जिसका जन्म 15 नवम्बर 1886 को हुआ था और परिस्थितियों के साथ लड़ना उसका स्वभाव बन गया था।

डॉ. आनंदी बाई जोशी आज से डेढ़ सौ साल पहले अमेरिका के पेनसालाव्हिनिया यूनिवर्सिटी से डॉक्टर की उपाधि प्राप्त कर भारत लौटी यह प्रथम भारतीय महिला। आनंदी बाई का जन्म 31 मार्च सन 1865। उसकी मां ने उसका नाम यमुना रखा था। नौ वर्ष की अवस्था में उससे बीस साल बड़े गोपालराव जोशी के साथ उसका विवाह हुआ 31 मार्च सन् 1874 में। विवाह के बाद उनका नाम आनंदी बाई रखा गया। 14 वर्ष की आयु में उन्होंने एक शिशु को जन्म दिया। यह शिशु अल्पायुषी रहा। उसकी मृत्यु का आनंदीबाई को ऐसा सदमा पहुंचा कि उन्होंने डॉक्टरी पढ़ने का प्रण कर लिया। उनके पति ने भी उन्हें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया। उस समय में भारत में डॉक्टरी पढ़ने की कोई सुविधा ही नहीं थी। अंग्रेजी तो आती नहीं थी। पर दिन रात एक कर उसने अंगरेजी भाषा सीखी। अमेरिका के पेनसिलवानिया से बाईस वर्ष की अवस्था में डॉक्टर बन कर वह भारत लौटी। पर वह डॉक्टरी व्यवसाय करना उसके भाग्य में नहीं था। उसे क्षय रोग हो गया और 26 फरवरी सन् 1887 को उनका निधन हो गया। डॉक्टरी व्यवसाय करने की साध लेकर वह इस धराधाम से चली गई। विशेष उल्लेखनीय बात यह कि अत्यंत कठिन परिस्थितियों से जूझती इस महिला के श्रम को चिरस्थायी बनाने के लिए ही अमेरिका के कार्पेटर परिवार जिनकी छत्रछाया में रह कर उसने पढ़ाई पूरी की थी उस परिवार ने अपने परिवार के लोगों को जिस स्थान पर दफनाया है उसी के पास उनकी समाधि खड़ी की है। उस पर लिखा है 'आनंदी जोशी'- एक तरूण हिन्दू ब्राह्मण कन्या। विदेश में शिक्षा प्राप्त कर डॉक्टरी की उपाधि ग्रहण करती प्रथम भारतीय स्त्री। मैं सन् 2000 से प्रतिवर्ष अमेरिका जाती हूं 2004 और 2007 में पेनसाल्विनिया गई थी। उस यूनिवर्सिटी में जिस डारमेंटरी में आनंदी बाई रही थी उस स्थान को श्रद्धापूर्वक नमन कर धन्य धन्य हो गई थी।

डॉ. रखमाबाई सावे राउत। भारत की यह प्रथम महिला। जन्म सन् 1864 और निधन 25 दिसम्बर सन् 1955 लंदन स्कूल आफ मेडिसिन से एमडी. परीक्षा पास कर भारत लौटी। भारत में आकर कुछ माह मुंबई में कार्य कर गुजरात के राजकोट में अनेक वर्ष तक वह प्रसूतिगृह चलाती रहीं और ढेरों समाज कार्य स्त्री को साक्षर करना, बालिकाओं को नर्स बनने के लिए तैयार करना, उनके लिए नर्सिंग स्कूल चलाना, विधवाओं को अर्थार्जन करने के लिए तैयार करना, बाल विवाह का विरोध ऐसे शताधिक काम उसने किये। विशेष रूप में महिलाओं के लिए कार्य किया। ईश्वर ने उन्हें दीर्घायु प्रदान की थी। इस महिला ने अपने जीवन में भारी संकटों का सामना किया। रखमा बाई का विवाह बहुत कम उम्र में कर दिया गया था। समझ आने पर उसने अपने पति के घर जाने से इन्कार कर दिया। पति ने कोर्ट का आधार लिया। पर बड़ी हिम्मतवाली निडर निर्भया थी वह कोर्ट ने उसे सजा सुनाई। पति के घर नहीं जाती तो जेल का दण्ड भुगतना पड़ेगा। उसने कोर्ट में कहा कि मुझे कैद की सजा मंजूर है। पर मैं पति के घर नहीं जाऊंगी। बड़ी मुश्किल से उसकी सजा रद्द की गई। उसके बाद वह लंडन में जा कर पढ़ीं। एम डी की परीक्षा उत्तीर्ण हुई। और भारत लौट कर 16 फरवरी सन् 1895 में कामा हास्पिटल में उन्होंने प्रैक्टिस करनी शुरू की थी। उनके किये कार्य की दखल लेते हुए वर्ल्ड मेडिकल जर्नल जनवरी सन् 1964 के अंक में पृष्ठ 36 पर उनके कार्य पर लेख लिखा गया है। उस लेख में उल्लेख किया गया है कि सन् 1897 के इन्फ्लुएंजा और सन् 1918 के प्लेग में जिन्होने रोगियों की सेवा सुश्रुषा की थी। उन्हें केसर ए हिन्द 'ए वार एट द मेडिकल दिया

गया है...' एक निर्भय स्पष्ट वक्ता साहसी हजारों संकटों का सामना करती जाति समाज के बड़े बूढ़ों के व्यंग्य बाणों, गाली, भद्दे भद्दे आरोपों को स्वीकार करती यह महिला प्राचीन काल में भास्कराचार्य की कन्या लीलावती गणितज्ञ थी। स्त्री और गणित। बड़ा अटपटा संबंध। वैधव्य की मार सहन न कर वह पिता की छत्रछाया में रह कर उसने गणित का इस प्रकार से अभ्यास किया कि वह एकमेवा द्वितीय। विश्व में प्रसिद्ध हो गई।

19वीं शती के द्वितीय दशक में केरल के तेल्लिचेरी गांव की जानकी अम्मल को विशेष रूप में बखाना जाता है जिन्हों वनस्पति शास्त्र में सायटोजेनेटिक्स एण्ड फायटोजिओग्राफी में विशेष अध्ययन किया। बैंगन और गन्ना पर शोध किया। यह महिला पद्मश्री से विभूषित की गई हैं।

असीमा चैटर्जी... रसायन शास्त्र की पीएचडी। आज के वैज्ञानिकों में दूसरे क्रमांक पर। जिसके शोधपरक चार सौ लेख प्रकाशित हुए हैं। और शांतिस्वरूप भटनागर विज्ञान का सर्व श्रेष्ठ समझे जाने वाले पुरस्कार से सम्मानित हैं।

कमल सोहोनी.. सेल्लुलर एन्जाईम सायटोकोम की खोज उन्होंने की। अन्न में पथिन अंकुर उगे चना गेहूं तूर पर विशेष अध्ययन के लिए राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत महिला को विशेष रूप में सम्मानित करने के लिए आयुर्विज्ञान भवन दिल्ली में अंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष समारोह में सम्मानित करने के लिए उन्हें निमंत्रित किया गया था। अपना वक्तव्य प्रस्तुत करते समय वहीं दिल का दौरा पड़ जाने के कारण इस महान वैज्ञानिक महिला का निधन हो गया। उनकी विशेष खोज 'नीरा' पर थी। कुपोषित बालकों को बचाया जा सकता है। उसके सेवन के परिणामों को उन्होंने बताया था। उनके शोध निबन्ध अमेरिका के हारवर्ड विद्यालय ग्रंथालय में सुरक्षित रखे हुए हैं। अमेरिका जैसे उन्नत देश में इस महिला वैज्ञानिक के रिसर्च पेपर आज अध्ययन के विषय हैं।

कमल रणदिवे... विवाह पूर्व का नाम कमल समर्थ। जैव वैद्यक शास्त्रज्ञ। कैंसर एवं विषाणु क्षेत्र में काम करती इंडियन वुमन सायंटिस्ट एसोसिएशन की संस्थापिका। पदम भूषण सम्मान से सम्मानित। भारत में पहली टिष्यु कल्चर रिसर्च लेबराटरी की मुंबई में शुरुआत करती यह महिला वैज्ञानिक।

श्यामला चितले... पालिओवॉटनिस्ट वनस्पति शास्त्रज्ञ। अमेरिका में ओहायो राज्य के क्ल्वहलैण्ड शहर के म्युजियम में एक चार फीट ऊंचाई का एक पेड़ है। जड़ से लेकर ऊपर की अंतिम टहनी तक फल और फूल से लदा हुआ यह एक अकेला 'फोसिल' जीवाश्म है। 'क्लबमॉस'। इस गट विभाग में इस प्रकार का विशेष अनुसंधान करती भारतीय महिला का नाम है डॉ. श्यामला दिनकर चितले। सेवानिृवृत्ति के उपरान्त अमेरिका में पूरे बत्तीस वर्ष समर्पित भाव से अनुसंधान कार्य में जुटी रही। अपने अध्यापन कार्य का शुभारंभ तो उन्होंने नागपुर गवर्मेंट कॉलेज से किया था पर कुछ वर्ष बाद ही वह मुंबई के इंस्टीट्यूट आफ सायन्स से चली गई यहां उनके कार्य को विशेष विस्तृत कार्यक्षेत्र मिला। अनुसंधान में जुटी रही। उनके मार्गदर्शन में अनेक छात्र. पी. एचडी. हुए। अनेक शोध प्रबंध लिखे गये। बॉटनी में विशेष अनुसंधान कार्य के लिए द ओहायो हाउस आफ रिप्रेंटिव्हजम की ओर से डिपार्टमेंट ऑफ नैचरल रिसोर्स कार्डिनल अवार्ड, भारत का बीरबल सावित्री साहनी पुरस्कार, पुणे की विज्ञान आगरकर संस्था का पुरस्कार, कामेरॉन युनिवरसीटी का वर्ष 2010 का पालिओबाटनी सेक्शन आफ वोटानिकल सोसायटी आफ अमेरिका अवार्ड, अमेरिका और भारत में अनेक संस्थाओं से ऊन्हें अनुसंधान के लिए जो पुरस्कार दिये गये हैं उनकी संख्या बारह है। विज्ञान के क्षेत्र में दीपस्तंभ बन चुकी इस वैज्ञानिक महिला का निधन 31 मार्च सन 2013 को अमेरिका के मिशिगन में हुआ। इस महिला से मैं क्लिवलैण्ड में मिली थी। कंटकार्कीर्ण पथ पर चलती इस महिला ने अपने कर्तव्य की मुहर लगाई है।

टेसी थॉमस.... यह प्रथम महिला जिसने मिसाईल तेक्नालॉजी में अपना विशेष योगदान दिया है। लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित हैं। मानव ने सन् 1968 में सर्व प्रथम चन्द्रलोक पर अपने कदम रखे। केरल के अलाप्पुझा एक छोटे से गांव में स्कूल में पढ़ती छात्रा ने स्वप्न देखा राकेट बनाने का। और यह जिद्दी बालिका जुट गई अपने लक्ष्य पूर्ति के लिए। भारत के 'अग्नि' प्रकल्प की संचालिका। कालिकट के त्रिसुर इंजिनियरिंग कॉलेज में एम टेक के लिए 'गाईडेड मिसाईल' विषय का चयन किया। सॉलिड सिस्टम पोपेलंट विषय में विशेष कार्य किया। उनकी अपार मेहनत करने की क्षमता को देखकर भारत के क्षेपणास्त्र शास्त्र में भारत ने अपने पैर जमाने शुरू ही गिये थे। उस समय टेसी थामस ने नौ सौ किलोमीटर की क्षमता रखते 'अग्नि 1' के लिए काम किया। 'अग्नि 2' क्षेपणास्त्र के परीक्षण के समय सिर्फ तीस सेकेंड में ही यह बंगाल के उपसागर में गिर गया। यह बहुत बड़ा धक्का था। पर टेसी उससे निराश और हतबल नहीं हुई। उन्होंने अपनी कार्यक्षमता को आजमाया और यह मानती रही कि अपना सारा तंत्रज्ञान पूर्णतः भारतीय है। इसे हम उत्तम प्रकार से विकसित कर सकते हैं। काम में जुट गई। उनके श्रम करने की और दृढ़ आत्मविश्वास की सराहना करते उनके सहकर्मी उन्हें 'अग्निपुत्री' कहते हैं। गल्तियों को सुधारना और अपने सामर्थ्य से उसके साथ लड़ना जूझना यही तो सफलता हासिल करने की कुंजी है। 'अग्नि 3' के समय टेसी थामस पोजेक्ट डायरेक्टर बनी। 'डी आर डी ओ' संस्था में जब टेसी ने प्रवेश किया था उस समय मुश्किल से चार पांच महिलाएं थी। पर आज इस क्षेत्र में महिलाएं अपने कर्तव्य दिखा रही हैं जिसका पूर्ण श्रेय टेसी थॉमस 'मिसाईल वुमन' को है।

रोहिणी गोडबोले.... पदार्थविज्ञान की डॉक्टरेट. हाई एनर्जी फिजक्स के क्षेत्र में अपने विशेष अनुसंधान से जिसे 'ड्रिस गोडवोले इफेक्ट' नाम से जाना जाता है। सृष्टि में मूल कणों के विशेष अध्ययन हेतु जेनेवा में भूगर्भमें दो दशक पूर्व प्रयोग किये ये थे। जिससे इल्कट्रान और पझिट्रान अति प्रचंड एक दूसरे पर आ कर टकराये। जब उनकी टक्कर होती है तब उसमें से प्रचंड ऊर्जा बाहर फेंकी जाती है। उसमें कुछ मूल कण भी बाहर फेंके जाते हैं। उस समय बाहर फेंके जाते फोटॉन भी एक दूसरे पर टकराते हैं उस समय पहले फेंके गए कण और दूसरी बार फेंके गए कण एक दूसरे में मिल जाते हैं उस स्थिति में उनका परीक्षण करना जरूरी होता है। डॉ. रोहिणी गोडबोले और वैज्ञानिक मानुएल ड्रीस ने अपने अनुसंधान द्वारा सिद्ध कर दिखाया। जेनेवा लार्ज हैड्रेन कोलायड इस विषय में आज अध्ययन कर रहे हैं। डॉ. रोहिणी गोडबोले का अध्ययन थियराटिकल फिजिक्स में है। यूरोपियन आर्गेनाईजेशन फॉर न्यूक्लियर रिसर्च में 'सर्न' द्वारा शुरू हुए कार्य में नौ महीने के विशेष अध्ययन में प्रतिवर्ष उनका सहभाग होता है।

इस समय रोहिणी जी बंगलूर के इंस्टीट्यूट आफ सायंस में सेंटर फॉर हाई इनर्जी फिजिस्क में प्रोफेसर हैं। पूणे के हुजूर बाग स्कूल से स्कूली शिक्षा पूर्ण कर एसपी कालेज से उन्होंने विज्ञान बी एस सी पूर्ण की। पुणे विद्यापीठ में बीएससी में प्रथम श्रेणी प्राप्त की। मुंबई आईटीआई से एमएससी पूर्ण की। अमेरिका के स्टोरनी ब्रुक्स युनिर्वसिटी से पीए-चडी की। मुम्बई के टी आय एफ आर. टाटा इंस्टीट्यूट आफ फंडामेंटल रिसर्च सेंटर मुंबई युनिर्वसिटी में व्याख्याता रिसर्च फेलो के स्थान पर काम करने के बाद बैंगलूर के इंस्ट्यूटूट आफ सायंस में प्रवेश किया। यहां कार्यरत होते हुए वह भारत के बाहर अमेरिका और अन्य स्थानों पर लेक्चर देने के लिए जाया करती थी। सर्न में अनेक वर्षों से हाय फिजिस्क में अनुसंधान कार्य जोरों पर है। वहां इसे समझ लेने के लिए समर कोर्स में रिसर्च स्टुडेंट्स आया करते हैं उन्हें इस विषय के संबंध में जानकारी देने का दायित्व उन पर सौंपा गया है। डॉ. रोहिणी

गोडबोले ने अब तक दो सौ से भी अधिक संस्थां में लेक्चर दिये हैं। इंडियन नेशनल अकादमी आफ सायंसेस नेशनल अकादमी आफ सायंसे स्थानों की वह फेलो हैं। पिछले 75 वर्ष के इतिहास में इन संस्थाओं को कुल मिलकर बारह महिलाओं को स्थान मिला है। रोहिणी गोडबोले उनमें से एक है। महिला वैज्ञानिकों में सर्वात्कृष्ट शास्त्रज्ञ का शील मेमोरियल अवार्ड विज्ञान अनुसंधान केंद्र का रूस्तम चोक्सी अवार्ड, भारत में सर्वेश्रेष्ठ अनुसंधान अवार्ड डॉ. मेघनाथ साहा गोल्ड और अनेक सम्मान और पुरस्कारों से वह सम्मानित हैं।

सामान्यतः देखा गया है कि फिजिक्स और विशेष रूप से प्रयोगात्मक हार्ड फिजिक्स के क्षेत्र में महिलाओं की संख्या अत्यल्प ही है। इस क्षेत्र में गोडबोले इफेक्ट से यह महिला वैज्ञानिक विश्व में प्रसिद्ध् है।

सुलभा कुलकर्णी मटेरियल सायन्स और सरफेस पर विशेष अध्ययन करती सुलभा कुलकर्णी ने नैनो तंत्रज्ञान को विकसित करने में अपनी अहम भूमिका निबाही है।

यमुना कृष्णन भटनागर पुरस्कार से सम्मानित रसायन शास्त्रज्ञ हैं न्यूक्लिक एसिड पर विशेष अध्ययन किया है।

सुलोचना गाडगिल हवामान शास्त्रज्ञ। पर्यावरण पर विशेष अनुसंधान कियाहै।

स्वीटी पाटे की बचपन से ही विज्ञान में रूचि थी पिता भी यही चाहते थे कि बेटी आगे चल कर विज्ञान क्षेत्र में काम करे। अतः जब वह स्कूली छात्रा थी तभी से पिता उसे विज्ञान शोध की पुस्तकें खरीदकर उसे पढ़ने के लिए ला देते थे। जब वह स्कूल में थी आठवीं कक्षा में तब पिताजी उसे बंगलोर के विश्वेश्वरैय्या म्युजियम दिखाने के लिए ले गए थे। अंतरिक्ष विज्ञान में उसकी रूचि बढ़ती जा रही थी। स्कूली शिक्षा के उपरान्त उसने एस.आर.एम. की प्रवेशपरीक्षा उतत्म गुणों से पास की। और एयरो स्पेस विद्या शाखा में प्रवेश लिया। यहां उसने विविध प्रतियोगिता में भाग लेकर रोबोट रिमोट कंट्रोल ग्लायडर और वाटर रॉकेट बनाये। स्वीटी पाटे ने अनेक अंतर महाविद्यालयों की प्रतियोगिता में भाग लेकर अपने कॉलेज और युनिवर्सिटी में पुरस्कार प्राप्त किये। इंडियन इंस्टीट्यूट आफ स्पेस टेक्नोलाजी में आयोजित एक वर्कशॉप में उसने 'बल्सा ग्लायाडर' पर पुरस्कार प्राप्त किया था। उस समय के एसरो अध्यक्ष डॉ. राधाकृष्णन और ज्येष्ठ वैज्ञानिक अनुसंधान विशेषज्ञ भारत के राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलामजी उपस्थित थे। उन्हीं के हाथों उसने पुरस्कार लिया था। उस समय भाषण देते हुए डॉ. अब्दुल कलाम जी ने मिशन 2020 का उल्लेख किया था। स्वीटी मन ही मन सोच रही थी कि इस मिशन में उसका भी सहभाग होना चाहिए। आगे की पढ़ाई और अनुसंधान के लिए कल्पना चावला के कर्नाल गांव में 'हरियाणा एविएशन क्लब' में गई वहां उसने विमान इंजिन और उसके स्पेयर पार्ट्स का गहन अध्ययन किया। विमान के प्रत्यक्ष कॉकपिट में वैठ कर विमान के लिए आवश्यक ईंधन गंतव्य की दूरी इंजिन की रफ्तार नियंत्रण सभी के बारे में विस्तार से अध्ययन किया। उसका आत्मविश्वास भी काफी बढ़ रहा था। इस समय यूनिवर्सिटी में एयर क्राफ्ट इंजीनियरंग पर एक प्रोजेक्ट नासा के ग्रीन एविएशन 2011 प्रस्तुत करना था। उसके लिए सिलेक्शन बोर्ड था। स्वीटी ने उसमें भाग लिया था लिखित परीक्षा में वह उत्तीर्ण हो गई थी पर मौखिकी में उसे उम्र कम होने का कारण बता कर उसका चुनाव नहीं हुआ। उसके स्थान पर दूसरे एक को अवसर दिया गया पर वह उसमें सफल नहीं रहा। अतः स्वीटी को यह सुवर्ण अवसर मिला। नासा में जाकर उसने इस अवसर का लाभ उठाया। कम प्रदूषण और अल्प ईंधन का उपयोग कर उड़ने का डाल्फिन आकार के विमान का मॉडेल उसने तैयार किया जिसके लिए कम धाव पट्टी रन वे की जरूरत होती है। पूरे विश्व से एक सौ यूनिवर्सिटी से प्रतिभागी शामिल हुए थे। स्वीटी को उसमें तृतीय

पुरस्कार प्राप्त हुआ था। उसने जो प्रोजेक्ट तैयार कर उसका प्रेजेंटेशन किया था उस मॉडेल की विशेषताओं को ध्यान में रखकर अगले वर्ष होने वाले अंतरराष्ट्रीय कानफ्ररेंस में आने का उसे निमंत्रण दिया गया। स्वीटी तो खुश थी पर वह उसे भारत का गौरव समझती है। वह कस कर काम करने लगी थी। श्रम के लिए कोई पर्याय नहीं था। उसकी पूरी तैयारी उसने की थी। 11 नवम्बर सन् 2011 में चेन्नई से वह अमेरिका गई। नासा ने उसकी व्यवस्था फाईव स्टार होटल में की थी। उस स्थान से कानफरेंस हॉल तक ले जाने के लिए पूरी सुरक्षा का प्रबंध किया था। बीस वर्ष की यह भारत की विज्ञान में अनुसंधान करती स्त्री। सभी की दृष्टि उस पर केंद्रित थी। हॉल खचाखच भरा हुआ था। उसने अपना प्रेजंटेशन प्रस्तुत किया। उसमें अनेक श्रेष्ठियों ने सवाल किये। सभी प्रश्नों के संतोषजनक समाधान कारक उत्तर उसने दिये। नासा के सिनियर वैज्ञानिक फे. कोलिआर के हाथों स्विटी का सम्मान किया गया। प्रशस्ति पत्र मोमेंटे स्मृतिचिन्ह देकर उसे सम्मानित किया गया। नासा की सभी प्रयोगशालाएं उसे दिखाईं गई। विश्व की यह नासा संस्था जहां प्रवेश भी बहुत कठिन उस नासा में वह सम्मानित हुई। भारत की सर्वत्र स्तुति की गई। स्वीटी अपने अनुभव बताते हुए कहती है कि एक भारतीय महिला को जो सम्मान प्रदान किया गया उसका सर्व श्रेय हमारी भारतीय संस्कृति और कठिन श्रम परिश्रम और एक निष्ठ हो काम करने की पद्धति को है।

मल्लिका श्रीनिवासन... एक अफलातून वैज्ञानिक पुरुष प्रधान समझा जाता व्वसाय याने ट्रैक्टर का निर्माण उस क्षेत्र में स्त्री भी अपने कृतित्व की छाप छोड़ सकती है इस पर कोई विश्वास ही नहीं कर सकता। पर असंभव को संभव करती मल्लिका श्रीनिवासन जिसने ट्रैक्टर उत्पादन करती कंपनी में प्रवेश किया और पच्चीस वर्ष में छियासी करोड़ की आय पर से पांच करोड़ आठ सौ करोड़ पर पहुंचाने का कीर्तिमान स्थापित किया मल्लिका ने। ट्रैक्टर्स एण्ड फार्म इक्विपमेंट लि. कंपनी विश्व में ट्रैक्टर उत्पादन करती इस कंपनी का स्थान तीसरा है। टाफे कंपनी की वह अध्यक्षा है। पिता से उन्हें योग्य मार्गदर्शन मिला। सन् 1986 में वह सर व्यवस्थापक पद पर नियुक्त हुई और पिता के निधनोपरान्त सन् 2011 में उन्होंने व्यवस्थापन अपने हाथ में लिया। मद्रास यूनिवर्सिटी से उन्होने उच्च शिक्षा प्राप्त कर अमेरिका के पैनसाल्विनिया युनिवहरस्टी से व्यवस्थापन शास्त्र की पदवी ग्रहण की। मल्लिका ने सन् 1985 से ट्रैक्टर उत्पादन में प्रतिवर्ष चार हजार से एक लाख बीस हजार का उत्पादन में वृद्धि की। विश्व के चालिस देशों में वह ट्रैक्टर का निर्यात कर रही है। नवीन कल्पना नित्य नये खोज और उसमें विकास की ओर लक्ष्य केंद्रित कर पच्चीस से नब्बे हार्स पाव के ट्रैक्टर निर्माण कर बाजार में लाने का श्रेय मल्लिका का है। ट्रैक्टर में पावर स्टेयरिंग सह फ्युआल एफिशिएंसी अत्याधुनिक सुविधाओं इंजिनियरिंग प्लास्टिक्स पैनल इंसट्रुमेंट्स ऑटोमोटिवह बैटरी गियर हायड्रोलिक पम्पस आदि का उन्होंने विस्तार किया है। सन् 1999 में बी. वी सी बिजनेस वुमन और सन् 2005 में झी अत्सित्व अवार्ड इंडिया टुडे का बिजनेस अवार्ड 2007 का लक्ष्मीपत सिंहानिया पुरस्कार गौरव से उन्हें सम्मानित किया गया है।

एन. वलारमथी.... प्रोजेक्ट डायरेक्टर रडार इमेजिंग सेटेलाईट 1 स्पेस सायंस में अपने उल्लेखनीय कार्य के लिए वलारमथी को तमिल नाडू सरकार ने अब्दुल कलाम अवार्ड से नवाजा है। यह अवार्ड पाने वाली वह प्रथम महिला साईंस्टिट है। सिर्फ इतना ही नहीं तो वह रिमोट सोर्सिंग युक्त मिशन की प्रजेक्ट डायरेक्टर बननेवाली प्रथम महिला भी है। मार्स मिशन को लेकर 104 सैटेलाईट की लांचिंग तक सभी प्रोजेक्ट को लेकर इसरो दुनिया भर में चर्चा का विषय बना हुआ है। उतनी ही चर्चा का विषय है एन. वलारमथी महिला वैज्ञानिक। जिन्होंने इन प्रोजेक्ट में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बीस

घंटे काम कर सफल बनाया है। ईसरो में आज चार हजार महिला वैज्ञानिक हैं। बेहद नपे तुले टाईम मैनेजमेंट में उनका काम चलता है। एकदम उपग्रह की तरह। चूंकि की गुंजाईश ही नहीं है। इन महिला वैज्ञानिकों की तारीफ इसलिए भी करनी है कि ये महिला वैज्ञानिक पुरुषों की तुलना में अधिक घंटे काम करती हैं। ऐतिहासिक मिशन भी संभालती हैं। और घर परिवार भी देखती हैं। 15 फरवरी सन् 2018 को इसरो ने 104 सेटेलाईट लांच किया। इस बीच ऐसा समय आया कि जब वैज्ञानिक जी मंगलमय और जयश्री जना भट्टाचार्य की टीम ने इस चैलेंज को असंभव समय में पूरा कर दिखाया।

जयश्री ने लिया चैलेंज 104 सेटेलाईटस लॉंच करने में सभी जुटे हुए थे। अभियान में अमेरिका के दो बड़े सेटेलाईट थे। अमेरिका सेटेलाईट के आधार पर इक्विपमेंट वे बनाया गया। लेकिन दिसम्बर में अमेरिका के यह डील रद्द कर दी। अब समस्या यह थी कि इक्वीपमेंट में जो जगह बनाई गई थी वहां क्या फिट करें। लांचिंग में सिर्फ साठ दिन शेष रह गये थे। नई सेटेलाईट बनाने के लिए बेहद कम समय था। मिशन टालना भी मुश्किल था। इसलिए इस टीम ने सेटेलाईट ही बनाने का निश्चय किया और समय के पहले टास्क पूरा कर दिखाया। जी. मंगलम् ने काम पूरा किया। हालांकि मिशन पूरा होने तक मन में डर बना रहा कि कहीं चूक तो नहीं हो गई है। सेटेलाईट बन गई पर क्वालिटी चेकिंग का काम बच गया था। यह काम जी मंगलम के पास था। वह बताती हैं कि इतने कम समय में हर सेटेलाईट के उपकरण सॉफ्ट वेयर सेटिंग की जांच करना बहुत कठिन था। आखिर के सात दिनों में बीस बीस घंटे काम कर इसे पूर्ण किया। इस मिशन में काम करते कई वैज्ञानिक महिलाएं तीन दिन अपने घर भी नहीं गई। मंगल मिशन लांचिंग की यह घटना है।

डॉ. शोभा टोले... 2010 में भटनागर पुरस्कार से नवाजी गई महिला वैज्ञानिक जिन्होंने मस्तिष्क में कॉटेक्स के भाग अंश और एमिग्डाला का भाग दोनों ही बड़ी जटिल एक दूसरे में उलझी परस्परावलंबित। उसका विशेष अध्ययन एलएच एक्स 2 विशेष अध्ययन इन्होंने किया है। मस्तिष्क में हिप्पोकम्पस यह स्मरण शक्ति आकलन क्षमता बुद्धि पर नियंत्रण रखती है। शोभा टोले ने इस पर कालटेक युनिवरसिटी में पीएच.डी. विशेष अध्ययन किया है। दो बच्चों की माता है। घर परिवार अपने बच्चों का उचित संगोपन करती अपने अनुसंधान में लगी कैरियरिस्ट महिला आज लोगों के लिए आदर्श है।

शकुंतला देवी... गणितज्ञ...

कम्प्युटर को भी पीछे छोड़ती और ऐसी विलक्षण मेधाशक्ति से चकित करती यह वैज्ञानिक गणितज्ञ। जिन्होंने सन् 1976 में अमेरिका के शास्त्रज्ञों को भी पीछे छोड़ दिया था। सन् 1980 में बी. बी. सी. लंदन ने सम्मानपूर्वक उन्हें निमंत्रित किया था उस समय शकुंतला देवी ने 26 अंकीय गुणाकार सिर्फ छब्बीस सेकेंड में हल कर दिखाया था। उसी समय हाल में बैठे दिग्गज गणितज्ञों को उन्होंने कंप्युटर जो सवाल हल कर सकने में असमर्थता जताता है उसे भी हल कर दिखाया था। शकुंतला देवी का जन्म सन 1939. संख्या शास्त्र और फल ज्योतिष शास्त्र उनके अध्ययन का क्षेत्र था। पर ईश्वर की अकृपा आयु के 59 वें वर्ष में ही उनका निधन हो गया। गणित को उनका योगदान प्राप्त नहीं हो पाया पर विश्व में गणितज्ञ के रूप में उनकी पहचान अमर है।

टी. के. अनुराधा... भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान केंद्र इसरो की प्रथम महिला। जी सेट 12 उपग्रह के प्रोजेक्ट को पूर्णत्व प्रदान करती श्रेष्ठ महिला वैज्ञानिक। बचपन से ही विज्ञान और संस्कृत भाषा की ओर विशेष झुकाव था। पिता ने अपनी चारों बच्चों को उनकी रूचि अनुसार पढ़ने का स्वातंत्र्य दिया था। अंतरिक्ष विज्ञान ही उनका आकर्षण था। इसरो में प्रवेश मिलते ही अनुराधा ने उपग्रह तैयार करने की टीम में काम करना प्रारंभ किया। अभियंता

को जी सेट 12 की निर्मिती का काम करना था। जिसके लिए रात दिन जुट कर वह काम करती रही। जी सेट का प्रकल्प सफल रहा। तीस वर्ष से वह इसरो में विविध उपग्रहों का विस्तार कार्य कर रही हैं।

डॉ. व्ही आर ललिताम्बिका... पिछले तीस वर्षो से ललिताम्बिका इसरो में कार्यरत हैं। परिश्रमी और अध्ययनशील महिला। मानव को अंतरिक्ष में भेजने के प्रकल्प योजना में सभी कौशल्य उनमें है। इसरो के प्रमुख डॉ. के सिवन हैं। जिनके दीर्घ अनुभवों से वह बहुत लाभान्वित हुई हैं। कन्ट्रोल इंजीनियरिंग में विशेष गुणवत्ता उन्होंने हासिल की है। सन् 1988 में तिरुवंतपुरम के विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र में उन्होंने सर्वप्रथम काम करना शुरू किया था। अनुभवों को संचित कर आज वह उपसंचालक पद पर कार्य कर रही हैं।

2017 फरवरी में विविध देशों के एक सौ चार उपग्रह एक ही समय में अंतरिक्ष में भेजे गये थे। इसरो का यह प्रकल्प महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। उस प्रकल्प में ललिताम्बिका का कार्य विशेष उल्लेखनीय रहा है। अनेक बार उसका परीक्षण किया गया। देखा गया कि इससे सबसे 'वर्स्ट इफेक्ट' क्या संभव है। इसके बारे में अध्ययन किया गया। ये सभी उपग्रह अपने ही कक्ष 'आरबिट' में रहेंगे। एक दूसरे से टकरायेंगे नहीं इसकी पूरी सावधानी बरती गई। अनेक प्रयोग कर देखे गये। इसरो की सफलता का गौरव विश्व के वैज्ञानिकों ने किया। डॉ. व्ही आर ललिताम्बिका का इसमें महत्वपूर्ण सहभाग रहा। उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ पी. एल एस व्ही, जी एस एल व्ही और आरएलएस व्ही क्षेपणास्त्रों के ईंधन फ्युएल पुरी देखरेख का काम ललिताम्बिका का था। इस क्षेपणास्त्र की रचना का पूरा दायित्व ही उनका था। इसरो का यह काम सहज नहीं था वह कहती हैं कि सहयोगियों के कारण ही वह यह काम कर पाई हैं। उनमें किसी भी प्रकार का अहंभाव नहीं है। ग्रुप का सहयोग ही महत्वपूर्ण है। यह टीम वर्क है। इसरो की सांघिक भावना यही आदर्श है।

हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीजी ने स्वतंत्रता दिवस पर घोषणा की थी कि 'गगनयान' में बैठकर हमारे अंतरिक्ष वीर और अंतरिक्ष वीरांगनाएं 2022 में गगन यात्रा करेंगी इसके लिए कार्यरत हैं ललिताम्बिका। अपने प्रयत्न में वहीं जुट गई हैं। इस महान प्रोजेक्ट में किसे भेजा जाएगा उसका चयन ललिताम्बिका करेंगी। प्रशिक्षण किस कैंपसुल को किस प्रकार से उसकी सुरक्षा की व्यवस्था की जाएगी इसकी पूर्ण व्ययस्था उनकी देखरेख में की जा रही है। 2022 का यह इसरो का प्रकल्प महत्वपूर्ण होगा।

विंग कमांडर राकेश शर्मा निवृत्त अंतरिक्ष को प्रथम भेंट देने वाले भारतीय थे। इस घटना को आज पूरे पैंतीस साल हो गए हैं। उसके बाद कल्पना चावला और सुनिता विलियम्स अंतरिक्ष में पहुंची थी। राकेश शर्मा रशिया की यात्रा में सहभागी हुए थे। अंतरिक्ष यात्रा में अमेरिका रशिया और चीन के बाद चौथे क्रमांक पर भारत है।

भारत के अंतरिक्ष वीरांगनाओं में अग्निपुत्री टेसी थामस प्रथम हैं।

डी. आर. डी. ओ. की डॉ. शशीकला सिन्हा ए. व्ही. आनिक्सतज्ञ डॉ. जे. मंजुला भी हैं। अपूर्वा जाखड़ी... अंतरिक्ष विश्व में अपने नाम को अपूर्वा को सिद्ध करती नासा में अपने विशेष कार्य की मुहर लगाती विवाहपूर्व की नयना कुलकर्णी। और लीना कुलकर्मई दोनों जुड़वां बहने बेलगाम के गोगटे इन्सटय़ूट की नयना कुलकर्णी और लीना कुलकर्णी दोनों जुड़वां बहनें। बबेलगाम के गोगटे इंस्टीटय़ूट आफ टेक्नालाजी से बी. ई. की पदवी इलेक्ट्रानिक्स एंड टेलिकॉम की पदवी प्राप्त की। दोनों बहनों ने बैंगलोर के इसरो में सेंसर्स ट्रान्सदयुसर्स एंड अपच्युएटर्स फॉर स्पेस एपिलकेशन इस विषय पर प्रोजेक्ट प्रस्तुत किया। दोनों बहनों ने योग्य पद्धति से उसे प्रेजेन्ट किया। डॉ. गोवारीकर, डॉ. जयंत विष्णु नारलीकर का उन्हें योग्य मार्ग दर्शन प्राप्त हुआ।

इंस्टीट्यूट ऑफ इंजिनियरिंग (आय ओ आय) कोलकाता, इंस्ट्युटय़ूट आफ टेलिकम्युनिकेशन इंजीनियरिंग (आय ईटी) नई दिल्ली, कम्प्युटर साईन्स आफ इंडिया (सीएसआय) मुम्बई के साथ-साथ युनाईटेड नेशन्स वर्ल्डस स्पेस वीक एसोसिएशन के एशिया पेसेफिक स्पेश रिजन के लिए एवं को आरडिनेटर के रूप में चुनी गई नाशिक महाराष्ट्र की यह प्रथम महिला। बाल्यकाल कोल्हापुर में व्यतीत हुआ। आठवी-नौवीं कक्षा में थी तभी उसने रशियन अमेरिकन शास्त्रज्ञ कॉल रेगन द्वारा दिग्दर्शित, कॉसमॉस मालिका देखी थी तभी से उनका आकर्षण स्पेस के प्रति बढ़ा था। संबंधित पुस्तकें साहित्य फिल्म डाक्.युमैटरी वहां देखा करती थी। बीई उत्तीर्ण होने के बाद निरंतर वह स्पेस टेक्नालॉजी के क्षेत्र में बढ़ती गई। इसरो में 'भुवन' नामक एप विकसित करने में उनका विशेष योगदान रहा है। इस एप का विशेष योगदान किसानों को खेती के लिए होता है, हवामान खेती के लिए वर्षा का अंदाज अनुमान इस संबंध में निरंतर वह अनुसंधान करती रहीं।

मुम्बई में तीन वर्ष वह नेहरू साईंस सेंटर में सुनिता विलियम्स के सानिध्य में रही। यू एस के अलावामा शहर के नासा के मर्शल स्पेस फ्लाईट सेंटर यू एस रॉकेट में 2010 में उन्होंने भेंट दी। वहां उन्होंने स्पेस अध्ययन पूर्ण किया। स्पेस एज्युकेटर के रूप में वह आज कार्यरत है। अध्यापन में विशेष रूचि होने के कारण वह छात्रों को अंतरिक्ष के बारे में लेक्चर्स देती हैं। अब तक उन्होंने दो सौ से अधिक लेक्चर्स विविध संस्थाओं में जाकर दिए हैं।

स्मिता लेले... चालीस वर्ष का दीर्घानुभव लेकर डॉ. स्मिता लेले कंप्युटर साइंस क्षेत्र में महिलाओं को मार्गदर्शन कर रही हैं। सन् 1977 के दशक में उन्होंने अपने कैरियर की शुरुआत की थी। हिन्दुस्तान लीवर में पहली महिला अभियंता नियुक्त हुई थी।

उसके बाद उन्होंने मुंबई के रसायन तंत्रज्ञान आय सीटी में रिसर्च वर्क की शुरुआत की। 2018 में उनकी नियुक्ति मराठवाड़ा उपकेंद्र संचालक के रूप में हुई और उनके कार्य का क्षेत्र निरंतर बढ़ता ही गया। आज स्मिता लेले ने सौ से भी अधिक शोध निबंध प्रस्तुत किये हैं और दो पेटेंट उसके नाम पर दर्ज है। स्मिता लेले बताती हैं कि आज से तीस साल पहले अभियांत्रिकी क्षेत्र में महिलाओं की संख्या तीन चार से ऊपर नहीं थी वहां आज यूडीसी.टी. यू आय सीटी और आय सीटी मुम्बई की संस्था में तीस प्रतिशत महिलाएं हैं। पूरे विश्व में सौ डेढ़ सौ अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त महिलाओं में प्रो. बैचवाल और पुष्पा कुलकर्णी भी हैं जो आज सेवानिवृत्त हो गई है। स्मिता लेले का कहना है कि आने वाले वर्षों में यह आंकड़ा और बढ़ता ही जाए-गा। सामाजिक और वैज्ञानिक क्रांति बीस तीस वर्ष में आकाश छूती होगी। आज स्त्री पुरुष समानता की चर्चा जोरों पर है। सन् 1999 में जब स्मिता लेले एक परिषद में सम्मिलित होने के लिए जापान टोकियो गई थी वहां उन्होंने देखा था कि समानता स्त्री पुरुष समानता लिंग भेद पर नहीं तो कार्य पर है। देश तो वैज्ञानिक दृष्टि से तभी प्रगत हो सकता है जब दोनों मिल कर एक जुट होकर समर्पित भाव से कार्य करें। आज हमारी वैज्ञानिक महिलाएं सक्षम हो आत्मविश्वास पूर्वक आगे बढ़ रही हैं, यही विशेष है।

●

सेवानिवृत्त निदेशक
हिन्दी रिसर्च सेंटर पुणे विद्यापीठ
मो. 9527313387

जब तक आपके माँ-बाप जिंदा हैं आपको मुकद्दस मुकामात की जियारतों के लिए जाने की जरूरत नहीं। —कन्फ्यूशियस

इतिहास लेखन की भारतीय अवधारणा

डॉ. सतीश कुमार त्रिगुणायत

अपने अतीत के बारे में जानने की इच्छा सभी में होती है। व्यक्ति यह जानने के लिये उत्सुक रहता है कि उसके पूर्वज कौन थे, कहाँ से आये और वे कैसे रहते थे? इसे एक व्यक्तिगत परिवार के इतिहास को जानने की जिज्ञासा कह सकते हैं। जब यह जिज्ञासा या अध्ययन व्यक्तिगत परिवार के स्थान पर सम्पूर्ण समाज या समग्र राष्ट्र के बारे में होता है तो अत्यन्त भिन्न रु प ले लेता है। अतीत के बारे में जानने का यह प्रयास ही इतिहास कहलाता है। इतिहास, इति-ह-आस से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है ऐसा निश्चित रु प से हुआ। अतीत को पूर्ण विश्वास के साथ प्रमाणित करने की प्रक्रिया को इतिहास की श्रेणी मे रखा जाता है। इतिहास से तात्पर्य खोज एवं अनुसंधान से भी है अर्थात प्रत्येक युग में इतिहासकार सामाजिक आवश्यकता के अनुसार इतिहास का प्रस्तुतिकरण करता है। क्रोचे ने इतिहास को समसामयिक मानते हुए लिखा है कि इतिहासकार अपने युग के दृष्टिकोण तथा अपने व्यग्तिगत दृष्टिकोण से अतीत की घटनाओं को देखता है प्रत्येक युग में इतिहास अवधारणा का स्वरू प उद्देश्यपरक रहा है तथा निरन्तर परिवर्तित समाज की आवश्यकता के अनुरूप इतिहास की अवधारणा में परिवर्तन होता रहा है।

इतिहास की भारतीय अवधारणा :– कुछ विद्वानों का यह विचार है कि प्राचीन भारतीय मनीषी इतिहास लेखन के प्रति उदासीन थे, उनमें ऐतिहासिक दृष्टिकोण का अभाव था। घटनाओं के प्रस्तुतिकरण में उन्हें तिथिक्रम का ज्ञान नहीं था। तथ्यों को कल्पित एव पौराणिक कथाओ के परिवेश में रखने की प्रवृति ने इस मान्यता को आधार प्रदान किया। अल-बिरुनी[1] ने लिखा है कि हिन्दू घटनाओं के ऐतिहासिक क्रम के प्रति उदासीन हैं, तिथि के अनुक्रम के सम्बन्ध में वे अत्यन्त लापरवाह हैं जब जब उनसे कोई ऐसी बात पूछी जाती है जिसका वे उत्तर नही दे पाते तो वे प्रायः किस्से कहानियाँ सुनाने लगते हैं पाश्चात्य विद्वान लोएस डिकिन्सन[2] के अनुसार अपने आपको प्रकृति के समक्ष तुच्छ एवं असमर्थ पाने के कारण भारतीयों में नगण्यता तथा जीवन की निस्सारता की भावना जन्म लेती है। उन्हें जीवन की अनुभूति एक भयानक दुःस्वप्न के रूप में होती है और दुःस्वप्न का इतिहास नहीं हो सकता। डॉ हीरानन्दशास्त्री[3] ने भी इसी प्रकार का तर्क प्रस्तुत करते हुये कहा कि प्राचीन भारतीयों ने इतिहास के प्रति विशेष ध्यान नहीं दिया क्योंकि वे वर्तमान जीवन की अपेक्षा आगामी जीवन में विशेष रुचि रखते थे। डॉ शास्त्री के मत का खण्डन करते हुये डॉ. जी. एस. पी. मिश्र[4] ने लिखा है कि भारतीयों ने वर्तमान जीवन को कभी भी नगण्य नहीं माना। यदि इतिहास कर्मप्रधान रहा है तो भारतवर्ष सदैव महापुरूषों की कर्मभूमि रही

है। हिन्दू धर्म की सदैव यह निष्ठा रही है कि इ चैव वेदिथ अर्थात सत्य को यहीं जानना है और इसी जीवन में धर्म का आचरण करना है।

इतिहास निर्माण के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति इतिहास का सृष्टा नहीं होता है। प्रत्येक युग तथा समाज में इतिहास का निर्माण कतिपय लोगों द्वारा ही किया जाता है, जिन्हें महान व्यक्तिया जननायक के नाम से जाना जाता है। समाज का नेतृत्व करने वाले तथा सम्पूर्ण मानव जाति का पथप्रदर्शन करने वाले को जननायक की संज्ञा दी जा सकती है। भारतीय इतिहास की अवधारणा में यदि अवतारवाद के सिद्धान्त से धार्मिक परिछाया को हटा दिया जाय तो विभिन्न अवतारों को जननायकों के रूप में माना जा सकता है। अवतारवाद की अवधारणा के अनुसार मानव इतिहास में जब कभी नैतिक अथवा सामाजिक अवस्था के परिणामस्वरूप मानव जाति के कष्टों में वृद्धि हुई तब सज्जनों की रक्षा तथा दुष्टजनों के विनाश के लिये जननायक के रूप में ईश्वर का अवतार हुआ। यदि इतिहास का स्वरूप उद्देश्यपरक है तो निश्चय ही अवतारवाद के पीछे एक सामाजिक परियोजना रही है।

रामायण, महाभारत, पुराणों, शिलालेखों, ताम्रपत्रों आदि में प्राप्त वंश वृक्षों तथा अनेकानेक ऐतिहासिक घटनाओं के उल्लेखों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीयों में अपने इतिहास के प्रति उदासीनता नहीं थी। अशोक के शिलालेख[5] तो उसकी आत्मकथा ही हैं। रूद्रदामन के जूनागढ़लेख[6] में सुदर्शन झील का इतिहास वर्णित है। हाथीगुम्फा लेख में खारवेल[7] की उपलब्धियों के सन्दर्भ में उसके शासन की वर्षवार घटनाओं का वर्णन है। गुप्तशासकों के लेखों में तत्कालीन भारत की महत्वपूर्ण घटनायें अंकित हैं।[8] ह्नेनसांग ने लिखा है कि भारत के प्रत्येक प्रान्त में ऐसे राजकीय पदाधिकारी थे जो घटनाओं का विवरण लिखा करते थे।[9] गुप्त अभिलेखों में अक्षपटलाधिकृत[10] नामक पदाधिकारी का उल्लेख प्राप्त होता है। जो राजकीय प्रलेखों का प्रधान संग्रहक था। कल्हण ने लिखा है कि वही गुणवान कवि प्रशंसा का पात्र है जो राग द्वेष से उठकर एक मात्र सत्यनिरूपण में ही अपनी भाषा का प्रयोग करता है।[11] भारतीयों की इतिहास बुद्धि का इससे सबल प्रमाण और क्या हो सकता है? फिर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इतिहास के महत्व को समझते हुये और इतिहास बुद्धि रखते हुये भारतीयों ने किसी ऐसे इतिहास ग्रंथ की रचना नहीं की जिसे आधुनिक दृष्टिकोण से इतिहास ग्रंथ माना जा सके। इसका कारण संभवतः यह था कि प्राचीन भारतीयों के इतिहास की संकल्पना आधुनिक इतिहासकारों की संकल्पना से पूर्णतया भिन्न थी। आधुनिक इतिहास ऐतिहाासिक घटनाओं में कार्यकारण सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करता है, किन्तु प्राचीन भारतीय इतिहास केवल उन घटनाओं का वर्णन करता है जिनसे जनसाधारण को कुछ शिक्षा मिल सके। महाभारत में इतिहास की जो परिभाषा दी गई है उससे भारतीयों की इतिहास विषयक संकल्पना पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। महाभारत में कहा गया है कि ऐसी प्राचीन रुचिकर कथा जिससे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की शिक्षा मिल सके, वह इतिहास है। ये चारों पुरुषार्थ जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक थे तथा इन पुरुषार्थों को प्राप्त करने की प्रेरणा में इतिहास भी एक साधन था। अतः प्राचीन भारतीय इतिहासकार उन घटनाओं को कोई महत्व नहीं देते थे जिनसे इन पुरुषार्थों की शिक्षा न मिल सके। भारतीयों का दृष्टिकोण अध्यात्म प्रधान होने के कारण वे अपनी आत्मकथाओं एवं प्रशस्तियों की अपेक्षा अपने सत्कर्मों को ही अपना आत्म परिचय समझते थे। प्राचीन भारत में इतिहास को ज्ञान की एक शाखा अथवा अध्ययन के एक विषय के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। उसे वेद के समान पवित्र माना जाता था। कौटिल्य ने इसके व्यवहारिक लाभ को स्वीकार करते हुये राजा को यह सलाह दी कि उसे प्रतिदिन अपना कुछ समय इतिहास का वर्णन सुनने में लगाना चाहिए। ए. के. वार्डर[12] ने लिखा है कि वैदिक काल से आधुनिक काल तक भारतीय इतिहास में तारतम्यता है। अभी भी प्राचीन भारत का इतिहास पाण्डुलिपियों में बिखरा पड़ा है। डॉ. आर.

सी. मजुमदार ने स्वीकार किया है कि प्राचीन भारतीय प्राचीन काल में इतिहास लेखन कला से सर्वथा अपरिचित नहीं थे। उदाहरणार्थ कल्हण ने राजतंरगिनी में कश्मीर का इतिहास लिखने से पूर्व कश्मीर पर रचित न केवल ग्यारह इतिहास की पुस्तकों का अध्ययन किया बल्कि उनमें वर्णित ऐतिहासिक तथ्यों की अशुद्धियों को भी दूर किया। उसने राजाओं के अध्यादेशों तथा प्रशस्तियों का अध्ययन किया तथा तदनरूप ऐतिहासिक तथ्यों में सुधार किया। उसने यह भी बताया कि इतिहासकार को पूर्वाग्रहों से बचना चाहिये और निष्पक्ष ढंग से ऐतिहासिक तथ्यों का निरुपण करना चाहिये। इस प्रकार उसने इतिहास लेखन के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन की विशेषतायें:-

1. अध्यात्म एवं धर्म प्रधान दृष्टिकोण :- प्राचीन भारतीय इतिहास लेखकों ने अपने इतिहास लेखन में मुख्यतः आत्मा की शुद्धता, धर्म, कर्म, चरित्र एवं नैतिक मूल्यों के सन्दर्भ में लेखन पर विशेष बल दिया। प्राचीन ग्रंथों में सामाजिक जीवन का जो वर्णन प्राप्त होता है उसमें उनका दृष्टिकोण पूर्णतया नैतिकतापूर्ण दर्शित होता है। उन्होंने अच्छाई एवं बुराई के मध्य अन्तर स्पष्ट करने का प्रयत्न किया। वे चाहते थे कि लोग सन्तुष्ट जीवन व्यतीत करे। यद्यपि उन्होंने लौकिक जीवन के स्थान पर पारलौकिक जीवन पर अधिक बल दिया किन्तु लौकिक जीवन को भी उपेक्षित नहीं माना। उन्होंने आत्मा-परमात्मा और धर्म की अवधारणा के सम्बन्ध में भी अपने विचार प्रस्तुत किये।

2. आदर्शवाद पर बल :- प्राचीन भारतीय मनीषियों ने आदर्शवाद के सिद्धान्त को मान्यता प्रदान की और उन आदर्शो का उल्लेख किया जो एक आदर्श शासक या आदर्श राज्य अथवा आदर्श नागरिक से अपेक्षित है साथ ही गुरु माता-पिता एवं मित्र के गुणों पर भी प्रकाश डाला तथा मानव मात्र की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया।

3. राजकीय संरक्षण में इतिहास लेखन:- अधिकांश प्राचीन भारतीय इतिहास लेखकों को राजकीय संरक्षण प्राप्त था। उन्हीं के उदार संरक्षण में अपनी कृतियों की रचना की परिणामस्वरूप उनके वर्णन अतिश्योक्तिपूर्ण भी हुआ करते थे।

प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन के महत्वपूर्ण साक्ष्य ग्रंथ :- प्राचीन भारतीय मनीषियों ने इतिहास लेखन के क्षेत्र में साहित्यिक एवं धार्मिक ग्रंथों से तत्कालीन भारत की धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है।

वैदिक साहित्य :- भारत के प्राचीन इतिहास लेखन में वेदों का महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि इनके लेखन का उद्देश्य धार्मिक था किन्तु इनमें तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक दशा का सविस्तार वर्णन प्राप्त होता है। ऋग्वेद में उल्लिखित सर्वाधिक महत्वपूर्ण इन्द्र गाथाएं हैं जो युद्ध के देवता इन्द्र के पराक्रमी कार्यों पर लिखी गई कवितायें हैं। दसराग्य युद्ध का वर्णन भी प्राप्त होता है। इस बात के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध है कि भारतीयों ने प्रारंभ से ही इतिहास को महत्वपूर्ण माना। शतपथ ब्राह्मण एवं छान्दोग्य उपनिषद में ज्ञान की इस शाखा को इतिहास वेद के नाम से अभिहित किया गया है। इतिहास शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख भी अथर्ववेद में हुआ है वहां कहा गया है कि सृष्टि के आरंभ में जो परमपुरुष उत्पन्न हुआ उसका अनुगमन इतिहास, पुराण, गाथाओं और नाराशंसियों ने किया। इस तथ्य को समझने वाले व्यक्तित्व में यह चारों निहित होते हैं। इतिहास का अर्थ इतिवृत्त है अर्थात जो पहले होता आया है, पुराण उसकी पुनर्व्याख्या है, गाथा उससे निकला हुआ निष्कर्ष है। यह गाथा लोक विश्वास में संचित और सुरक्षित रहती है। नाराशंसी उन मनुष्यों की प्रशंसा है जो इतिहास, पुराण, गाथा में नायक के रूप में प्रतिष्ठित हुये हैं। इस प्रकार इतिहास का अर्थ केवल राजनीतिक घटनाओं का वर्णन अर्थात साम्राज्यों के उदय एवं पतन की कथा ही नहीं अपितु इतिहास का अध्ययन नैतिक नियमों, सामाजिक संस्थाओं और वैदिक नियमों का भी समावेश करता है।

रामायण एवं महाभारत :- इतिहास लेखन की दृष्टि से दोनों ही महाकाव्य महत्वपूर्ण साक्ष्य हैं।

रामायण से राजतंत्रात्मक व्यवस्था के वर्णन के साथ दक्षिण की ओर भारत का विस्तार दर्शाया है। तत्कालीन सामाजिक एवं धार्मिक दशा का वर्णन भी प्राप्त होता है। महाभारत में भी राज्य का स्वरूप राजतंत्रात्मक दर्शाया है। नैतिक मूल्यों के पतन की जानकारी भी महाभारत से होती है।

पुराण :- पुराणों में प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन की पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। पुराणों के पाँच लक्षण बताये गये हैं - सर्ग (सृष्टि), प्रतिसर्ग (प्रलय), वंश (ऋषियों तथा राजाओं की वंशावलियाँ), मन्वन्तर (मनुओं की वंशावली) तथा वंशानुचरित (राजाओं की वंशावली) इनमें प्रथम दो तथा चतुर्थ ब्रह्माण्ड स्वरूप के विषय से सम्बद्ध है तथा वंश तथा वंशानुचरित मानवीय इतिहास से सम्बन्धित है। पहले पुराणों को ऐतिहासिक महत्व की दृष्टि से गौण माना जाता था किन्तु पार्जीटर वी.एस. अग्रवाल तथा हाजरा आदि विद्वानों ने इतिहासकारों का पुराणों के प्रति दृष्टिकोण बदल दिया है। स्मिथ जैसे इतिहासकार को लिखना पड़ा कि आधुनिक यूरोपीय इतिहासकारों ने त्रुटिवश पौराणिक सूचियों के प्रति अविश्वास की प्रवृति अपनाई है किन्तु सूक्ष्म अध्ययन से उनमें पर्याप्त विशुद्ध तथा मूल्यवान परम्परा प्राप्त होती है। आर.एस. त्रिपाठी ने लिखा है कि पुराण अज्ञानरूपी अन्धकूप में ज्ञानरूपी प्रकाश की किरण का कार्य करते हैं।

बौद्ध एवं जैन साहित्यः- प्राचीन भारत में इतिहास लेखन की परम्परा की जानकारी का अन्य महत्वपूर्ण साक्ष्य बौद्ध एवं जैन साहित्य है। बौद्ध धर्म के त्रिपिटकों में बुद्ध की जीवनी से सम्बद्ध विभिन्न घटनाओं का विवरण है। विनयपिटक से वस्तुतः बौद्ध धर्म के इतिहास का लेखन प्रारंभ होता है। जातक-कथाओं में बुद्ध के पूर्वजन्मों का वर्णन मिलता है। श्रीलंका के बौद्ध ग्रंथ दीपवंश एवं महावंश ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मिलिन्दपन्हों, ललितविस्तर एवं बुद्धचरित आदि से भी पर्याप्त ऐतिहासिक सूचनाऐं प्राप्त होती है। जैन साहित्य से भी प्राचीन भारतीय इतिहास लेखन पर पर्याप्त प्रकाश पडता है। इनमें आचारांगसूत्र, भद्रवाहुचरित, परिशिष्ट पर्वन, कथाकोष, भगवतीसूत्र समराइच्छ कहा, कुवलयमाला, धूर्ताख्यान आदि महत्वपूर्ण हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीयों ने इस प्रकार का इतिहास नही लिखा जैसा कि वर्तमान मे परिभाषित होता है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी इतिहास लेखन में रूचि नहीं थी वास्तव में भारतीयों के इतिहास लेखन की विशिष्ट अवधारणा थी जिसमें विचारों एवं मूल्यों पर जोर दिया गया।

सन्दर्भ :

1. अहमद, कयामउद्दीन (सम्पा.) भारत : अलबिरूनी (एन.बी.टी. 2003) पृ. 184.
2. उद्धृत पाण्डे, जी.सी. (सम्पा.) इतिहास : स्वरूप एवं सिद्धान्त (राज. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पंचम संस्करण 1999) पृ. 75.
3. द्रष्टव्य, अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन, पटना (1965) अध्यक्षीय व्याखान.
4. पाण्डे, जी. सी. वही पृ. 75.
5. भण्डारकर, डी. अ., अशोक (एस. चन्द एण्ड कम्पनी 1974)
6. कीलहर्न, एफ "जूनागढ रॉक इंशक्रिप्शन ऑफ रूद्रदामन, द ईयर 72" एपिग्रैफिया इण्डिका, वाल्यूम 8, पृ 36-49
7. जायसवाल, के. पी., बनर्जी, आर. डी. 'दि हाथीगुम्फा इंशक्रिप्शन ऑफ खारवेल' एपिग्रैफिया इण्डिका, वाल्यूम 20, पृ. 71-89
8. गोयल, श्रीराम, गुप्तकालीन अभिलेख (कुसुमांजलि प्रकाशन मेरठ, 1984)
9. हुएनसांग का भारत भ्रमण (इंडियन प्रेस लि0 प्रयाग, 1928) पृ. 60
10. उपाध्याय, वासुदेव, प्राचीन भारतीय अभिलेख (प्रज्ञा प्रकाशन, पटना, 1970) पृ. 66
11. चतुर्वेदी, गिरिजाशंकर, महाकवि कल्हण, (यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1998) पृ. 142-143.
12. वार्डर, ए.के. (अनु. जगन्नाथ अग्रवाल), भारतीय इतिहास लेखन की भूमिका (हरियाणा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, चण्डीगढ 1987) पृ. 5.

●

बी-48 (ए) जवाहर नगर,
भरतपुर (राज.) 321001
मो. 9414357802

साहित्य और प्रकृति का सामंजस्यपूर्ण संबंध

डॉ. वासुदेवन 'शेष'

प्रकृति मानव की आदि सहचरी है। प्रकृति के कोड में उत्पन्न मानव ने उसी के संपर्क में धीरे-धीरे अपनी चेतना का विकास किया है। प्रकृति ने ही आदि मानव की भूख, प्यास आदि सहज वृत्तियों का समाधान किया। इसी के कारण मानव और प्रकृति के बीच अटूट संबंध स्थापित हुआ। मानव की हृदयगत भावनाओं के विकास में भी प्रकृति का मुख्य स्थान है। मानव के चेतन मस्तिष्क में पहले पहल प्रकृति के अलौकिक एवं असीम अंगों के प्रति कौतुहल उदय हुआ। उसके बाद प्रकृति के विशाल रूप को देखकर मानव चकित हुआ। प्रकृति पुनः शांत रूप में लक्षित हुई तो मानव हृदय में उसके प्रति एक नवीन भावना का उदय हुआ जो विश्वास कहलाता है। प्रकृति के भिन्न-भिन्न रूपों के दर्शन के उपरांत प्रकृति की शक्ति की तुलना में मानव ने अपने को तुच्छ माना।

प्रकृति मानव के लिए चिंतन एवं मनन का विषय बन गया। मानव प्रकृति के मंगलमय कृतियों से बहुत प्रभावित हुआ। अतः वह प्रकृति में देवत्व की प्रतिष्ठा कर उसका गुणगान करने लगा। मानव ने प्रकृति के विभिन्न अंगों को इन्द्र, सूर्य, वरुण, चंद्र, वायु, पृथ्वी आदि नाम भी दिये। मानव के चेतन मस्तिष्क में प्रकृति के प्रति पूजा की भावना का उदय हुआ। मानव ने एक ऐसी शक्ति की कल्पना की जो समस्त विश्व की संचालिका है। मानव की कल्पना के अनुसार उस शक्ति के अभाव में प्रत्येक परमाणु निश्चेष्ट बन जाता है। मानव के विश्वास के अनुसार जड़ चेतन, चर-अचर सभी के क्रिया कलापों में यही अव्यक्त एवं अज्ञात शक्ति अनुस्यूत है।

महाकाव्यों में आकर प्रकृति मानव हृदय की विभिन्न भावनाओं की क्रीड़ा भूमि बन गयी। वाल्मीकी के राम की वियोगावस्था में प्रकृति उनकी सहयोगिनी सी बन गयी। उदाःवाल्मीकी आरण्य 52-श्लोक-38 में (सीता हरण से दुःखी पर्वत श्रेणियां अपने शिखर रूपी भूजाओं को उठा, झरनों के बहाने अश्रु बहा मानो रो रही है)।

सृष्टि के आरंभ और विकास का इतिहास जितना पुराना है उतना ही पुराना है मानव और प्रकृति का संबंध भी। इस अटूट संबंध की अभिव्यक्ति, धर्म, दर्शन, साहित्य और कला में चिरकाल से होती रही है। मानव जीवन का प्रतिबिम्ब है साहित्य अतः उसमें उसकी सहचरी प्रकृति का भी प्रतिबिंब मिलना स्वाभाविक है। प्रकृति मानव हृदय और काव्य के बीच संयोजन का कार्य भी करती रही है। प्रकृति हमारे कवियों के लिए प्रभा का स्रोत ही नहीं, सौन्दर्य का अक्षय भंडार, कल्पना का अद्‌भुत लोक, अनुभूति का अगाध सागर और विचारों की अटूट शृंखला भी है। हिंदी साहित्य में सभी ख्याति प्राप्त साहित्यकारों ने अपने काव्यों, कहानियों, उपन्यासों, नाटकों में बखूबी प्रकृति चित्रण

किया है। प्रकृति के चित्रण के बिना साहित्य अधूरा है। साहित्य का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि मानव और प्रकृति के बीच अविच्छिन संबंध है। साहित्य का मुख्य विषय है मानव। लेकिन प्रकृति के सहयोग के बिना मानवीय चेष्टाओं एवं मनोदशाओं की अभिव्यक्ति भाव रहित और नीरस बन जाती है। उदार प्रकृति मानव के भौतिक जीवन के लिए आवश्यक सार सामग्री प्रदान करती है। उसी प्रकार उसके भौतिक, आध्यात्मिक तथा भावात्मक जीवन को भी यथेष्ट वस्तुएं प्रदान करके उसे सम्पन्न बनाती है। कविगण अपने काव्यों में प्रकृति रूपों एवं तत्वों का भी वर्णन करते हैं। प्रकृतिक सौंदर्य से आकृष्ट मानव आत्मविभोर हो जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार–'मानव मन की यही देशा मुक्तावस्था कहलाती है और यही मुक्तावस्था रस दशा है।'

प्रृकृति के उपयोगी और विश्लेषणात्मक रूप का विचार करनेवाला मानव वैज्ञानिक है। प्रकृति के सौंदर्य पर लीन होकर उसका वर्णन करने वाला व्यक्ति भावुक कवि है। दोनों ही प्रकृति से संबंध स्थापित करते हैं। लेकिन दोनों के दृष्टिकोण में भिन्नता है। महाकवि कालीदास के रघुवंश में वैविद्यपूर्ण प्रकृति का विविध रूपों में चित्रण किया गया हैं। अनेक स्थानों में प्रकृति राम और सीता के लिए उदीपन के रूप में प्रस्तुत हुई हैं। प्राकृतिक तत्व पात्रों के भावों से इतने मिल जुल गये हैं कि प्रकृति मानो एक संवेदना युक्त पात्र की तरह दिखायी देती है। जब राघव युदध जीत कर सीता सहित लौटते हैं तब पहले देखे हुए प्राकृतिक दृश्य उनको अत्यधिक मोहित करते हैं। वे प्रकृति से अत्यधिक अभिभूत होकर सीता को पूर्वजीवन की घटनाओं की याद दिलाते हैं। ऐसे संदर्भों में दोनों की संवेदनाओं को जगाने में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है।

कालीदास के मेघदूत में प्रकृति का इतना महत्वपूर्ण स्थान है कि नायक यक्ष मेघ को दूत बनाकर अपनी विरह गाथा सुनाने नायिका के पास भेजता है। कुमारसंभव आदि उनकी अन्य रचनाओं में भी प्रकृति को महत्वपूरण स्थान प्राप्त है। भारतीय साहित्य में ही नहीं पाश्चात्य साहित्य में भी प्रकृति के महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए हर देश के कवियों ने प्रकृति का सहारा लिया है। ग्रीक, लैटिन जैसी भाषाओं के प्राचीन साहित्य में प्रकृति वर्णन का अक्षय भंडार है। विश्वविख्यात नोबल पुरस्कार प्राप्त महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाओं में भी प्रकृति का वर्णन मिलता है उनकी गीतांजलि का एक उदाहरण–

आषाढ़ की संध्या घनी हो गयी,
दिवस का अवसान हो गया।
अंधेरी रात के सारे रिक्त पहर आज फिर स्वरों से भर सकूंगा?
कौन सी मुरली खोने से मैं आज सब भूलकर व्याकुल हो उठा हूं?
वर्षा की जलधारा रह रहकर बरस रही है।

आदिकाल से लेकर आज तक के साहित्य का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट होती है कि अपभ्रंश काल में स्वयंभू पुण्यदंत आदि की रचनाओं में नदी, पर्वत, वन, समुद्र आदि का मोहक वर्णन मिलता है। संदेश रासक आदि अतिप्राचीन रचनाओं में तो पूरा-पूरा प्रकृति वर्णन ही देखने को मिलता है।

वीरगाथा काल के काव्यों में यद्यपि वीर रस की प्रधानता है फिर भी कवियों ने प्रकृति का विशद वर्णन किया है। पृथ्वीराज रासो में विभिन्न ऋतुओं में प्रकृति की दशा का वर्णन किया है। प्रेमाश्र्यी शाखा के कवियों ने प्रकृति को महत्वपूर्म स्थान दिया है। जैसे पद्यावत में तो प्रकृति के सुन्दर एवं स्वाभाविक वर्णन का अक्षर भंडाल विद्यमान है–

बसहिं पंखि बोल हिं बहु भाखा। करहिं हुलास देखि कै साखा।
भेर होत बोलहिं चुह चूही। बोलहिं पांडुक एक तूही।

आधुनिक युग में भारतेन्दु युग हिंदी काव्य में विचार और अभिव्यंजना की दृष्टि से परिवर्तन का युग था। काव्य के सभी क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। इससे प्रकृति वर्णन की परिपाटी में भी काफी

परिवर्तन आया। रीतिकालीन काव्य की रूढ़िबद्ध शैलियों और विषय की सीमाओं को तोड़कर कविता को नई दिशा देने का प्रयास किया गया। इसका प्रभाव तत्कालीन प्रकृति वर्णन पर भी पड़ा। नई शैली में अधिक स्वच्छंदता के साथ अनेक कवियों ने प्रकृति वर्णन प्रस्तुत किये। भारतेन्दु की महिमा में एक ओर गंगा के मनोहर रूप का चित्रण किया गया है तो दूसरी ओर भारतीय संस्कृति से उसका संबंध जोड़ा गया है। श्रीधर पाठक की काश्मीर सुषमा रोमांतिक भाव विकास उत्तम उदाहरण है।

द्विवेदी युग के कवियों में भी अनेकों ने अपने काव्य में प्रकृति को यथेष्ट स्थान दिया है। मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, गया प्रसाद शुक्ल स्नेही, श्यामनारायण पाण्डेय, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इस काल में स्वच्छंद भाव विकास की प्रवृत्ति अधिक बढ़ी, जिसका प्रभाव तत्कालीन प्रकृति वर्णनों में भी देखा जा सकता है। रामनरेश त्रिपाठी के मिलन, पथिक, स्वप्न आदि के प्रकृति वर्णन अत्यंत स्वच्छंद कल्पना के उदाहरण है। दूसरी ओर मैथिली शरण गुप्त की कविताओं में प्रकृति के द्वारा भी आदेशों को प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति अधिक मिलती है।

मैथिल कोकिल विद्यापति की रचनाओं में यद्यपि श्रृंगार की प्रधानता है तथापि स्थान स्थान पर उन्होंने बारह मास, षटऋतु का भी चित्रण किया है। अधिकतर उद्दीपन रूप में ही उन्होंने प्रकृति को अपनाया है तो भी कहीं -कहीं प्रकृति का आलंबन रूप भी लक्षित होता है–

माघ मास सिरि पंचमि गंजइलि
नवं मास पंचम हरुआइ।
अतिपन पीड़ा दुख बड़ पाओल
बनस्पति के बधाई हो।

धीरे-धीरे यह प्रवृत्ति बढ़ती गयी और अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध में आकर प्रकृति को काव्य में एक विशिष्ट स्थान मिला। उनकी प्रमुख रचना 'प्रिय प्रवास' का आरंभ ही प्रकृति वर्णन से हुआ है।

दिवस का अवसान समीप था
गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरू शिखर पर थी विराजती
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा।

हरिऔध के बाद मैथिलीशरण गुप्त और रामनरेश त्रिपाठी को इस परम्परागत काव्य के पोषक मान सकते हैं। गुप्तजी का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

नहलाती है नभ की दृष्टि
अंग पोंछती आतप सृष्टि,
करता है शीश शीतल दृष्टि
देता है ऋतु पति न शृंगार
ओ गौरव गिरि, उच्च उदार।

जयशंकर प्रसाद का महाकाव्य कामायनी में सर्वत्र प्रकृति चित्रण का सौकुमार्य दर्शित है। उन्होंने प्रकृति के विभिन्न रूपों सुकुमार, शांत, रौद्र, विकराल का सुन्दर चित्रण किया है।

वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का
आज लगा हंसने फिर से
वर्षा, बीती, हुआ सृष्टि में
शरद विकास नये सिर से।
नव कोमल आलोक बिखरताहिम
संसृति पर भर अनुराग।।
सित सरोज पर क्रिड़ा करता
जैसे मधुमय पिंग पराग।

यहां प्रकृति का हंस मुखी नायिका के रूप में प्रकट कर उसका सांगोपांग वर्णन किया गया है।

छायावादी युग के कवियों के लिए प्रकृति ही प्राण है। सुमित्रानंदन पंतजी तो प्रकृति के ही कवि हैं। पंत की संपूर्ण रचनाओं में प्राकृतिक सुषमा खुलकर खेलती है। प्राकृतिक सौंदर्य के अन्नय आराधक हैं पंतजी।

छोड़ द्रमों की मृदु छाया, तोडु प्रकृति से भी माया
बाले तेरे बाल जाल पर कैसे उलझा दूं लोचन?

ये कहकर पंत ने प्रेयसी से बढ़कर प्रकृति को अधिक महत्व दिया है। प्रकृति का आलंबन रूप में चित्रण पंत में प्रचुर मात्रा में मिलता है-

कैसी किरणें बरस रहीं
जाने किस नभ से,

प्रिय श्री पाटल का मुख
फालसई आभा से
दिखता परिवृत्त
शुभ कुंद कलियों
स्वर्णिम हंस मुख मंडल से
लगती शोभित।

यहां प्रकृति सुन्दरी ही कवि की कृति का आलंबन है। उसके शरीर के प्रत्येक अंग का सूक्ष्म एवं विशद वर्णन कवि करते हैं। महाप्राण निराला जी की अनेक कविताओं में भी प्राकृतिक वस्तुओं को मूर्तिमान बनाने वाला मानवीकरण दृष्टव्य है–

विजन वन वल्लरी पर
सोती थी सुहाग भरी–
स्नेह-स्वप्न-मग्न अमल कोमल तनु तरुणी
जूही की कली,
दृग बंद किये, शिथिल, पंत्राक में।

यहां कवि जुही की कली को निद्रा में लीन नारी के रूप में चित्रित करता है। अंग प्रत्यंग का मानवीकृत वर्णन एक सामान्यतः कली कसे एक राग विराग मय युवती के रूप में हमारे सामने लाता है। प्रसादजी ने कामायनी में प्रकृति को प्रियतम से मान किये बैठी एक नारी के रूप में चित्रित किया है–

सिंधु सेज पर धरा वधु जब तनिक संकुचित बैठी थी।
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में मान किये सी ऐंठी सी।

उन्होंने प्रकृति का चित्रण करते हुए भी सर्वत्र उसे कोमलतम रूप में चित्रित किया और उस पर तरलतम भावों को आरोप किया है।

रामकुमार वर्मा में भी प्रकृति के प्रति विशेष अनुराग पाते हैं। रामकुमार वर्मा की रचनाओं में रहस्यवाद की प्रधानता है। उस अलौकिक परम सत्ता का, प्रिय का सौंदर्य प्रकृति के प्रत्येक अंग में झलकता है। यह देखकर कवि को कोतुहल होता है। ओस की मुस्कान, विहंगों के कुंजन में, संध्या के मिलन और उदास वातावरण में हर कहीं प्रिय की महानता दिखाई पड़ती है।

कौन गा रहा है कोकिल के
कंठों से मधुमय कल गान
कौन भ्रमर बन कर करता है
कलियों से नूतन पहिचान।

कवि की इस अनुभूति के कारण वे प्रकृति चित्रण करते-करते रहस्यवाद के प्रवाह में बह जाते हैं।

इसी प्रकार महादेवी वर्मा की रचनाओं नीहार से प्रारंभ होकर दीपशिखा, हिमालय, सांध्यगीतरश्मि, नीरजा, यामा में संकलित किया। इन सभी कृतियों में प्राकृतिक चित्रण देखा जा सकता है। वर्तमान युग में नई कविता का बोलबाला है। इन कवियों ने भी प्रकृति की उपेक्षा नहीं की। यद्यपि उनके प्रस्तुतीकरण का कुल अलग ढंग है फिर भी उन्होंने रात, दिन, बसंत, धूप, वर्षा आदि का वर्णन किया है। अपनी प्रेमिका की, या बीते यौवन की याद इन प्राकृतिक क्रियाओं को देखकर इन कवियों के हृदय में भी उदित होती है।

यह जुलाई की हल्की-
उभरती धूप-और आसमान में छितरी-काली घटाएं-
पता नहीं क्यों- याद दिला रही है
उस नव यौवन की जिसने
अभी-अभी अपने उलझे बाल धोकर निचोड़े हैं।

निष्कर्ष- यही कहा जा सकता है कि छायावादी कवियों ने प्रकृति को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में भावनाओं के चित्रण का आधार बनाकर कविता को अत्यंत मार्मिक बनाया है और साहित्य का प्रकृति के साथ सामंजस्य को पूर्ण रूपेण स्थापित किया है। साहित्य से मानव और मानव से प्रकृति कभी अलग नहीं हो सकती।

संदर्भ -

1. महादेवी वर्मा के साहित्य में प्रकृति चित्रण : डॉ. वत्सला किरण वर्ष 2015
2. हरिऔध के साहित्य में प्रकृति सौंदर्य : मधुधवन वर्ष 2010
3. हिंदी साहित्य में प्रकृति चित्रण : सासुन जैन कालेज द्वारा संपादित वर्ष 2017

●

- अक्षय फ्लैट्स,
53, इरुसप्पा स्ट्रीट, आईस हाउस ट्रिपलीकेन,
चेन्नई-600005
मो. 9444170451

होला महल्ला

रावेल पुष्प

हिंदुस्तान में लगभग ढाई सौ सालों तक मुगलों का शासन रहा है और इतिहास के इसी कालखंड में सिख गुरुओं का इतिहास भी रहा है, और उस दौर के अधिकतर समय में गैर मुस्लिमों पर अत्याचार भी होते ही रहे हैं, भले ही कुछ शासक सहिष्णु रहे हों।

बाबर के शासन में ही सिक्खों के प्रथम गुरु नानक ने खुले शब्दों में कहा था- बाबर तूं जाबर हैं!

उसके बाद तो यह सर्वविदित है कि किस तरह जहांगीर के शासनकाल में सिक्खों के पांचवे गुरु अर्जन देव जी को गर्म लोहे के तवे पर बैठाकर शहीद किया गया और फिर नौवें गुरु तेग बहादुर को औरंगजेब के शासनकाल में दिल्ली के चांदनी चौक पर सर कलम कर शहीद किया गया। इस बेइंतहा हो रहे जुल्म के प्रतिकार के लिए ही आम दबी-कुचली भयाक्रांत हिंदू जनमानस में शक्ति और साहस का संचार करने के लिए गुरु गोबिंद सिंह ने पंजाब के आनंदपुर साहिब में देश के अलग-अलग हिस्सों से और अलग-अलग जातियों से पांच लोगों को लेकर उन्हें अमृतपान करवाया और मौत से पंजा लड़ाने वाले पांच प्यारों में तब्दील कर दिया. और यहीं से बहादुर खालसा पंथ की नींव पड़ी। उस समय की दबी- कुचली जनता को शूरवीर बनाकर ही तो उन्होंने उद्‌घोष किया था-

सवा लाख से एक लड़ाउं
तभै गोबिंद सिंह नाम कहाउं।

उन्होंने सिर्फ यह कहा ही नहीं था, बल्कि करके भी दिखाया था और कई बार विशाल मुगल सेना को महज कुछ सिखों ने जबरदस्त टक्कर दी थी। उस दौर में भी अगर भयभीत, डरपोक और चापलूस पहाड़ी हिंदू राजे मुगलों का साथ नहीं देते तो दिल्ली के तख्त से बहुत पहले मुगल शासकों को तख़्त से उतरने पर बाध्य होना पड़ता। वैसे भले ही कुछ समय के लिए ही सही, लेकिन दिल्ली के लाल किले पर सिक्खों ने 17 मार्च 1783 को केसरिया निशान साहब फहरा तो दिया ही दिया था.

खैर, मैं बात फिलहाल होली के सन्दर्भ में ही करूंगा। गुरु गोबिंद सिंह ने देखा कि लोग-बाग होली मनाते हैं और आमतौर पर गलियों का कीचड़ एक दूसरे पर डालते हैं और शराब, भांग धतूरे वगैरह के नशे में चूर होकर नालियों में गिरते हैं । गुरु गोबिंद सिंह को लगा कि एक तो वैसे ही जनता दबी- कुचली हुई है, उस पर इस तरह पूरी पीढ़ी नशे में और बरबाद होगी, तो उन्होंने होली के त्योहार को एक वीर पुरूषोचित रूप दिया और ये ऐलान किया कि अब से हम होली की जगह मनायेंगे - होला महल्ला!

गुरू गोबिन्द सिंह ने आनन्दपुर साहिब में होली के दिन शुरू कर दिये कुश्ती मुकाबले, अस्त्र शस्त्रों का प्रशिक्षण,घुड़सवारी के जौहर एवं इसी तरह के वीरोचित कार्यकलाप। उस दौरान गुरु जी स्वयं उपस्थित होकर न सिर्फ यह मुकाबले देखते बल्कि उन पर सुभाषित गुलाल भी डालते और कभी-कभी उनके बीच जाकर स्वयं शस्त्र चलाने के नए-नए गुर भी बताते. आनंदपुर और आसपास की शिवालिक की पहाड़ियों तथा अन्य क्षेत्रों में भी कई प्रशिक्षण केंद्र खुल गए और फिर होला महल्ला के दिन सभी प्रतियोगिता में आकर हिस्सा लेते। इस दौरान कुछ खास तरह के ऐसे सिख जो पूरी तरह युद्ध के लिये ही समर्पित हुए ,उन्हें निहंग सिंह कहा जाने लगा। वे युद्ध की पोशाक में हमेशा तैयार रहते, और एक इशारे पर मर मिटने में भी देर नहीं करते .ये निहंग सिंह दौड़ते हुए घोड़ों पर खड़े होकर तरह तरह के ऐसे लोमहर्षक करतब दिखाते कि लोग दांतों तले उंगलियां दबा लेते, और खास बात तो ये है कि आज की तारीख़ में भी आनंदपुर साहिब में उसी परंपरा का निर्वाह करते हुए होला महल्ला मनाया जाता है और निहंगों के ऐसे करतब देखकर मुंह से बेसाख्ता निकल पड़ता है - 'वाहेगुरु जी का खालसा वाहेगुरु जी की फतेह'।

गुरू गोबिन्द सिंह जी ने ये सब उस दौर में किया था, जब दिल्ली की सल्तनत ने ये फतवा जारी किया हुआ था कि कोई भी गैर-मुस्लिम सिर पर साफ़ा नहीं बांध सकता, शस्त्र नहीं रख सकता और घोड़े पर सवारी तो सोच भी नहीं सकता।

गुरु गोबिन्द सिंह ने खुली चुनौती देते हुए ये सब किया और मानवीय स्वाधीनता के पक्ष में अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज की। सिख धर्म में उन्हीं ऐतिहासिक कारणों से शस्त्र-विद्या का बहुत बड़ा महत्व है। शस्त्रों को शक्ति का रूप माना गया है और गुरु गोविंद सिंह ने तो शस्त्रों की स्तुति भी की है और शस्त्र नाम माला की रचना भी की है। वे लिखते हैं :

असि कृपान खंडे खडग तुपक, तबर अर तीर
सैफ़ सरोही सैहथी यही हमारे पीर!

आनन्दपुर साहिब में होला महल्ला पर करतब दिखाते निहंग सिंह

उसी शूरवीर परम्परा का परिणाम है कि सिख कौम ने ना सिर्फ उस दौर में बल्कि देश की आजादी के लिए भी सर्वाधिक कुर्बानियां दीं और अब भी सीमाओं की रक्षा में पूर्ण समर्पण के साथ मुस्तैद हैं।

होला महल्ला पहली बार आनन्दपुर साहिब में पहली चैत 1700 ईस्वी को मनाया गया था।

वर्तमान समय में आनन्दपुर साहिब का होला महल्ला सिख कौम के एक राष्ट्रीय त्योहार का रूप ले चुका है , और इसकी रस्मी शुरूआत किला आनन्दगढ़ साहिब में गुलाब के फूलों की बारिश कर तथा पांच गणमान्य शख्सियतों की तरफ से पांच पुरातन नगाड़े बजाकर की जाती है। ये उत्सव ऐसी धूमधाम और हैरतअंगेज कारनामों के साथ मनाया जाता है कि देश-विदेश से न सिर्फ श्रद्धालु शामिल होते हैं बल्कि दुनिया भर से सैलानियों की भी बड़ी संख्या में उपस्थिति होती है।

●

नेताजी टावर,
278/ए, एन.एस.सी. बोस रोड,
कोलकाता-700047.
चलंतभाष : 9434198898
ईमेल: rawelpushp @gmail.com

‘राम हमारी संस्कृति का सारस्वत हस्ताक्षर है’

डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी

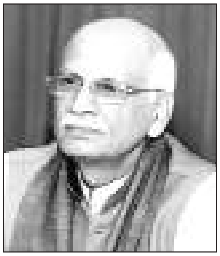

शील, सौन्दर्य एवं शक्ति के आगार, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की महिमा वर्णनातीत है। मस्तिष्क में बरबस गद्यूंज रही है गोस्वामी तुलसीदासजी की एक पंक्ति ‘निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै’। यानी रामद्रजद्धी निरुपमेय हैं, उनकी कोई दूसरी उपमा नहीं है। ‘श्रीराम के समान केवल श्रीराम ही हैं’– यह वेदकथन है। उनका स्वरूप ‘बचन-अगोचर’ और बुद्धि से परे है; अव्यक्त है, अकथ्य है। रामजी ‘बिधि हरि संभु नचावनिहारे’ हैं। ये त्रिदेव ही जब उनके मर्म को नहीं जान पाते तब सामान्य जन की क्या सामर्थ्य। प्रभु राम को वही जान पाता है जिस भक्त पर उनकी कृपा बरसती है। गोस्वामी तुलसीदास रचित रामचरितमानस के अयोध्याकांड में ‘श्रीराम वाल्मीकि संवाद’ के अंतर्गत वाल्मीकि मुनि कहते हैं–

जगु पेखन तुम देखनिहारे। बिधि हरि संभु नचावनिहारे।।
तेउ न जानहिं मरमु तुम्हारा। औरु तुम्हहि को जाननिहारा।।
सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।।
तुम्हरिहि कृपाँ तुम्हरि रघुनंदन। जानहिं भगत भगत उर चंदन।।

यानी मार्ग केवल एक ही है और वह है मुग्ध-भाव से उनके गुणों का, उनके वैशिष्ट्य का स्मरण एवं यथामति अंकन-विवेचन। प्रसन्नराघवकार ने लिखा है कि कवियों का नहीं गुणों का दोष है, जो श्रीराम पर मुग्ध होकर उन्हीं में पुंजीभूत हो गए हैं–

स्वसूक्तीनां पात्रं रघुतिलकमेकं कलयतां
कवीनां को दोषः सतुगुण गणानाम अवगुणः

कवियों ने अपनी लेखनी को पवित्र करने के लिए रामजी के व्यक्तित्व-कृतित्व-कर्तुत्व एवं चरित्र का भिन्न-भिन्न रूपों में अंकन किया है। गोस्वामी तुलसीदास ने एकनिष्ठ भक्त के रूप में रामजी के चरित्र का चित्रण कर सर्वाधिक कीर्ति अर्जित की है। उन्होंने रामचरित मानस के बालकाण्ड का समापन करते हुए यह कहा है कि वे अपनी वाणी को पवित्र करने हेतु ही इस रामचरित का वर्णन कर रहे हैं, अन्यथा रघुनाथजी के समुद्र के समान अपार यश का वर्णन करने की क्षमता किस कवि में है–

निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसी कह्यो।
रघुबीर चरित अपार बारिधि पारु कवि कौने लह्यो।।

राम-तत्व की व्याख्या, राम-भाव का विश्लेषण बहुत कठिन है। ‘कौन है श्री राम’- इस प्रश्न का उत्तर तो और भी जटिल है। संतों ने, पुराणों-उपनिषदों ने, राम-नाम की

महिमा के व्यापक प्रभाव का उल्लेख किया है। स्वयं शिवजी भी रामजी के अनन्य उपासक हैं। राम कौन हैं– यह प्रश्न किया गया था परम विवेकी याज्ञवल्क्यजी से। प्रश्नकर्त्ता थे रामचरणानुरागी भक्त भरद्वाज जी। स्थान था परम-पावन प्रयाग तीर्थ। समय था माघ महीने की मकर संक्रांति के माह- व्यापी त्रिवेणी स्नानोपरांत सत्संग का। यानी देश-काल-वातावरण अनुकूल। परम ज्ञानी याज्ञवल्क्यजी के प्रति अपनी अशेष श्रद्धा समर्पित करते हुए भरद्वाज मुनि सवाल करते हैं–

रामकवन प्रभु पूछउँ तोही।
कहि अबुझाइ कृपानिधि मोही।।
एक राम अवधेस कुमारा।
तिन्ह कर चरित बिदित संसारा।।
नारि बिरहँ दुखु लहेउ अपारा।
भयउ रोषु रन रावन मारा।।
प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ, जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्यधाम सर्बग्य तुम, कहहु बिबेकु बिचारि।।

संशय एवं भ्रम के निवारण हेतु परम रामभक्त द्वारा अकिंचन भाव से किया गया प्रश्न यद्यपि अत्यंत दुरुह था तथापि प्रश्नकर्ता की पात्रता एवं उनकी अनन्य भक्ति का ध्यान रखते हुए याज्ञवल्क्य जी कह उठते हैं– 'चाहहु सुनै राम गुन गूढ़ा/ कीन्हिहु, प्रश्न मनहुँ अति मूढ़ा।' याज्ञवल्क्यजी बताते हैं कि इसी प्रकार का प्रश्न पार्वतीजी ने भगवान शिव से किया था और भगवान शंकर ने उसका विस्तार से समुचित उत्तर दिया था। इस 'उमा-शंभु संवाद' के माध्यम से भरद्वाज मुनि की जिज्ञासा को शांत किया था याज्ञवल्यक्यजी ने। तुलसी के रामचरितमानस में इस प्रसंग का सुन्दर वर्णन मिलता है। भव्य-भूमिका के साथ पार्वतीजी सर्व-समर्थ, सर्वज्ञ तथा 'जोग ज्ञान वैराग्य' के भण्डार शिव से पूछती हैं–

'प्रभु जे मुनि परमारथबादी।
कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी।।
सेस सारदा बेद पुराना।
सकल करहिं रघुपति गुन गाना।।
तुम्ह पुनि राम राम दिन राती।
सादर जपहु अनँग आराती।।
रामु सो अवध नृपति सुत सोई।
की अज अगुन अलखगति कोई।।'

और साथ ही यह सवाल भी कि 'जौं नृप तनय त ब्रह्म किमि नारि बिरह मति भोरि।' तो घड़ी 'ध्यान-रस' में निमग्न होने के उपरान्त शिवजी ने इस प्रश्न का उत्तर रामचरित के समुचित विवेचन के साथ दिया था। क्योंकि 'गूढउ तत्व न साधु दुरावहिं/आरत अधिकारी जहँ पावहिं'। योग्य अधिकारी प्राप्त होने पर गुणीजन गूढ़ तत्व को प्रेमपूर्वक स्पष्ट कर देते हैं।

किए गये प्रश्नों को लोक हितकारी समझकर शिवजी पवित्र गंगा की भांति जन-कल्याणकारी राम-कथा विस्तार से सुनाते हैं। 'राम-कथा सुन्दर कर तारी/संसय बिहग उड़ावनहारी' की अभिव्यक्ति के साथ वे पार्वतीजी के संशय, मोह, भर्म के निवारण हेतु उनके प्रश्न की प्रशंसा तो करते हैं लेकिन अपना सात्विक रोष भी व्यक्त कर देते हैं। गोस्वामी तुलसीदास की शब्दावली में शिवजी की टिप्पणी–

उमा प्रस्न तव सहज सुहाई।
सुखद संत सम्मत मोहि भाई।।
एक बात नहिं मोहि सोहानी।
जदपि मोह बस कहेउ भवानी।।
तुम्ह जो कहा राम कोउ आना।
जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना।।

वाणी शिवजी की है, वर्णन तुलसीदासजी का है। मर्यादावादी तुलसीदास अगली पंक्तियों में जिस रूप में मुखर होते हैं, वह उनकी स्थापित छवि से पृथक है। प्रतीत होता है मानों वे कबीर की उस चर्चित पंक्ति का जवाब देना चाहते हैं जिसमें निर्गुणवादी संत कबीर कहते हैं–'दसरथ सुत तिहुँ लोक बखाना/ राम-नाम का मरम है आना।' दो दृष्टियों– निर्गुण और सगुण पर विवेचन को परे रखकर सीधे-सीधे उस तीखे तेवर वाले उत्तर पर गौर करें–

कहहिं सुनहिं अस अधम नर, ग्रसे जे मोह पिसाच।
पाखंडी हरिपद विमुख, जानहिं झूठ न साच।।

अगली चौपाइयों में ऐसे लोगों को अज्ञ, अकोबिद, अंध, कपटी, कुटिल आदि कहकर उन्हें निर्गुण-सगुण के विवेक से हीन भी बताया गया है। और यह भी–

मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना।
राम रूप देखहिं किमि दीना।।
बातुल भूत बिबस मतवारे।
ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे।।

पूरे प्रसंग को 'राम अतर्क्य बुद्धि, मन, बानी' के भाव से पृथक रखकर राम-कृपा की आकांक्षा से पूरित उस छंद की ओर ध्यान जा रहा है जो 'कवितावली' का है और जिसके माध्यम से भक्त तुलसीदास आश्वस्त हैं, तमाम जटिलताओं एवं विसंगति भरे जीवन में प्रभु की अहैतुकी कृपा के प्रति–

जहां जम जातना, घोर नदी,
भट कोटि जलच्चर दंत टेवैया।
जहँ धार भयंकर वार न पार,
न बोहित-नाव, न नीक खेवैया।।
तुलसी जहँ मातु-पिता न सखा,
नहिं कोऊ कहूं अवलंब देवैया।
तहाँ बिनुकारन राम कृपालु,
बिसाल भुजा गहि कढ़ि लेवैया।।

भक्त का भगवान के प्रति भरोसा यों ही नहीं है। उपर्युक्त छंद से गोस्वामी जी ने जो भाव व्यक्त किए हैं उसी प्रकार की निष्ठा रीतिकालीन कवि 'पद्माकर' की भी है। समुद्र की प्रलयकारी ऊंची-ऊँची लहरों के बीच मझधार में फंसी नौका का नाविक जिस प्रकार धीरज खो बैठता है, वैसा ही परिदृश्य जीवन-जगत में सतत संघर्षरत हर व्यक्ति के सम्मुख भी आता ही है। ऐसे दिशाहारा परिवेश में रामजी का भरोसा ही उसे संबल देता है। स्मरणीय है 'पद्माकर' की ये पंक्तियां–

प्रलय के पयोनिधि लौं लहरैं उठन लागीं
लहरा लम्यौ तो होन पौन पुरवैया को।
भीर भरी झांझरी बिलोकि मँझधार परी
धीर ना धरात 'पद्माकर' खेवैया को।।
कहा पार, कहा वार जान्यौ नहिं जात कछु
दूसरो लखात ना रखैया और नैया को।
बहन न दैहै घेरि घाट ही लगैहै
ऐसो अमित भरोसो मोहि मेरे रघुरैया को।।

अविस्मरणीय है कविवर गुलाब खंडेलवाल का राम केंद्रित वह गीत, जिसमें प्रभु सद्मे सुख की याचना करने के बजाय शक्ति की कामना करने का परामर्श दिया गया है–

जिनका नाम लिए दुख भागे
मिला उन्हें तो जीवन-भर दुख ही दुख आगे-आगे।
छूटा अवध, साथ प्रिय-जन का
शोक असह था पिता-मरण का
देख कष्ट मुनियों के मन का, वन के सुख भी त्यागे।
वन-वन प्रिया-विरह में फिरना
कैसे हो सागर का तिरना?
भ्राता का मूर्च्छित हो गिरना,
नित नव-नव दुख जागे।
गूँजी ध्वनि जब कीर्ति-गान की
फिर चिर-दुख दे गयी जानकी
मांग उन्हीं-सी शक्ति प्राण की, मन!
तू सुख क्या माँगे।

प्रख्यात तुलसी मर्मज्ञ डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र ने लिखा है– 'बनवासी होकर उन्होंने जो सबसे बड़ा कार्य किया वह था आर्य ऋषियों और अनार्य हरिजनों के बीच संबंध स्थापन। नीचातिनीच मनुष्य ने भी उनमें आत्मीयता का अनुभव करके उनका साहचर्य प्राप्त किया। कोल, किरात, निषाद, शबर, बानर (उराँव), भालू आदि अनेकानेक, अनार्य जातियां उनके मौन प्रभाव से प्रभावित होकर उनकी ओर खिंच आई; उनके उस मौन प्रभाव का इतना महत्व था कि अत्रि, अगस्त्य, बाल्मीकि, सुतीक्ष्ण, शरभंग प्रभृति बड़े-बड़े महात्मा भी उनके आगे नतमस्तक हो गए।'

फिर वही प्रश्न, कौन हैं श्रीराम। उत्तर, आधुनिक कवि शिव ओम अंबर का–

राम व्यक्ति को नहीं वृत्ति को प्राप्त हुई संज्ञा है।
राम हमारा चिन्तन दर्शन प्रीति प्रकृति प्रज्ञा है।।
राम चिरंतन जीवन-मूल्यों का स्वर्णाभ शिखर है।

राम हमारी संस्कृति का सारस्वत हस्ताक्षर है।
राम हमारा कर्म, हमारा धर्म, हमारी गति है।
राम हमारी शक्ति, हमारी भक्ति, हमारी मति है।।
बिना राम के आदर्शों का चरमोत्कर्ष कहां है?
बिना राम के इस भारत में भारतवर्ष कहां है?

और अंत में आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री रचित एक चतुष्पदी और एक दोहा–

तरी अहल्या जिनके पावन मृदुल स्पर्श से
प्रेम-हठीले केवट से जो गये पखारे।
जो जग का दुखष हरने काँटो से क्षत-विक्षत
राम! तुम्हारे चरण प्रेरणा स्रोत हमारे।।

औरों के तो जगत में स्वजन, बंधु, धन, धाम।
मेरे तो हैं एक ही, सीतापति श्रीराम।।

●

अध्यक्ष
बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय,
1-सी, मदनमोहन बर्मन स्ट्रीट,
कोलकाता-700007
मो. 9830613313

'वैचारिकी' पत्रिका के स्वामित्व आदि की घोषणा
(प्रपत्र 4 - नियम 8)

1.	प्रकाशन का स्थान	:	भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान, रतनबिहारी पार्क, बीकानेर (राजस्थान)
2.	प्रकाशक की आवृत्ति	:	द्वैमासिक
3.	मुद्रक-प्रकाशक	:	नाम- रामनिवास शर्मा, राष्ट्रीयता- भारतीय पता - मंत्री, गिरधरदास मूंधड़ा शिक्षण संस्थान, रतनबिहारी पार्क, बीकानेर
4.	संपादक	:	नाम- डॉ. बिट्ठलदास मूंधड़ा राष्ट्रीयता - भारतीय
5.	उन व्यक्तियों, संस्थाओं आदि के नाम जो पत्र के स्वामी और साझेदार हैं अथवा कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के अंशधारक हैं	:	भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान रतनबिहारीजी मंदिर, रतनबिहारी पार्क बीकानेर (राजस्थान)

मैं रामनिवास शर्मा एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि ऊपर दिया गया विवरण मेरी जानकारी व विश्वास के अनुसार सही है।

ह. रामनिवास शर्मा
मंत्री- गिरधरदास मूंधड़ा शिक्षण संस्थान,
भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान,
रतनबिहारी पार्क, बीकानेर (राजस्थान)

31 मार्च 2020

तमिलनाडु में श्रीरामनवमी

डॉ. आर. एम. श्रीनिवासन

श्री राम राम रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्त्रनाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने।।
'रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीता यां पतेय नमः।।'
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थान-मधर्स्य तदात्मानं सृजाम्यहं।।
परित्राणाया साधुनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म-संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे।।

सनातन धर्म की प्रधान मान्यता एवं सुदृढ़ विश्वास है कि सत्य और धर्म की रक्षा करने हेतु स्वयं भगवान अपना अवतार लेते हैं। श्री रामावतार भगवान महाविष्णु का सातवां अवतार है। चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की 'नवमी' तिथि को 'पुनर्वसु' नक्षत्र में अयोध्या के राजा दशरथ और उनकी धर्म-पत्नी कौशल्या के सुपुत्र रत्न के रूप में श्री रामचन्द्रजी का अवतार हुआ था। देश-विदेशों में रहनेवाले समस्त हिन्दू धर्मावलम्बी मनुष्यके रूप में अवतार लिये श्रीरामचन्द्र के जन्म-दिवस को हर्षोल्लास के साथ प्रतिवर्ष मनाते हैं 'श्रीरामनवमी' के रूप में।

मनुष्य के रूप में अवतरित होकर मनुष्य-जीवन के समस्त सुख-दुःखों का अनुभव करते हुए श्री रामचंद्रजी अपने आजीवन कहीं भी और किसी से भी अपने अवतार-रहस्य की चर्चा नहीं की थी। इसीलिए श्रीरामावतार उत्तमावतार माना जाता है। एक पत्नीवर्ती धर्मावतारी और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी का आदर्शपूर्ण जीवन प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनुकरणीय है। मनुष्य के समस्त सद्‌गुणों के अवतार श्रीरामचन्द्रजी के जीवन का एकमात्र उद्देश्य सत्य धर्म-परिपालन और उनका संरक्षण था।

तमिलनाडु में 'रामेश्वरम्' श्री रामजी से संबंधित सुप्रसिद्ध स्थल है। जो 'खण्डमदन पर्वत' नाम से पुराने जमाने में सुविख्यात रहा। रामेश्वरम में श्री रामजी ने दो बार 'शिवलिंग' की पूजा की थी- सीताजी की खोज में श्रीलंका जाने से पूर्व और सीताजी के साथ श्रीलंका से वापस आने के बाद। 'भू-लोक वैकुण्ठ' समझे जानेवाले 'श्रीरंगम्' (तिरिच्चिराप्पल्लि के पास) में श्रीरामजी ने भगवान महाविष्णु श्रीरंगनाथ की पूजा की थी। धनुष्कोटी से श्रीलंका जाने के लिए समुद्र में श्रीरामजी द्वारा अपनी वानर-सेना की सहायता से निर्मित 'राम-सेतु' से आज भी तमिलनाडु के लोग गौरव का अनुभव करते हैं।

तमिलनाडु के 'कुम्भकोणम्' जो कि बारह वर्षों में एक बार बड़ी धूम-धाम से मनाये जाने वाले 'महामकम' (महामेला) के लिए विश्व-प्रसिद्ध है, में सातवीं शदी में राजा रघुनाथ नायक द्वारा निर्मित श्रीरामस्वामी मंदिर सुविख्यात है जिसके बाहरी मण्डप के प्राचीरों पर चित्रित 'रामायण' के दृश्य आज भी जीवन्त और मनमोहक हैं। प्रस्तुत 'श्रीरामस्वामी' के मंदिर में प्रतिवर्ष चैत्र-मास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि के पूर्व के दस दिन और बाद के दस दिन 'श्री रामनवमी' महोत्व बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। तमिलनाडु में विशेष रूप से श्रीरामचन्द्रजी का मंदिर 'वडुवूर', चेन्नै आदि कई जगहों में है और प्रतिवर्ष 'श्रीरामनवमी' उत्सव भक्ति-श्रद्धा के साथ मनाया जाता है। भगवान महाविष्णु के मंदिरों में श्रीरामचन्द्रजी की एक अलग सन्निधि भी है।

तमिलनाडु में केवल मंदिरों में ही नहीं बल्कि अनेक स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा भी 'रामनवमी महोत्सव हर्षोल्लास, भक्ति-श्रद्धा के साथ बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है।' चेन्नै के वेंस्टमाम्बलम में सेवारत 'श्री रामसमाजम्-अयोध्या अश्वमेध महामण्डपम्' श्रीरामनवमी महोत्सव के लिए तमिलनाडु भर में विशेष रूप से सुप्रसिद्ध है। श्री कांची शंकरमठ के महापैरियवा पूज्य श्री चन्द्रशेखर सरस्वती स्वामी महाराज ने प्रस्तुत संस्था को नामकरण प्रदान कर अपने शुभाशीर्वाद भी दिये थे।

प्रतिवर्ष 'श्रीरामनवमी' महोत्सव को सनातन हिन्दू धर्म की परम्परा एवं परिपाटी के अनुसार वेदों एवं शास्त्रोक्त ढंग से मनाने के प्रधान उद्देश्य के साथ ही सन् 1954 में प्रस्तुत संस्था की स्थापना की गयी थी और यह तमिलनाडु सोसाइटी अधिनियम 1958 के अधीन पंजीकृत भी है। प्रस्तुत संस्था आध्यात्मिक सेवाओं के साथ-साथ सामाजिक सेवाएं भी कर रही है। प्रस्तुत संस्था प्रतिवर्ष 'श्रीरामनवमी' महोत्सव के दौरान प्रभु श्री रामजी के पादों पर अपनी विशिष्ट सोवेनियर प्रकाशित करती है। नित्यप्रति चतुर्वेद पारायण, श्रीमत् वाल्मीकि रामायण, मूल पारायण, अखण्ड श्रीराम नाम जप यज्ञ, श्रीमत्वाल्मीकि रामायण पर प्रतिदिन आध्यात्मिक प्रवचन प्रतिदिन श्री विष्णु सहस्त्रनाम पारायण, श्री सीताराम साम्राज्य पट्टाभिषेक, पानक पूजा श्रीराम षड़ाक्षरी होम, पुनर्वसु भजन, प्रतिदिन संगीत और सांस्कृतिक कार्यक्रम, कथा-कालक्षेप श्री सीता-विवाह, दिव्य नाम भजन और कीर्तन, ढोलोत्सव, उच्चवृत्ति भजन, विशेष पूजा-पाठ, अखण्ड भजन-कीर्तन, लक्षार्चना, विशेष अन्नदान आदि श्री रामनवमी महोत्सव के दौरान सम्पन्न होने वाले प्रमुख कार्य-कलाप हैं।

महाविष्णु के मंदिरों में 'पुनर्वसु' नक्षत्र के दिन श्रीरामचन्द्र मूर्ति का श्री मंजन, पूजा-अर्जना, भक्त कवि आकवारों द्वारा उद्गारित श्रीरामचन्द्रजी और 'रामायण' संबंधी पासुरों (गीतों) का सामूहिक पाठ तथा जुलूसों द्वारा 'श्री रामवमी' मनायी जाती है।

श्री रामचन्द्र मूर्ति के मंदिरों में और बड़ी-बड़ी स्वैच्छिक संस्थाओं में दस दिनों से लेकर 30-40 दिनों तक 'श्रीरामनवमी' महोत्सव भक्ति श्रद्धा के साथ मनाया जात ाहै। अंतिम दिन सीता-राम विवाहोत्सव मनाया जाता है तथा हनुमत् जयंती के साथ 'रामनवमी' उत्सव का समापन किया जाता है। श्री रामनवमी उत्सव के दौरान पानक, नीर-मोर (मट्ठा), वड़ा, दाल आदि का विनियोग किया जाता है। विशेष 'अन्नदान' विशिष्टि रूप से उल्लेखनीय है। हजारों की संख्या में दर्शक लोग 'श्रीरामनवमी' महोत्सव में प्रतिभाग लेते हैं। तमिलनाडु में खास तौर पर मदुरै, सेलम, शिवगंगा आदि जिलों में और विशेष रूप से चेन्नै महानगर में 'कम्बन ककगम्' की ओर से श्रीरामनवमी महोत्सव के दौरान कम्ब रामायण का पाठ किया जाता है, कम्ब रामायण पर तमिल विद्वानों द्वारा प्रवचन आयोजित किये जाते हैं।

तमिलनाडु में प्रचलित पट्टिमंदम् विश्व-प्रसिद्ध है जिसमें 'कम्बरामायण' के पात्रों और विशिष्ट घटनाओं पर आधारित विषयों पर पक्ष-विपक्ष के रूप में वाद-विवाद होता है और इसमें बड़े-बड़े तमिल विद्वान और विदुषियां और भाषणकर्ता प्रतिभाग लेते हैं। विषय के पक्ष में बोलने वालों

की एक टीम और विषय के विपक्ष में बोलने वालों की दूसरी टीम होती है। उनके तर्क वितर्क के आधार पर अंत में अध्यक्ष अपना निर्णय सुनाते हैं। 'पट्टिमंदमं' को देखने-सुनने के लिए हजारों की संख्या में दूर-दूर से लोग आते हैं। श्रीरामनवमी समारोह के दौरान कम्ब रामायण का 'पट्टिमन्दम्' भी तमिलनाडु की विशेषता है। ●

65, महालक्ष्मी अपार्टमेंट
सी-303, तीसरा तल्ला, 11 एवेन्यु,
अशोक नगर, चेन्नै-600083,
मो.-9176092616

जाना है भवपार

एक निर्धन विद्वान व्यक्ति चलते चलते पड़ोसी राज्य में पहुँचा। संयोग से उस दिन वहाँ हस्तिपटबंधन समारोह था जिसमें एक हाथी की सूंड में माला देकर नगर में घुमाया जाता था। वह जिसके गले में माला डाल देता था उसे 5 वर्ष के लिए वहां का राजा बना दिया जाता था। वह व्यक्ति भी समारोह देखने लगा। हाथी ने उसके ही गले में माला डाल दी। सभी ने जयजयकार करते हुए उसे 5 वर्ष के लिए वहां का राजा घोषित कर दिया।।

राजपुरोहित ने उसका राजतिलक किया और वहाँ के नियम बताते हुए कहा कि आपको केवल 5 वर्ष के लिए राजा बनाया जा रहा है। 5 वर्ष पूर्ण होते ही आपको मगरमच्छों व घड़ियालों से युक्त नदी में छोड़ दिया जाएगा। यदि आप में ताकत होगी तो आप उनका मुकाबला करके नदी के पार वाले गाँव में पहुँच सकते हो। आप को वापिस इस नगर में आने नहीं दिया जाएगा। वह निर्धन विद्वान व्यक्ति तो सिहर गया पर उसने सोचा कि अभी तो 5 वर्ष का समय है। कोई उपाय तो निकल ही जाएगा। उसने 5 वर्ष तक विद्वत्तापूर्वक राज्य किया। राज्य की संचालन प्रक्रिया को पूरे मनोयोग से निभाया और इस प्रकार केवल राज्य पर ही नहीं लोगों के दिलों पर भी राज करने लगा। जनता ने ऐसा प्रजावत्सल राजा कभी नहीं देखा था।

5 वर्ष पूर्ण हुए। नियमानुसार राजा को फिर से हाथी पर बैठाकर जुलूस निकाला गया। लोगों की आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई। नदी के तट पर पहुँच कर राजा हाथी से उतरा। राजपुरोहित ने कहा कि अब आप नदी पार करके दूसरी ओर जा सकते हैं। अश्रुपूरित विदाई समारोह के बीच उसने कहा कि मैं इस राज्य के नियमों का सम्मान करता हूँ। अब आप मुझे आज्ञा दें और हो सके तो इस निर्मम नियम में बदलाव करने के बारे में सोच विचार करें। जैसे ही राजा ने नदी की ओर कदम बढाए, लोगों ने अपनी सजल आँखों को उपर उठाया। जानते हो वहाँ ऐसा क्या था जिसे देखकर वे खुशी से नाचने लगे?

उस नदी पर इस पार से उस पार तक राजा के द्वारा बनवाया गया एक पुल था जिस पर राजा शांत भाव से चला जा रहा था, नदी के उस पार वाले सुंदर से गाँव की ओर।.....................।

क्या ऐसा ही कुछ हमारे साथ भी घटित नहीं हो रहा?

हमें भी कुछ समय के लिए श्वासों की सम्पत्ति देकर इस अमूल्य जीवन की बागडोर सौंपी गई है।

समय पूरा होते ही हमें यह राज्य छोड़ कर भवसागर के उस पार वाले लोक में जाना है जहां से हमें फिर से इस राज्य में आने की आज्ञा नहीं है।

यदि हमने धर्म ध्यान का पुल नहीं बनाया तो हम मगरमच्छों व घड़ियालों से युक्त नरकों में डाल दिए जाएंगे और उनका ग्रास बन जाएंगे।

और अगर हम शांत भाव से भवसागर के उस पार वाले लोक में जाना चाहते हैं तो अभी से वह पुल बनाने की शुरूआत कर देनी चाहिए क्योंकि आयु काल पूरा होने के बाद जाना तो निश्चित ही है।

लाहौर दरबार के अल्पज्ञात कवि माधोदास और उनकी पांडुलिपि रामचरित्र : एक अध्ययन

डॉ. सुनीता शर्मा

पंजाब के हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्यकाल को यदि दरबारी काल की संज्ञा दी जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि पंजाब में अठाहरवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी के पूर्वाध तक रचित समस्त साहित्य दरबारों की क्रोड़ में पला-बढ़ा हैं भारत में मुगल शासन की समाप्ति पर पंजाब में आठ रियासतें अस्तित्व में आती हैं और प्रत्येक रियासत का अपना सम्राट और अपनी नीति थी। इन रियासतों के शासक साहित्य प्रेमी होने के साथ-साथ स्वयं कवि एवं रचनाकार थे। इसलिए उन्होंने बहुत से साहित्य की रचना की और अपने आश्रय में रहने वाले कवियों से भी करवाईं। पंजाब में दरबारी काव्य की परंपरा का आरंभ गुरु गोबिन्द सिंह के विद्या दरबार से होता है। गुरु गोबिंद सिंह के विद्या दरबार के उद्देश्य के संदर्भ में डॉ. मनमोहन सहगल लिखते हैं- 'स्वयं कविता करने एवं अपने समकालीन कवियों, गुणियों, पंडितों को प्रश्रय देने में विशेष रूचि थी। बहु अधीत थे, इसलिए फारसी और संस्कृति की श्रेष्ठ रचनाओं से न केवल परिचित ही थे, बल्कि उस संकलित ज्ञान को अपने सिक्खों में प्रचारित करने को सदैव उत्सुक थे यही कारण था कि आनंदपुर साहिब में गुरु गद्दी पर आसीन होने के उपरांत दरबार सजाया गया तो स्वयं गुरु जी ने कवियों, विद्वानों को अपने दरबार में आमन्त्रित करने का प्रस्ताव किया। जैसे कि 'गुरु प्रताप सूरज' ग्रंथ की पंक्तियां संकेत करती हैं-

श्री मख ते तबि हुकुम बखाना। गुनी कवीशर पंडित नाना।
सभिहिंनि को हकारि ले आवहु। जहिं जहिं डेरे तहां सिधावहु।।'[1]

गुरु जी के दरबार में बावन कवि साहित्य रचना करते थे। गुरु दरबार से ही काव्य राज दरबारों की ओर मुड़ता है और इन दरबारों में पटियाला दरबार, नाभा दरबार, कपूरथला दरबार, जींद एवं संगरूर दरबार व लाहौर दरबार में कवियों को आश्रय प्राप्त हुआ और विपुल साहित्य रचना आकार लेती है। पटियाला दरबार, नाभा दरबार तथा जींद एवं संगरूर की स्थापना फूलवंश के वंशजों आला सिंह, हमीर सिंह तथा गजपति सिंह ने की जबकि कपूरथला दरबार के संस्थापक जस्सा सिंह आहलूवालिया थे और लाहौर दरबार की स्थापना महाराज रणजीत सिंह द्वारा की गई। फूलवंशी राजाओं द्वारा गुरु गोबिंद सिंह और उनके कवियों की रचनाओं को एकत्रित करने का कार्य किया गया। डॉ. हरमहेन्द्र सिंह बेदी का कथन है कि- 'पटियाला एवं जींद नरेश सिक्ख मतावलम्बी और गुरु भक्त थे। उन्होंने भी गुरु परंपरा से प्राप्त साहित्यिक सम्पदा को सुरक्षित रखने का सराहनीय कार्य किया। इन्होंने उच्चकोटि के विद्वानों तथा कलाकारों को प्रोत्साहन देकर नागरी एवं गुरुमुखी लिपि में

प्रचुरमात्रा में साहित्य सृजन कराया।'[2] चाहे यह दरबार आनन्दपुर गुरु दरबार की तरह धार्मिक नहीं थे फिर भी इनमें रीतिकालीन दरबारी काव्य के साथ-साथ भक्ति काव्य की रचना भी की जा रही थी। इसलिए इन दरबारों में विपुल मात्रा में कृष्णकाव्य और रामकाव्य लिखा गया। दरबारों में रचित यह पांडुलिपियां अब पटियाला, अमृतसर, चंडीगढ़, होशियारपुर के विभिन्न पुस्तकालयों व निजी संग्रहालयों में संग्रहित हैं। इन पांडुलिपियों में रामकाव्य संबंधी तीन सौ से भी अधिक पांडुलिपियां मिलती हैं। इन पांडुलिपिकारों की दृष्टि राम के उद्धारक रूप पर अधिक रही हैं क्योंकि मध्यकाल में पंजाब पर बार-बार होने वाले आक्रमणों तथा अत्याचारों से मुक्ति हेतु राम को कवियों ने दुष्ट संहारक वीर एवं परब्रह्म के रूप में चित्रित किया है। इस विषय में डॉ. मनमोहन सहगल लिखते हैं- 'अत्याचारी के दमन की प्रेरणा राम चरित्र का मूल थी - यही कारण था कि पंजाब का कवि कृष्ण-चरित की अपेक्षा रामचरित से अधिक प्रभावित था और राम के उदात्त जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं का काव्यात्मक प्रचार-प्रसार करने में सर्वग्र था।'[3] इसी परंपरा में लाहौर दरबार में माधोदास द्वारा रचित पांडुलिपि 'रामचरित्र' एक महत्वपूर्ण रचना है।

लाहौर दरबार की स्थापना महाराजा रणजीत सिंह और उसके उत्तराधिकारियों द्वारा 1799-1849 के बीच हुई। महाराज दलीप सिंह (सन् 1838-1893) महाराज रणजीत सिंह के सबसे छोटे पुत्र तथा सिक्ख साम्राज्य के अन्तिम शासक थे। इन्हें 1843 ईस्वी में पाँच वर्ष की आयु में माँ राणी जिन्दां के सरंक्षण में राज सिंहासन पर बिठाया गया।[4] महाराज दलीप सिंह विद्याप्रेमी थे इनके दरबार में कई कवियों को आश्रय मिला। इनमें से दो हिन्दी के विद्वान कवि भी थे - कवि प्रह्लाद और कवि माधोदास। इनकी पत्नी बांबा मिलर (1864-1887) क्रिश्चिन मिशनरी थी। दलीप सिंह के साथ विवाह होने पर यह महाराणी बांवा कहलायी।[5] महारानी बावा भी साहित्य व्यसनी थी। इसलिए वे कवियों के साथ विचार चर्चा भी करती थी और उसकी रूचि को ध्यान में रखकर भी साहित्य रचना की जा रही थी। रामचरित्र नामक इस पांडुलिपि की रचना भी महारानी बावा ब्यालदेली की प्रेरणा से ही हुई है।

रचना परिचय

'रामचरित्र' कवि माधोदास द्वारा लिखी गई रचना है। यह पांडुलिपि गुरु नानक देव विश्वविद्यालय के गुरु रामदास पुस्तकालय में पांडुलिपि संख्या 5099 पर सुरक्षित है। इस जिल्द में दो रचनाएं हैं- 'बैताल पचीसी' जो कवि प्रह्लाद रचित है और दूसरी 'राम चरित्र' माधोदास विरचित। पहली रचना पर 'संवत 1904 श्रावण वदि 14 शनिवासरे शुभ' लिखा गया है जबकि दूसरी रचना रामचरित पर कहीं भी समय का संकेत नहीं दिया है। इस पांडुलिपि की मोटाई 1.2 इंच है जबकि जिल्द का आकार 15 x 22 स.मी पृष्ठ 11.5 x 17 से.मी. हैं। देसी कागज पर काली स्याही से लिखा गया है। रचना पर एक तरफ संख्या अंकित है जिसमें 17 पृष्ठ अंकित हैं। रचना के अंत में बताया गया है कि यह रचना -'श्री महाराज दलीप सिंह पत्नी श्री राणी व्यालदेवी पीत्यै लिषेत' तथा 'सुभं भवतु च ब्यालदेवी आयुष्मान भव।' (माधोदास, पांडुलिपि, रामचरित्र, पृष्ठ संख्या - 17)

कवि माधोदास द्वारा लिखी इस रचना का आरंभ उों स्वस्ति श्री गणेशाय नमः।। राम चरित्र लीष्या।। राग धरासरी।।' से हुआ है तत्पश्चात् कवि नें महाराज दशरथ एवं अयोध्या नगरी के वैभव का वर्णन करते हुए राम जन्म का आशय, राम-सीता विवाह, राम - लक्ष्मण एवं सीता का वन प्रस्थान, पंचवटी निवास, सीता हरण, बालि वध, लंका प्रसंग व अंततः रावण वध व राम का राज्याभिषेक के साथ इसकी समाप्ति की है। राम कथा से संबंधित होते हुए भी इस कृति की कुछ अन्यतम विशेषताएं हैं जिन पर प्रकाश डाला जा रहा है:

वस्तुगत वैशिष्टय

वस्तु काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी आदि के

उस भाग को कहते हैं जिसमें मूल कथा या इतिवृत्त के साथ सम्बद्ध वे समस्त घटनाएं आ जाती हैं जिनसे मिलकर कथात्मक साहित्य विशेष की विषय वस्तु बनती है।'[6] प्रस्तुत कृति की वस्तु राम जीवन के विभिन्न पक्षों से संबंधित है जिसे कवि ने विभिन्न प्रसंगों से विशिष्टता प्रदान की है जिसके द्वारा आलोच्य कृति की रामकथा अन्य रचनाओं से विशिष्ट तथा अपनी मौलिक पहचान बनाती है। अतः कृति का रचनागत वैशिष्टय निम्नलिखित शीर्षकों में स्पष्ट किया जा रहा है:

राम को नायक और अवतार रूप में देखना

रामचरित्र के नायक राम हैं पर यह राम साधारण मानव न होकर मानवीय कृत्य करते हुए भी विष्णु के अवतार हैं। उक्त रचना में चार स्थलों पर राम के अवतारी रूप का वर्णन किया है यही नहीं श्री राम कई स्थानों पर वे अपने चतुर्भुज रूप के दर्शन भी देते हैं। जन्म से पूर्व राम कौशल्या को जब अपना चतुर्भुज रूप दिखाते हैं वह इस चतुर्भुज स्रप के दर्शन का कृतार्थ होती है पर वह बालरूप की कामना करती निम्नलिखित पंक्तियों में कवि ने लिखा है:

'चैत्रमास तिथ नवमी सुकल पक्ष सुहाया।।
कौसल्या को भए राम चतुरभुज रूप दिखाया।।
कौसल्या मुष ते यो कहे एक रूप प्रभु सहाइ।
तेरो बालक रूप षिलाय के अव तरो समुद्र संसार।'

(मा. रा. पृ. 3)

इसी प्रकार महर्षि विश्वमित्र ताड़का वध के पश्चात् जब अपने अस्त्र-शस्त्र राम को देते हैं तो उस समय भी राम उन्हें अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन देते हैं-

'रूप धर के सकल प्रसार भये दरसन दीना।'

(मा. रा. पृ. 13)

वन में राम जब सामान्य मानव की तरह राम कठिनाइयों का सामना करते हैं तो उस समय लक्ष्मण के उनके अवतार रूप में व्यक्त किए गये विचार भी कम महत्वपूर्ण नही है:

'लक्ष्मण त्रिण सेज पर पोढयो तीन लोक के ईस।
तेरे ही परसाद तें सुष पावे सुर तैंतीस।।'

(मा. रा. पृ. 15)

इन पंक्तियों में भी राम को सर्व शक्तिमान अवतार लक्षित किया गया है।

पंचवटी में जब सीता लक्ष्मण को स्वर्णमृग की मृगया के लिए गए राम की सहायता के लिए भेजना चाहती है तो लक्ष्मण कहते हैं कि राम कोई सामान्य मानव नहीं हैं वे तो पूर्ण ब्र्हम हैं:

'सुन सीआ तूं वांउरी ओ पूरन ब्र्हम अपार।
तीन लोक के नायक कौन सकत है मार।'

(मा. रा. पृ. 12)

मंदोदरी भी अपने पति रावण को राम के विष्णु अवतार का संकेत करके सीता को लौटाने के लिए कहती है और रावण भी प्रत्युतर में राम के विष्णु अवतार की पुष्टि करता है जैसे कि कवि ने लिखा है:

'विह्मु आइयो देह धर सुन हो कंत सुजान।
सुनहो मैं भी जान्यो विष्णु आयोदेह धर,
सीता प्रिथी ते उपजी।।' (मा. रा. पृ. 14)

रचना के अंत में स्वयं माता कौशल्या राम जन्म का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहती है:

'माता कुसल्या हरषया देषे राजा राम।।
जिह कारन अवतार लियो है करया सोई काम।।'

(मा. रा. पृ. 17)

अतः कवि ने उत्तर मध्यकाल में राम को एक ऐसे अवतार रूप में चित्रित किया है जिसने इस धरा के समस्त कष्टों को दूर करने के लिए जन्म लिया है।

संस्कारों का महात्म्य स्पष्ट करना

संस्कार से अभिप्राय है किसी वस्तु के रूप को बदल देना, उसे नया रूप दे देना। चरक ॠषि के अनुसार- 'संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते'7 अर्थात् संस्कार पहले से विद्यमान दुर्गुणों को हटाकर उनकी जगह सद्गुणों का आधान कर देने का नाम है।13 मानव जीवन की समग्र यात्रा सोलह संस्कारों से सम्पन्न होती है। उक्त रचना में कृतिकार ने यज्ञोपवीत, दीक्षांत, विवाह एवं मृत्यु संस्कार का ह्यदयग्राही वर्णन किया है। दशरथ द्वारा राम, भरत आदि चारों भाइयों के पांच वर्ष के होने पर उनका जनेऊ संस्कार किया गया और तत्पश्चात् कर पढ़ने के लिए गुरूकुल भेजा

गया। इन अवसरों पर ब्रह्मभोज करवाकर पंडितो एवं ब्रह्मणों को दक्षिणा भी दी गई। आलोच्य रचना में भी यज्ञोपवीत के अवसर पर राजा दशरथ ब्रह्मणों को भोजन करवाता है तथा दक्षिणा भी देते हैं जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है-

'पाँच बरस के जब भए जज्ञोपवीत पवाए।
ब्रह्म भोजन गुरु दक्षणा दीनी दशरथ राए।।'
(मा. रा. पृ. 1)

विवाह संस्कार मनुष्य जीवन का अति महत्त्वपूर्ण संस्कार है। विवाह के संदर्भ में मनुस्मृति में कहा गया हैः

'गुरूणामनुमतः स्नात्वा समावश्त्तो यक्षविधि।
उदेहत द्विजो भार्या सवर्णालि क्षन्विकर्म।।'[8]

अर्थात स्नातक गुरु की आज्ञा से समावर्तन संस्कार सम्पन्न कर सवर्ण कन्या से विवाह कर गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है और स्त्री-पुरुष संबंध को सामाजिक मान्यता प्रदान करता है। भारतीय समाज में विवाह को स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों में मर्यादा रखने वाली संस्था के रूप में माना जाता है। आलोच्य कृति में शास्त्र ज्ञान के पश्चात राम गुरु की आज्ञा से धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाते हैं और सीता से विवाह करवाकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते हैं। कवि ने विवाह के अवसर पर मंगल गायन, बारात आगमन, ससुर के द्वारा वर के चरण धोना, राम के हाथ में सीता का हाथ देना, विवाह के अवसर पर वधू को वर के पास बैठाकर गृहस्थ धर्म की शिक्षा देना, स्त्रियों द्वारा वधु को शिक्षा देना आदि कृत्यों का वर्णन किया जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट हैः

'चरन धोए राम के आसन पर बैठारा।
मिल के सभ नार उहा सीता को ल्याए।
सीता का कर पकड् के दीना राम के हाथ।
अब तू या दासी भई यही तुम्हारे नाथ।'
(मा. रा. पृ. 5)

इसके अतिरिक्त विवाह संबंधी अन्य रीतियों का वर्णन भी किया गया है। एक उदाहरण प्रस्तुत हैः

'भले महूरत समे राम की वेद रचाई
तहा बैठे वसिष्ठ सदा आनंद को सुकआई।
अग्न बीच भर जल हो भयो होम विचार।
जनक कहे न लागा गोत्राचार।।' (मा. रा. पृ. 5)

अतः विवाह संस्कार का मनोरम वर्णन रचना में हुआ है जिसमें पाठक खो जाता है और आनन्दित भी होता है।

अन्त्येष्टि संस्कार हिंदूओं का अंतिम संस्कार है। मृत्यु पश्चात जब शरीर का अग्निदाह किया जाता है उसे अन्त्येष्टि संस्कार कहा जाता है। ऐसा विश्वास किया जाता है जिस व्यक्ति का यह संस्कार उचित रूप से पूर्ण होता है उसका परलोक संवर जाता है। मृत्यु पश्चात् अन्त्येष्टि क्रिया पुत्र के द्वारा सम्पन्न की जाती है व श्राद्ध कर्म किया जाता है तथा पिंडदान दिया जाता है। प्रस्तुत रचना में दशरथ की मृत्यु पर भरत द्वारा अंतिम संस्कार के कृत्य को शास्त्रानुसार सम्पन्न किया गया है जैसे कि इन पंक्तियों से पता चलता हैः

'राजा तेल ते काढियो तुरत स्नान कराया चंदन चिषा बनाय।
वेगे दाह जो किजिओ क्रिया करम सभ कराय।।'
(मा. रा. पृ. 9)

चित्रकूट में राम भी जब अपने पिता दशरथ की मृत्यु का समाचार सुनते हैं तो वह भी नदी किनारे पिंडदान करते हैं जैसेः

'राजा मुआ सुनाइओ सोक भयो राम राए।
तब ही नदी के तीर में पिंड दिए रघुराए।।'
(मा. रा. पृ. 10)

इस प्रकार संस्कारों से गुंथी यह रचना तत्कालीन सामाजिक स्थिति पर भी प्रकाश डालती है।

युवाओं को महत्व देना

प्रस्तुत रचना में कवि माधोदास ने युवा चरित्रों को विशेष महत्व दिया है। भारत के सुखद भविष्य के प्रति चिंतित कवि ने वीर अंगद, नल, हनुमान के शौर्य और पराक्रम का वर्णन किया है- अंगद के निर्देशन में हनुमान, जामवंत तथा वानर सेना सीता को ढूंढने निकलती है। अंगद हनुमान को सीता को

खबर लाने के लिए भेजता है और जब हनुमान सीता की खबर लेकर आते हैं तो सुग्रीव फिर अंगद को बुलाकर आगे की योजना तय करते हैं जैसेः-

'सुग्रीव को भई षवर रावन का मधुबाग लुटाया।
मन में भया संतोष अंगद तुरंत बुलाया।।'

(मा. रा. पृ. 15)

हनुमान का शौर्य तथा नल की अभियन्ता शक्ति मिलकर रावण की कुचालों का उत्तर देते हैं। नल पुल बनाने का कार्य करता है। वह वानरों की सहायता से सौ योजन लम्बा और दस योजन चौड़े पुल का निर्माण करता है जैसे कवि ने लिखा है-

'नल ने सेत वाध्यो षेल करी रघुराए।
सौ योजन लंबा कीआ औ दस योजन चौराह।।
हनुमान के कृत्य तो सभी भलीभांति जानते है।'

(मा. रा. पृ. 16)

इस रचना में अंगद हनुमान तथा लक्ष्मण की वीरता पर प्रकाश डालते हुए कवि ने बताया है कि राम सारी युद्ध नीति उन्हीं के संग बनाते हैं। रावण लक्ष्मण पर सेंती चलाकर महल में चला जाता है उसे महल से युद्धक्षेत्र में लाने के लिए अंगद मंदोदरी (रावण की पत्नी) को पकड़कर अपने खेमे में ले आता है। यह समस्त कार्य योजना राम की देख-रेख में यह युवा ही सम्पन्न करते हैं।

नवीन प्रसंगों की उद्भावना

प्रस्तुत रचना में कवि माधोदास ने कुछ नये और अपने ढंग से प्रसंग जोड़े हैं जो पाठकों के मन में उत्सुकता जगाने के साथ-साथ कई प्रश्नों को भी जन्म देते हैं। इनमें राम-जानकी का विवाह, परशुराम आगमन, राज्याभिषेक, दशरथ-मृत्यु, सीता अपहरण, अंगद वीरता, मेघनाथ-चातुर्य, रावण मृत्यु आदि विशेष रूप से महत्वपूर्ण प्रसंग हैं जिनका वर्णन निम्नलिखित है-

विवाह-प्रसंग

राम कथा संबंधी बहुत सी रचनाओं में महर्षि विश्वमित्र मिथिलापुरी में सीता स्वयंवर में आशीर्वाद देने हेतु राम-लक्ष्मण सहित मिथिला पहुँचते हैं पर इस कृति में महर्षि विश्वमित्र राम-लक्ष्मण को अस्त्र-शस्त्रज्ञान देने के पश्चात् सीता स्वयंवर के लिए नहीं बल्कि मिथिला पुरी में शिव का प्राचीन धनुष दिखाने लेकर जाते हैं जैसे कि निम्नलिखित पंक्तियों से पता चलता है-

'विस्वमित्र कहे वचन चलो राम मिथुला जाहे।
जहां महेस का धनष ताका जाय दरसन पाए।'

(मा. रा. पृ. 3)

मिथिला पहुँचकर ऋषि राजा जनक को उनका परिचय देते हुए कहते हैं कि राम-लक्ष्मण तुम्हारे यहां धनुष को देखने एवं उस पर प्रत्यंचा चढ़ाने आए हैं तो जनक का उत्तर था कि यदि यह धनुष तोड़ देते हैं तो मैं सीता का विवाह इनके साथ कर दूंगा जैसे कि निम्नलिखित संवाद से स्पष्ट है-

'तेरे घर आइओ सुन्यो महादेव को चांप
ताके चाढ़न कारने रघुनाथ आयो हैं आप।'
तब राजा जनक कहता हैः
'रिष जी जे यह घनष चढाय तो सीया दओं जाइ को।'

(मा. रा. पृ. 4)

अतः सीता द्वारा धनुष भंग के पश्चात् वरमाला पहनाने का प्रसंग इसमें नहीं है। धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने के पश्चात् राजा जनक स्वयं पुरोहित सहित अयोध्या जाकर दशरथ को लग्न पत्रिका देकर विवाह के लिए आमंत्रित करते हैंः जैसे 'परोहित सहित राजा जनक आयो दशरथ के।' जनक का प्रस्ताव मानकर राजा दशरथ बारात सहित जनकपुरी पहुँचकर अपने चारों बेटों की शादियां करते हैं।

परशुराम-आगमन प्रसंग

रामायण, मानस तथा रामकाव्य की कई रचनाओं में परशुराम धनुष भंग के ठीक साथ ही स्वयंवर सभा में आ जाते हैं। वहां पर लक्ष्मण के साथ उनका वाद-विवाद होता है जिससे लक्ष्मण के चरित्र पर भी प्रकाश पड़ता है पर 'रामचरित्र' में सीता-राम विवाह सम्पन्न हो जाने के पश्चात् राजा जनक जब सीता की विदाई के पश्चात् अपने महल में लौट आते हैं तो अयोध्या के मार्ग में परशुराम

प्रकट होते हैं जिन्हें देखकर राजा दशरथ भयभीत हो जाते हैं वहां मार्ग में राम परशुराम का संवाद होता है। उदाहरण प्रस्तुत है-

'तब ही निकस्यो आय परसराम रिष वीरा।
छत्री सबे डरन छूट गयो दशरथ को धीरा।
अब तुम जान न पाय हौ मेरे गुरू को धनष तुड़ाए।
कैसे घर को जाय हों मेरे संग लर ना आउ।।'

(मा. रा. पृ. 5)

राम राज्याभिषेक पर नारद आगमन

कवि ने इस घटना पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि राजा दशरथ राजगुरु ऋषि वसिष्ठ के साथ मंत्रणा कर जब राम के राज्याभिषेक की घोषणा करते हैं तो स्वर्ग में रावण को लेकर देवता चिंतित हो जाते हैं वे सभी नारद के साथ सभा करके उन्हें राम के पास भिजवाते हैं। राम स्वयं नारद से कहते हैं कि वे देवताओं की रक्षा करना उनका उद्देश्य है इसलिए वे राजपाट नहीं लेंगे और राक्षसों के संदर्भ में नारद से विचार-विमर्श करते हैं। अतः कैकेयी द्वारा रचा गया घटनाक्रम तो केवल निमित्त बनकर रह जाता है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है-

'तब नारद मुख ते कहा कहा, देवते विनती कीनी।
अब क्या करो बिलंव रावने बहु दुख दीनी।
तब रघुपत मुखतै यों कह्यो राज में लेओ नाहीं।
जो तुमसो कियो विचार सोई मेरे मन माही।।'

(मा. रा. पृ. 6)

अतः नारद की प्रेरणा और विचार-विमर्श से राम पहले ही राक्षसों के वध की योजना बना चुके थे।

दशरथ-मृत्यु प्रसंग

रामकाव्य की लगभग सभी रचनाओं में राजा दशरथ कैकयी के महल से ही राम को वन भेज देते हैं और फिर वहीं उनका प्राणान्त होता है परन्तु इस रचना में राम वन प्रस्थान के पश्चात् राजा दशरथ भी कैकेयी का महल छोड़कर कौसल्या के महल में आ जाते हैं। वे रानी कौसल्या को इस घटना से भी परिचित करवाते हैं कि कैसे उन्होंने गल्ती से हाथी के स्थान पर जल भरते हुए युवक पर बाण चला दिया और उसके माता-पिता द्वारा दिए गये शाप की चर्चा भी वे रानी कौशल्या से करते हैं। उसके बाद राजा दशरथ आँखें मूंदकर चुप हो जाते हैं कौसल्या उन्हें सोया हुआ जानकर सारी रात बुलाती नहीं है। दूसरे दिन पता चलता है कि राजा दशरथ का प्राणान्त हो चुका है जैसे कि निम्नलिखित पंक्तियों से पता चलता है:

'कैके का ग्रिह तज्यो कोसल्या के आयो।
रामचंद का कियो सोक राजे अत दुषपायो।
बीती रेन जब दिन चढ़यो कामदार रहे षडोय।
कोसल्या मुष उघारयो राजा म्रितक होय।'

(मा. रा. पृ.)

सीता-अपहरण प्रसंग

सीता अपहरण घटना में भी कवि ने कल्पना को आधार बनाया है। मृगया में स्वर्ण हिरण को बाण लगने पर हिरण रूपधारी मारीच जब राम की आवाज़ में लक्ष्मण को पुकारता है तो सीता लक्ष्मण को रघुनाथ की सहायता में जाने के लिए प्रेरित करती है उस समय लक्ष्मण कोई रेखा नहीं खींचते वे पशु-पक्षियों को इस बात का साक्षी बनाते हैं कि वो स्वयं दोषी नहीं है सीता के कहने पर ही जा रहे हैं-

'लछमन उठ चल्यो राम के ढूंढन ताई।
पसु पंछी तुम सुनो दोस हमको नाहीं।'

(मा. रा. पृ. 11)

उधर रावण ब्रह्मचारी के भेष में नारायण का उच्चारण करता हुआ जब झोंपड़ी के द्वारा पर आता है तो सीता उसे ईश्वर भक्त मानकर आसन देती है और खाने के लिए कंदमूल फल देती है और जब वह सीता पर कुदृष्टि डालता है तो वह ललकार कर क्रोध से कहती है-

'सुन हो मूरष मुगध गुआर एसी द्रिष्ट न कीजे
आवे मेरो पीआ लोहू तेरा पीजे।।'

(मा. रा. पृ. 12)

अंगद-प्रसंग

बालि पुत्र अंगद एक युवा वीर ही नहीं बल्कि एक अच्छा प्रबन्धक भी है। वह एक सुदृढ़ योजना

के अंतर्गत हर कार्य में आगे बढ़ता है। प्रस्तुत रचना में वह हर कदम पर आगे बढ़कर राम की सहायता करता है। लंका तक पहुँचने पर भी राम युद्ध के पक्ष में नहीं है इसलिए एक बार वे अंगद को रावण के पास भेजते हैं। अंगद रावण को समझाने का प्रयास करता है पर जब वह नहीं मानता तो वह उसका मुकुट गिरा देता है और फिर रावण के मुकुट सहित शिविर में वापिस लौटता है जैसे-

'क्रोध कियो रावनें नेत्र किए है लाल।
अंगद मारी लात की मुकट ले आयो तत्काल।'

(मा. रा. पृ. 15)

राम रावण युद्ध में, अंगद-मेघनाद के बीच भयंकर युद्ध चलता है अंगद मेघनाद को उठाकर घूमाकर फेंकता है वह सीधा लंका जाकर गिरता है। इससे भी अंगद के शक्ति और वीरता का पता चलता है जैसे-

'अंगद मेघ घुमटाइयों परयो लंका जाय।'

(मा. रा. पृ. 15)

इस प्रकार अंगद युद्ध में छिपे हुए रावण को बाहर लाने के लिए लंका जाकर रावण की पत्नी मंदोदरी को पकड़कर राम के शिविर में ले आता है। इन सबके द्वारा अंगद की वीरता, चातुर्य एवं साहसी होने का पता चलता है।

मेघनाद प्रसंग

मेघनाद रावण का पुत्र और बड़ा बलशाली योद्धा है। अंगद द्वारा उसे लंका में फेंके जाने पर वह तप करके अदृश्य रथ की प्राप्ति करके छद्म युद्ध करता है और इन्द्रजीत होने पर भी अंततः लक्ष्मण के हाथों मृत्यु को प्राप्त होता है जैसे कि इन पंक्तियों में स्पष्ट है-

'क्रोध कियो मेघनाद हवने बैठयो जाय।
अग्न भयो प्रसीन प्रकट होके दरसन दीना।
रथ दियो है काठ इन्द्रजीत असवारी कीनी।
अंतरिक्ष होय अद्रिष्ट कहूं न आए।।'

(मा. रा. पृ. 15)

रामचरित्र संबंधी अन्य कृतियों मेघनाथ कहीं मायावी सीता की चाल नहीं चलता जैसे कि इस कृति में बताया है। इस रचना में मेघनाथ राम-लक्ष्मण को युद्ध में हतोत्साहित करने के लिए माया की सीता बनाकर उसकी गर्दन काटकर राम के समक्ष फेंकता है-

'कपटी अधम निसाचर मन में इक कुबुध विचारी
माया की सीता कीनी ताकी मुंडी काट डाली।।'

(मा. रा. पृ. 16)

और राम क्रोधित होकर लक्ष्मण को उसके वध की आज्ञा देते हैं और लक्ष्मण निरंतर युद्ध करके इन्द्रजीत का वध करते हैं- 'तीन दिवस के युद्ध में मारयो इन्द्रजीत लछमन ने।' (मा. रा. पृ. 16)

लक्ष्मण शक्ति प्रसंग

राम परंपरा संबंधी सभी कृतियों में मेघनाद लक्ष्मण पर शक्ति चलाता है जिससे लक्ष्मण मूर्छित हो जाता है और फिर हनुमान द्वारा लाई गई संजीवनी से पुनः स्वास्थ्य प्राप्त कर लक्ष्मण मेघनाद का वध करता है। इस रचना में लक्ष्मण मेघनाद का वध तो करता है पर मेघनाद कहीं भी लक्ष्मण पर शक्ति नहीं चलाता। यह कार्य रावण द्वारा किया जाता है। इस कृति में इन्द्रजीत (मेघनाद) की मृत्यु पर रावण क्रोधित होता है और वह लक्ष्मण को खत्म करने के लिए शक्ति का प्रयोग करता है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है-

'सेंधी छोड़ी रावने लागी लक्षण आय।
बाण छूटे रघुनाथ के रावण भाग्या जाय।'

(मा. रा. पृ. 16)

इसके पश्चात् रावण अपने महलों में लौट जाता है।

रावण वध प्रसंग

प्रस्तुत रचना में रावण को एक वीर योद्धा तो बताया है पर वह अपने कुल के वीर योद्धाओं की मृत्यु के पश्चात् लक्ष्मण पर शक्ति चलाकर अपने महल में भागकर छुप जाता है। उसको महल से निकाल कर युद्ध क्षेत्र में लाने के लिए अंगद उसकी पत्नी मंदोदरी को लंका से राम के शिविर में ले आता है। रावण यह समाचार सुनकर मंदोदरी को छुड़वाने हेतु राम के सम्मुख आता है और राम एक ही बाण से उसका वध कर देते हैं जैसे-

'अंगद पकर मंदोदरी आनी तब उठयो अभागा।
क्रोध कियो है रावणे क्रोध कर लरने को चल्यो।।
मनमुष राम कयो रघुनाथ वान इक मारयो परयो मृतक होय।
मारे हे दस बदन सभ देवो करे जेकार।'

(मा. रा. पृ. 16)

इस प्रकार रावण बिना किसी कठिनाई एक बाण से ही मारा जाता है। राम उसके वध के लिए विभीषण से उसकी मृत्यु के रहस्य के विषय में नहीं पूछते हैं जबकि अन्य कृतियों राम को रावण वध के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ता है।

परित्यक्त एवं परिवर्तित प्रसंग

प्रस्तुत रचना में कुछ ऐसे प्रसंग भी है जिनको कवि ने कम महत्वपूर्ण समझते हुए उन पर लेखनी नहीं चलाई है जैसे - 'नाविक प्रसंग', 'अनुसूया प्रसंग', 'शबरी प्रसंग' आदि और कुछ ऐसे प्रसंग भी हैं जिन्हें सामान्य रूप से चित्रित करते हुए किसी का नाम विशेष न लेते हुए कथा का विकास किया है जैसे वन में जाते समय सुमन्त के लौटने पर राम-लक्ष्मण सीता किसी ऋषि के यहां रात तो ठहरते हैं और फिर अगले दिन चित्रकूट की ओर प्रस्थान करते हैं पर वो किस ऋषि के पास रुकते हैं ऐसी कोई सूचना कवि ने नहीं दी है। जैसे कि रचना का उदाहरण बताता है-

'नमस्कार कियो राम जी बैठे रिष के पास।
उहा रेन गुजार कर चित्रकूट कियो वास।।'

(मा. रा. पृ. 10)

इसी प्रकार रामचरित मानस के अध्ययन से पता चलता है कि चित्रकूट छोड़कर राम सुतीक्ष्ण ऋषि के मार्ग दर्शन में अगस्त्य ऋषि के आश्रम में पहुँचते हैं पर इस कृति के अनुसार चित्रकूट से निकलकर मार्ग में तीस राक्षसों का वध करते हुए राम स्वयं ही अगस्त्य ऋषि के पास पहुँचते हैं जैसे-

'चित्रकूट से उठ चले राम आगे को वर धेत।
ह्त्या मिल्यो इक राक्षस षाष मुँह में मुरदे।
तीस राक्षस को छेद के अगस्त के आश्रम आए।
राम चरण वंदे अगस्त के रिष आसन दियो बछाय।।'

(मा. रा. पृ. 10)

अन्य रचनाओं में सीता हरण के पश्चात् जटायु की अन्त्येष्टि कर प्रभु राम शबरी आश्रम जाते है। वहाँ से मार्गदर्शन पाकर पम्पासुर में हनुमान से मिलकर सुग्रीव तक पहुंचते हैं पर 'रामचरित्र' नामक इस रचना में जटायु की अन्त्येष्टि पर्यन्त राम अभ्यानक वन में एक राक्षस का वध करते हैं और वह राक्षस ही उन्हें सुग्रीव से मैत्री करने की प्रेरणा देता है जैसे कि इन पंक्तियों में स्पष्ट है-

'अभ्यानक वन में आए तहां इक राक्षस मारयो।
ताहू भेद बताया सुग्रीव सों मैत्री कर आ।'

(मा. रा. पृ. 12)

आलोच्य कृति में जब हनुमान सीता का पता लगाकर वापिस लौटते हैं तो समुद्र के किनारे अंगद साथियों सहित हनुमान का स्वागत कर उनकी स्तुति भी करते है तत्पश्चात् सभी वानरों सहित जाकर हनुमान आगमन की सूचना सुग्रीव को देते हैं जबकि अन्य कृतियों में सुग्रीव सहित राम समुद्र किनारे ही लंका से लौटते हुए हनुमान से मिलते हैं आलोच्य रचना का उदहारण प्रस्तुत है-

विशिष्ट उद्देश्य

इस रचना के माध्यम से कवि ने कुछ विशेष बिंदुओं पर प्रकाश डाला है जो पाठकों को प्रभावित करते हैं और उन्हें रचनाकार के उद्देश्य से परिचित भी करवाते हैं:

रचनाकार का मुख्य उद्देश्य महारानी बांबादेवी को भारतीय संस्कृति के उदात चरित्र मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के औदात्य से परिचित करवाना तथा राम के माध्यम से राजा के गुणों पर प्रकाश डालना है। इसके अतिरिक्त रचना के द्वारा कवि इस बात पर प्रकाश डालना चाहता है कि राज्य के युवाओं के ह्मदय में देशप्रेम उत्पन्न करने में राजा की महत्वपूर्ण भूमिका है। उसे युवाओं का निर्देशन करने के साथ-साथ उन्हें युद्ध आदि में भाग लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए जिस प्रकार राम के मार्गदर्शन में सारे

युवा एवं वानर सेना युद्ध की आग में कूद पड़ते हैं। कवि का मानना यह भी है कि कोई भी राज्य तभी उन्नति कर सकता है जब राजा का प्रजा पर और प्रजा का राजा पर पूर्ण विश्वास हो।

आलोच्य रचना इतिहासकारी का भी एक सशक्त उदाहरण है। इसके माध्यम से कवि ने महाराज दलीप सिंह के राज्य व उसकी राजनीति पर भी प्रकाश डाला है। पौराणिक विषय को लेकर रामकथा के माध्यम से वर्तमान स्थितियों पर प्रकाश डालते हुए कवि ने युवावर्ग को महत्व दिया है। कवि ने यह संदेश भी दिया है कि यदि कोई युवा समस्या का हल खोज लेता है अथवा आगे बढ़कर देश के लिए कुछ करता है तो राजा को उसका पूर्ण सम्मान करना चाहिए जैसे हनुमान सीता की खोज लेकर लौटता है तो अंगद, वानर सेना, सुग्रीव व स्वयं राम उसकी स्तुति एवं सम्मान करते हैं। शव को सुरक्षित रखने के लिए कवि ने वैज्ञानिक विधि पर प्रकाश डाला है कि यदि शव को तेल में रख दिया जाए तो शव विकृत नहीं होता। कृति में दशरथ की मृत्यु के पश्चात् जब भरत के ननिहाल से आने की प्रतीक्षा की जाती है ताकि वह अपने मृतक पिता के अंतिम कृत्य सम्पूर्ण कर सके और उसके लौटने तक कहीं शव क्षत-विक्षत न हो जाए उसकी सुरक्षा हेतु उसे तेल में डाल दिया जाता है जैसे कि-

'नर नारी सभ लोक-अयोध्या मोह करें
राजा तेल मौ डालया।।' (मा. रा. पृ. 9)

'रामचरित्र' नामक इस रचना में कवि ने एक सशक्त नारी का चित्रण किया है जो पग-पग पर पुरुष को कुराह पर चलने से रोकती है। भिक्षा मांगने आया रावण जब सीता पर कुदृष्टि डालता है तो वह उसे ललकारते है और अशोक वाटिका में भी रावण जब सीता से अपनी बात मनवाने का प्रयास करता है तो उस समय भी सीता उसे दुत्कारते हुई कहती है-

'सुन रे अधम सठ पापी हत्यारे।
आवेगो मेरो पिया काटेगा दससीस तिहारा।।'
(मा. रा. पृ. 13)

रावण की पत्नी मंदोदरी भी रावण को समझाते हुए सीता को लौटाने के लिए कहती है-

'सुन हो रावन भरता मदोदरी अरज करत है आधासने बैठाया
आदर कियो भरते सीता लेकर जाय मिलो छाड़ दे ओ भगवान।।'
(मा. रा. पृ.14)

कौशल्या तथा कैकयी को भी सशक्त नारी के रूप में चित्रित किया है।

प्रस्तुत रचना में कवि ने भारतीय मानसिकता और परम्परा के आधार पर देवताओं के प्रति समाज की आस्था का चित्रण किया है। जैसे संतान प्राप्ति हेतु हवन में से अग्नि पुरुष का अविर्भाव, मेघनाथ की उपासना से प्रसन्न होकर अग्निदेव का प्राकट्य एवं मेघनाथ को अजेयरथ प्रदान करना, तथा युद्ध उपरांत इन्द्रदेव का प्रकट होना और राम से मुँह मांगा वरदान मांगने के लिए कहना, ब्र्हमा का रावण को वरदान देना, शिव की स्तुति करना आदि ऐसे अवसर कवि ने निकाल लिए हैं जिसमें नायक तथा अन्य पात्र देवताओं के प्रति श्रद्धा रखते हैं। उदाहरण प्रस्तुत है-

'क्रोध कियो मेघनाद हवने बैठयो जाय।
अग्न भयो प्रसीद प्रकट होके दरसन दीना।'
(मा. रा. पृ. 15)

तथा

'इन्द्र आय के यों कहे कछु मांगो हो जु होय प्रसन।
रघुपत मुष ते यो कह्यो मूंए वादर सभ जीन।।'
(मा. रा. पृ. 16)

<u>भाषागत वैशिष्टय :</u>

भाषा भावों की अनुचरी व अभिव्यक्ति का साधन है। विवेच्य कृति की भाषा मूलतः ब्रज है परंतु पंजाब प्रांत की पंजाबी का प्रभाव इस पर बहुलता से मिलता है। यद्यदि कवि ने ब्रजभाषा और देवनागरी लिपि का ही प्रयोग किया है फिर भी पंजाबी शब्द तथा गुरुमुखी लिपि भी साथ-साथ चलती है। कुछ विशेष वर्णो की संरचना के लिए कवि ने देवनागरी के स्थान पर गुरुमुखी लिपि को ही अपनाया

है यथा - **उ** के लिए **उ** , **ख** के लिए **घ** , **ड** के लिए **ड, श** के लिए **ष, य** के स्थान पर **ज**। पंजाबी के अतिरिक्त संस्कृत के तत्सम् तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग भी रचना में मिलता है तत्सम शब्दों में - भृकुटि, पूर्णब्र्हम, आयुष्मान, संपूर्ण शब्दों में - **कंत, सुरग, बांदर, तुधविन, दाज, कुशल्या कैकै** आदि रचना को पढ़ते समय गुरुमुखी के वर्ण प्रयोग से प्रसंग और भी सुंदर बन पड़ा है जैसे कि प्रस्तुत उदाहरण से पता चलता है -

'प्रभु जी तुध बिन मेरो कौन है बिन देषे पलक न जीओ
सुष दुष सभ सहो तैरा कित विरहा न सहो।'

(मा. रा. पृ. 8)

वानर सेना के लिए बांदर, बंदरे आदि शब्दों का प्रयोग भी रचना का पंजाबी सौदंर्य बढ़ाता है। जैसे-

वनचर भए हिरान वंदर जोधे बलकारी।
नल ने सेत वाध्यो षेल करी रघुराए।।'

(मा. रा. पृ. 13)

महाराज दलीप सिंह के समय तोपों और बंदूकों से युद्ध किए जाते थे इसलिए कवि ने मारने के अथवा वध करने के स्थान पर छेदना शब्द का प्रयोग किया है जैसे कि निम्नलिखित उदाहरणों से पता चलता है-

हनुमान मुष तें कह्यो प्रभुजी अब करो तियारी।
इक पल ढील न करों छेदो रावन अहंकारी।।

(मा. रा. पृ. 13)

तथा

'सुग्रीव मिल्यों हे घाय राम सो मैत्री कीनी।
इस वालि को छेद तोहे राजधानी दीनी।।'

(मा. रा. पृ. 12)

शैली की दृष्टि से भी यह रचना विशेष महत्व रखती है। क्योंकि कवि ने यह कृति ब्यालदेवी के लिखी है इसलिए सारी कथा ब्यास शैली में कहते हुए यथास्थान वर्णनात्मक और संवाद शैली का प्रयोग किया है। शैली में चित्रात्मकता है क्योंकि सारी घटनाओं के दृश्य श्रोता एवं पाठकों के नेत्रों के समक्ष लहरा उठते हैं। अतः रचना में पंजाबीयत का रंग गहरा है पढ़ते हुए लगता है जैसे ब्रज पंजाबी की की मिश्रित रचना का अध्ययन किया जा रहा है। यह शैलीगत की विशिष्टता है कि हिन्दी का पाठक हो अथवा पंजाबी का दोनों के लिए यह रचना सुगम बन पड़ी है। अतः माधोदास विरचित 'राम चरित्र' रामकाव्य धारा की एक ऐसी सशक्त रचना है जिसमें राम को एक वीर, शीलवान, आस्थावान, परदुखकातर, लोकरंजक व संत उद्धारक, अन्याय का प्रतिकार करने वाला दिखाया गया है। उन्हें समस्त जनसमुदाय के साथ आगे बढ़ते हुए दर्शाया गया है। कवि ने चाहे कृति की रचना महारनी बांवा (व्यालदेवी) को राम के महात्म्य से परिचित करवाने के लिए आशीर्वाद स्वरूप की पर इसमें इतिहास एवं काल के सभी पक्ष इतनी सशक्ता से उभरे हैं कि रामावतार का उद्देश्य, राम का चतुरभुज रूप तथा राम द्वारा सभी का मार्गदर्शन करना और छोटे-बड़े सभी की इच्छाओं की पूर्ति करते हुए राजा रूप में राज्य करना आदि पर प्रकाश डाला गया है। कवि ने राम के भव्य स्वरूप के द्वारा जनमानस को प्रभावित एवं प्रेरित किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मनमोहन सहगल, पंजाब का हिन्दी साहित्य, पटियालाः लीना पब्लिशर्ज़, 1934, पृ. 62.
2. हरमहेन्द्र सिंह बेदी एवं कुलविंदर कौर, पंजाब के हिन्दसी साहित्य का इतिहास, दिल्लीः निर्मल पब्लिकेशनस, 2003, पृ. 116.
3. मनमोहन सहगल, हिन्दी रामकाव्य का सांस्कृतिक अध्ययन, दिल्लीः पीयूष प्रकाशन, 1998, पृ. 51.
4. गूगल.कॉम
5. विकीपीडिया
6. हिन्दी साहित्य कोश, संपा. धीरेन्द्र वर्मा, वाराणसीः ज्ञानमंडल लिमिटेड, 1985, पृ. 159.
7. संस्कार चन्द्रिका, व्याख्याकार, डॉ. सत्यव्रत सिद्धांतालंकार, दिल्लीः विजय कृष्ण लखनपाल, 2000, पृ. 22.
8. मनुस्मृति, व्याख्याकार, रामेश्वरभट्ट, दिल्लीः चौखंबा संस्कृत, प्रतिष्ठान, 1985, श्लोक संख्या, 314.

●

सीनियर असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी-विभाग
गुरू नानक देव यूनिवर्सिटी, अमृतसर
ईमेल- sunitasharma.gndu@gmail.com

ऋग्वेद, बाइबिल और कुरान में सृष्टि-प्रक्रिया एवं सृष्टि-पूर्व की स्थिति

डॉ. गोपाल शर्मा

यह दृश्यमान जगत्, जिसे सृष्टि कहते हैं। यह सृष्टि कैसे बनी? इस सृष्टि से पहले क्या था? यह सृष्टि कार्य है तो इसके कारण के रुप में क्या या कौन विद्यमान था। जो विद्यमान था, उसका भी कोई कारण था या वह कारण ही अंतिम अवस्था थी। यह सृष्टि और उसका कारण सदैव एक रहस्य रहा है। यह रहस्य एक प्याज की तरह का है, जिसकी पर्ते तो दिखाई देती हैं, उघड़ती भी हैं। परत-दर-परत उतारते-उघाड़ते चले जाते हैं, परंतु कुछ भी नहीं मिलता है। इस दिखाई देने वाले कार्य रुप प्याज का कोई कारण रुप बीज अवश्य है। ठीक, यह सृष्टि भी इसी तरह की है। सृष्टि के इस रहस्य को जानने के लिए ऋषि, मुनि, ज्ञानी लोगों ने सदैव प्रयत्न किये हैं। विज्ञान ने अपने हाथ आजमाएं, परंतु तथ्य एवं ठोस रुप में कुछ भी हाथ नहीं लगा। इस विषय को समझने और प्रतिपादित करने की श्रुत, स्मृति, पौराणिक, षड-दर्शन के अलावा नास्तिकों सहित अनेक दार्शनिक विचारकों की लम्बी परंपरा रही। विश्व साहित्य के प्राचीनतम ग्रंथ वेद एवं विश्व के दो अन्य मुख्य ग्रंथ बाइबिल एवं कुरान में सृष्टि एवं उसके पूर्व की स्थिति को देखने एवं यहां प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। स्पष्ट करना उचित समझता हूं कि मैंने इन ग्रंथों में सिर्फ यह देखने और जानने का प्रयास किया है कि ये ग्रंथ सृष्टि के बारे में क्या कहते हैं।

सृष्टि-उत्पत्ति के संबंध में ऋग्वेद के सूक्त महत्वपूर्ण हैं, जिनमें नासदीयसूक्त (10.129), पुरुषसूक्त (10.90), हिरण्यगर्भसूक्त (10.121), अस्य वामीयसूक्त (10.72) हैं। इनमें एक सूक्त प्रथम मंडल का है एवं अन्य दशम मंडल के हैं। नासदीयसूक्त में सृष्टि उत्पत्ति से पहले की अवस्था का वर्णन करके उसकी रचना-प्रक्रिया का क्रम बताया गया है। सृष्टि उत्पत्ति से पहले प्रलय दशा में असत् अर्थात् अभावात्मक तत्व नहीं था और सत्तात्मक तत्व भी नहीं था। पृथ्वी से लेकर पाताल पर्यन्त लोक नहीं थे। अंतरिक्ष और अंतरिक्ष से परे भी जो कुछ है, वह भी नहीं था। पुनः आवरण करने वाला तत्व क्या था? वह आवरक तत्व कहां था और किसकी संरक्षा में था? उस समय दुष्प्रवेश्य एवं अत्यंत गहरा जल था क्या? अर्थात् वे सब नहीं थे।[1] उस प्रलयकाल में मृत्यु नहीं थी और मृत्यु का अभाव (अमृत) भी नहीं था। रात्रि का और दिन का ज्ञान नहीं था। वह ब्रह्म तत्व ही प्राण से युक्त, अपनी क्रिया से शून्य और माया के साथ अविभक्त एवं रुप में विद्यमान था। उस माया सहित ब्रह्म से भिन्न कुछ भी नहीं था और उसस परे भी कुछ नहीं था।[2]

सृष्टि के उत्पन्न होने से पहले यह जगह अंधकार से आच्छादित था और जगत् अपने तमस् रुप मूल कारण में विद्यमान था। अज्ञायमान यह संपूर्ण जगत् उस समय सलिल रुप में था। अर्थात् उस समय कार्य और कारण दोनों मिले हुए थे।[3] सृष्टि की उत्पत्ति होने के समय सबसे पहले वह काम अर्थात् सृष्टि उत्पन्न करने की इच्छा हुई, जो परमेश्वर के मन में सबसे पहला सृष्टि का बीज रुप कारण हुआ।[4] इन कारणों का सूर्य की किरण के समान बहुत अधिक व्यापकता का भाव विस्तृत था। यह सब पहले क्या तिरछा था या मध्य में विद्यमान था, क्या वह नीचे विद्यमान था अथवा क्या वह ऊपर विद्यमान था? अर्थात् वह सब स्थानों पर समान भाव से उत्पन्न हुआ।[5] यहां ऋषि प्रश्न करके जगत् के कारण को ही उत्तर में ज्ञाता बताता है। कौन इस बात को वास्तविक रुप से जानता है और कौन इस लोक में सृष्टि के उत्पन्न होने का विवरण बता सकता है कि यह विविध प्रकार की सृष्टि किस उपादान कारण से और किस निमित्त कारण से सब ओर से उत्पन्न हुई है। देवता भी इस विविध प्रकार की सृष्टि के उत्पन्न होने के बाद के हैं, अतः वे भी अपने से पहले की बात नहीं बता सकते हैं। इसलिए कौन मनुष्य जानता है, जिस कारण से यह सारा संसार उत्पन्न हुआ है।[6] यह विविध प्रकार की सृष्टि जिस प्रकार उपादान और निमित्त कारण से उत्पन्न हुई है, यह कारण अर्थात् ईश्वर ही सृष्टि को धारण किय हुए है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई धारण किये हुए नहीं है। इस सृष्टि का स्वामी ईश्वर उत्कृष्ट सत्य रुप आकाश सदृश अपने प्रकाश में यह आनंद स्वरुप में प्रतिष्ठित है।[7] इस बात को और अधिक स्पष्ट करते हुए मैकडौनेल लिखते हैं- 'ऋग्वेद के एक अत्यंत और अपेक्षाकृत अधिक अमूर्त सूक्त (10.129) में यह कहा गया है कि आरंभ में सर्वत्र शून्य था और किसी का भी अस्तित्व नहीं था। अंधकार और महाशून्य ने अविभेद्य जल को आवृत्त कर रखा था ....। उसी समय तप द्वारा एक आद्य (एकम्) की उत्पत्ति हुई। उसके पश्चात् मनस् का सर्वप्रथम 'काम' बीज उत्पन्न हुआ। यही सत् और असत् के बीच की श्रृंखला बना।[8]

'ऋग्वेद के अंतिम मंडल में कुछ सूक्त ऐसे भी हैं जो विश्व की उत्पत्ति के विषय को पुराकथाशास्त्रीय की अपेक्षा दार्शनिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करते हैं। अनेक स्थल यह व्यक्त करते हैं कि ऋग्वेद की सृष्टि नियम मीमांसात्मक कल्पनाओं में सूर्य को उत्पादन का एक प्रमुख माध्यम माना जाता था। इसलिए सूर्य को सभी स्थावर-जङ्गम की आत्मा कहा गया है... इसकी प्रकृति एक ऐसे देवता का रुप धारण करने लगी थी जो बहुत कुछ बाद के 'ब्रह्मा' की धारणा के समान थी। इसी आश्य में ऋग्वेद 10,121.3 में एक बार 'हिरण्य-गर्भ' नाम से सूर्य की विश्व की एक महान् शक्ति के रुप में भी, प्रख्याति है। सूर्य ही अंतरिक्ष के शून्य को मापते हैं और उस स्थान पर प्रकाशमान होते हैं जहां सूर्योदय होता है (10,121.5-6) इसी सूक्त के अंतिम मंत्र में सूर्य को 'प्रजापति' (सृजित प्राणियों का अधिपति) नाम से पुकारा गया है, जो बाद में ब्राह्मण ग्रंथों में सर्वप्रमुख देवता का नाम है।[9] हिरण्यगर्भ सूक्त में सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में यह भी कहा गया है कि सबसे पहले यह हिरण्यगर्भ परमात्मा ही था। वह उत्पन्न हुए सभी पदार्थों का अधिपति था। उसी ने पृथ्वी लोक और द्युलोक को धारण किया हुआ है।[10] वही आत्मा का आविर्भाव करने वाला है और मृत्यु का देने वाला है। सब देवता उसी की उपासना करते हैं।[11]

पुरुष सूक्त में पुरुष रुप परमात्मा के स्वरुप का वर्णन करने के साथ-साथ सृष्टि-उत्पत्ति के रुप को भी बताया गया है। जो कुछ वर्तमान में है, भूतकाल में था और भविष्य में होगा, वह पुरुष ही है।[12] उस पुरुष से विराट् और उससे अधिपुरुष की उत्पत्ति हुई। उसी से संपूर्ण सृष्टि की रचना हुई।[13] इस संबंध में मैकडौनल लिखते हैं कि विश्व की उत्पत्ति का एक पुराकथाशास्त्रीय विवरण, जिसमें न तो उत्पादन है और न निर्माण, ऋग्वेद के सर्वाधिक

अर्वाचीन काल का संकेत करते हैं, तथापि इसका प्रमुख विचार अत्यंत पुरातन है क्योंकि यह एक विराट पुरुष के शरीर से जगत् की उत्पत्ति का विवरण प्रस्तुत करता है। उस पुरुष के साथ देवों ने यज्ञ किया, जब कि उसका सर आकाश, उसकी नाभि वायु, और उसके पैर पृथ्वी बन गये। उसके मनस् से चंद्रमा, उसके नेत्र से सूर्य, उसके मुख से इन्द्र और अग्नि तथा उसके श्वास से वायु की उत्पत्ति हुई। चारों वर्ण भी उसे से उत्पन्न हुये। उसके मुख से ब्राह्मण, बाहु से राजन्य अथवा योद्धागण, जांघ से वैश्य और पैरों से शूद्र की उत्पत्ति हुई। स्वयं इस सूक्त में जो व्याख्या है वह सर्वदेववादी है, क्योंकि ऐसा कहा गया है कि 'जो कुछ है और जो कुछ भी होगा, वह सर्वस्व यही पुरुष है।[14]

इसके अतिरिक्त जगत्सृष्टि मीमांसा संबंधी एक अन्य ब्रह्मणस्पति सूक्त (10.72) है, जिसमें कहा गया है कि ब्रह्मस्पति अर्थात् ब्रह्माण्ड और प्रकृति के स्वामी परमेश्वर ने इन देव पदार्थो को (लुहार) के समान धौंका अर्थात् ताप से तप्त किया। सृष्टि की प्रागवस्था में असत् अर्थात् अव्यक्त से सत् अर्थात् उत्पन्न होता है।[15] और उसी से दिशाएं और सूर्य आदि पदार्थ जो अपनी किरणों को ऊपर फेंकते हैं, वे भी उत्पन्न होते हैं।[16] इसी में कहा गया है कि पृथ्वी सूर्य से उत्पन्न होती है और पृथ्वी से उसक कोण और परिच्छेद को सूचित करने वाले भेद उत्पन्न होते हैं। अदिति अर्थात् प्रातःकालिक उषा से आदित्य उत्पन्न होता है और सायंकालिक उषा-संध्या आदित्य से उत्पन्न होती है।[17] इस प्रकार क्रमानुसार पृथ्वी, दिशायें और दक्ष सहित अदिति की उत्पत्ति हुई। अदिति के बाद देवों का जन्म हुआ। यहां कर्मार इव प्रतीक के रुप में प्रयुक्त हुआ है। इससे यह संकेत भी पाया जा सकता है कि परमेश्वर को सृष्टि-उत्पत्ति के लिए लुहार की तरह बहुत अधिक श्रम करना पड़ा। इससे यह भी अनुमान होता है कि सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व रॉ मटिरियल जैसा कुछ था, लुहार जिस तरह लोहे को तपाकर और पीटकर वस्तुएं बनाता है, ठीक उसी तरह परमेश्वर ने उस रॉ मटिरियल से इस सृष्टि की रचना की।

बाइबिल के पुराने विधान के तौरेत, जिसे पंचग्रंथ भी कहा जाता है, के उत्पत्ति ग्रंथ में विश्व और मानव जाति की उत्पत्ति के विषय में कहा गया है - प्रारंभ में ईश्वर ने स्वर्ग और पृथ्वी की सृष्टि की। पृथ्वी उजाड़ और सुनसान थी। अथाह गर्त पर अंधकार छाया हुआ था और ईश्वर का आत्मा सागर पर विचरता था। ईश्वर ने कहा प्रकाश हो जाये और प्रकाश हो गया। ईश्वर को प्रकाश अच्छा लगा और उसने प्रकाश और अंधकार को अलग कर दिया। ईश्वर ने प्रकाश का नाम दिन रखा और अंधकार का नाम रात। संध्या हुई और फिर भोर हुआ। यह पहला दिन था। ईवर ने कहा -पानी के बीच एक छत बन जाये, जो पानी को पानी से अलग कर दे, ऐसा ही हुआ। ईश्वर ने एक छत बनाई और नीचे का पानी और ऊपर का पानी अलग कर दिया। ईश्वर ने छत का नाम आकाश रखा। संध्या हुई और फिर भोर ह ुआ, यह दूसरा दिन था। ईश्वर ने कहा - आकाश के नीचे का पानी एक ही जगह इकट्ठा हो जाये और थल दिखाई पड़े, और ऐसा ही हुआ। ईश्वर ने थल का नाम पृथ्वी रखा और जल समूह का नाम समुद्र। ईश्वर को यह अच्छा लगा। ईश्वर ने कहा - पृथ्वी पर हरियाली लहलहाये, बीजदार पौधे और फलदार पेड़ उत्पन्न हो जायें, जो अपनी-अपनी जाति के अनुसार बीजदार फल जाये, और ऐसा ही हुआ। पृथ्वी पर हरियाली उगने लगी। जिसमें अपनी-अपनी जाति के अनुसार बीज पैदा करने वाले पौधे और बीजदार फल देने वाले पेड़ थे और यह ईश्वर को अच्छा लगा। संध्या हुई और फिर भोर हुआ- यह तीसरा दिन था।

ईश्वर ने कहा, दिन और रात को अलग कर देने के लिये आकाश में नक्षत्र हों। उनके सहारे पर्व निर्धारित किये जायें और दिनों तथा वर्षों की गिनती हो। वे पृथ्वी को प्रकाश देने के लिये आकाश में जगमगाते रहें। और ऐसा ही हुआ। ईश्वर ने प्रधान

दो नक्षत्र बनाये, दिन के लिये एक बड़ा और रात के लिये एक छोटा, साथ-साथ तारे भी। ईश्वर ने उनको आकाश में रख दिया, जिससे वे पृथ्वी को प्रकाश दें, दिन और रात का नियंत्रण करें और प्रकाश तथा अंधकार को अलग कर दें। और यह ईश्वर को अच्छा लगा। संध्या हुई और फिर भोर हुआ- यह चौथा दिन था।

ईश्वर ने कहा - पानी जीव-जंतुओं से भर जाये और आकाश के नीचे पृथ्वी के पक्षी उड़ने लगें। ईश्वर ने मकर और नाना प्रकार के जीव-जंतुओं की सृष्टि की, जो पानी में भरे हुए हैं और उसने नाना प्रकार के जीव-जंतुओं की भी सृष्टि की। और यह ईश्वर को अच्छा लगा। संध्या हुई और फिर भोर हुआ - यह पांचवा दिन था। ईश्वर ने कहा, पृथ्वी नाना प्रकार के घरेलू जमीन पर रेंगने वाले और जगंली जीव-जंतुओं का पैदा करें, और ऐसा ही हुआ। ईश्वर ने नाना प्रकार के जंगली, घरेलू और जमीन पर रेंगने वाले जीव-जंतुओं को बनाया। और यह ईश्वर को अच्छा लगा।

ईश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपना प्रतिरुप बनायें, वह हमारे सदृश हों। वह समुद्र की मछलियों, आकाश के पक्षियों, घरेलू और जंगली जानवरों और जमीन पर रेंगने वाले सब जीव-जंतुओं पर शासन करें। ईश्वर ने मनुष्य को अपना प्रतिरुप बनाया, उसने नर और नारी के रुप में उनकी सृष्टि की। ईश्वर ने यह कहकर उन्हें आशीर्वाद दिया, फलो-फूलो। पृथ्वी पर फैल जाओ और उसे अपने अधीन कर लो। समुद्र की मछलियों, आकाश के पक्षियों और पृथ्वी पर विचरने वाले सब जीव-जंतुओं पर शासन करो। ईश्वर ने कहा, मैं तुमको पृथ्वी भर के बीज पैदा करने वाले सब पौधे और बीजदार फल देने वाले सब पेड़ देता हूं। वह तुम्हारा भोजन होगा। मैं सब जंगली जानवरों को, आकाश के सब पक्षियों को, पृथ्वी पर विचरते जीव-जंतुओं को उनके भोजन के लिये पौधों की हरियाली देता हूं। ईश्वर ने अपने द्वारा बनाया हुआ सब कुछ देखा और यह उसको अच्छा लगा। संध्या हुई और फिर भोर हुआ- यह छट्ठा दिन था।

इस पकार आकाश तथा पृथ्वी और जो कुछ उनमें है, सबकी सृष्टि पूरी हुई। सातवें दिन ईश्वर का किया हुआ कार्य समाप्त हुआ। उसने अपना समस्त कार्य समाप्त कर, सातवें दिन विश्राम किया ...।[18]

इसके बाद मनुष्य, स्त्री एवं जीवन-वृक्ष तथा भले-बुरे के ज्ञान की सुप्रसिद्ध तथा वर्णित है। यहां यह भी जान लेना जरुरी है कि बाईबिल एक पुस्तक नहीं, वरन् अनेक रचनाओं का संकलन है। इसके रचना-कालों का विस्तार दस शातब्दियों से अधिक है। जो कई लेखकों की रचनाएं हैं, जिनकी मूल भाषा कभी इब्रानी है और कभी यूनानी है। शैली में भी भिन्नता है। इसमें कहीं ऐतिहासिक वृतान्त हैं, कहीं काव्य, कहीं नियमावली, कहीं उपदेश, कहीं पत्र और कहीं जीवन चरित।[19] बाइबिल शब्द बिब्लोस से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ पुस्तक है। वर्तमान बाइबिल की तिहत्तर पुस्तकों में छियालीस, अर्थात् बाइबिल की प्राचीनतम रचनाएं, ईसा मसीह के समय किसी न किसी रुप में विद्यमान थी।[20]

कुरान में कहा गया है कि सृष्टि की उत्पत्ति अल्लाह के द्वारा की गई है। कुरान की आरंभ की आयतों में कहा गया है कि लोगो? बंदगी को अपनाओं, अपने रब अर्थात् मालिक और सर्जनहार की, जो तुम्हारा और तुम्हारे पूर्व जो लोग हो चुके हैं, उन सबका सर्जनहार है। यही तो वह है जिसने तुम्हारे लिए धरती का बिस्तर बिछाया है, आकाश की छत बनाई है, ऊपर से पानी की बरसात की है और उसके द्वारा प्रत्येक प्रकार के खाद्य पदार्थ उत्पन्न करके तुम्हारी आजीविका को पूर्ण किया है। जब यह बात तुम जानते हो तो दूसरों को अल्लाह के समकक्ष मत कहो।[21]

कुरान के प्रारंभिक सरःअल-बकरह में अल्लाह एवं आदम विषयक एक कथा मिलती है, जिसमें कहा गया है कि अल्लाह के पक्का करार करने के बाद जो उसे तोड़ते हैं और अल्लाह ने जिसको

जोड़ने का आदेश दिया है, उसे तोड़ते हैं तथा धरती ऊपर अव्यवस्था पैदा करते हैं। हकीकत में यही लोग नुकसान को प्राप्त करने वाले हैं। तुम अल्लाह के प्रति कुफ्र अर्थात् अवज्ञा का व्यवहार कैसे कर सकते हो। तुम निर्जीव थे। उसी ने तुम्हें जीवन प्रदान किया और वही तुम्हारे प्राण ले लेगा और फिर वही पुनः जीवन प्रदान करेगा। इस तरह फिर उसी की तरफ जाना होगा। वही तो वह है, जिसने तुम्हारे धरती की सौ से अधिक वस्तुएं पैदा की हैं, फिर ऊपर की ओर ध्यान दिया और सात आकाश को व्स्थित रुप से बनाया। उसे प्रत्येक वस्तु का पूरा ज्ञान है।[22] यहां अल्लाह को सर्वज्ञ और सब कुछ समझने वाला बताया गया है, जो आकाश और पृथ्वी की समग्र हकीकत को जानता है जो आदमी से छुपी हुई है. वह यह भी जानता है कि आदम क्या बताता है और क्या छिपाकर रखता है। बाइबिल की तरह कुरान में भी आदम और हव्वा की कथा मिलती है। आदम की कथा में कहा गया है कि अल्लाह ने आदम को कहा कि - तुम और तुम्हारी पत्नी, दोनों जन्नत में रहो और स्वतंत्रता पूर्वक जो चाहो वो खाओ परंतु इस वृक्ष के पास मत जाना, वरन् जालिमों में गिने जाओगे। पर हुआ यह कि शैतान ने इन दोनों को बहला-फुसलाकर उस वृक्ष की ओर आकर्षित किया और अल्लाह के आदेश-पालन से स्खलित किया। शैतान उन्हें उस स्थिति में से बाहर निकलवाकर ही रहा। और आदेश दिया गया कि अब तुम सब यहां से उतर जाओ। तुम एक दूसरे के शत्रु हो। तुम्हें एक निश्चित समय मर्यादा तक धरती के ऊपर ही निवास करना है और वहीं निर्वाह करना है। उस समय आदम ने अपने रब के पास से कुछ शब्द सीखकर क्षमा मांगी और पश्चाताप किया। रब ने उसे स्वीकार किया क्योंकि रब क्षमा करने वाला और परम कृपालु है।[23]

अल्लाह आकाश और धरती का सर्जनहार है। फरिश्त्ते संदेशवाहक के रुप में उसकी भुजाएं हैं अल्लाह जिसके लिए कृपा का दरवाजा खोल देता है उसे कोई रोकने वाला नहीं और जिसे वह बंदकर देता है उसे अल्लाह के सिवाय और कोई खोलने वाला नहीं है। वह प्रभुत्वशाली और तत्व-दृष्टा है। यहां पर ऋग्वेद के हिरण्यगर्भ सूक्त के कस्मै देवाय हविषा विधेम। की तरह ही प्रश्न पूछकर कहा गया है कि हे लोगों! तुम्हार ऊपर अल्लाह के जो उपकार हैं, उन्हें याद रखो। क्या अल्लाह के सिवाय और कोई अन्य सर्जनहार नहीं है जो तुम्हें आकाश और धरती में से रोजी-रोटी देता हो? अर्थात उसके सिवाय और कोई उपास्य नहीं है। फिर तुम क्यों धोखा खा रहे हो?[24] वह अल्लाह ही हवाओं को भेजता है। वह बादलों को उठाता है और उनके द्वारा ही मृत भूमि को जीवन्त करता है। अल्लाह ने मिट्टी में से सर्जन किया, उसके बाद वीर्य से, फिर स्त्री-पुरुष के युगल बनाये। कोई स्त्री न गर्भवती होती है और न बालक को पैदा करती है। यह सब अल्लाह जानता है। जल के विषय में कहा गया है कि पानी के दोनों भंडार समान नही होते हैं। एक मीठा और प्यास को बुझाने वाला है और पीने में रुचिकर है, दूसरा एकदम खारा अर्थात् गले को छीलने वाला है। परंतु दोनों में से ताजा मांस प्राप्त होता है। श्रृंगार की वस्तुएं निकालत हो। अल्लाह दिन और रात को पिरोकर लाता है। सूर्य और चंद्र उसके अधीन है। वह मालिक है और पालनहार है। संपूर्ण साम्राज्य उसी का है। उसे छोड़कर जिस दूसरे को तुम बुलाते हो, वे एक तिनके के भी मालिक नहीं हैं अर्थात् अल्लाह सबका मालिक है।[25] अल्लाह अपेक्षामुक्त और स्वयं प्रशंसित है।[26] वह अ ाकाश में से पानी की वर्षा करता है उसके द्वारा तरह-तरह के फलों का उत्पादन होता है, जिनके रंग अलग-अलग होते हैं। इसी तरह प्राणियों एवं पशुओं के रंग भी अलग-अलग होते हैं। निःशंक, वह आकाशों और धरती की प्रत्येक छुपी हुई वस्तु से परिचित है। वह तो छाती में छिपे हुए रहस्यों को भी अच्छी तरह से जानता है।[27] इस प्रकार का उल्लेख भी मिलता है जिसमें यह प्रश्न किया गया है कि क्या वह एक तुच्छ वीर्य नहीं था

जो माता के गर्भाशय में टपकाया जाता है? यहां यह संकेत किया गया है कि जिससे सृष्टि की उत्पत्ति हुई वह वीर्य विशिष्ट था। वह विशिष्ट वीर्य मांस का एक लोथ बना। अल्लाह ने उसका शरीर बनाया और उसके अंग बनाये फिर उसके द्वारा पुरुष और स्त्री दो लिंग बनाये।[28] यह कहा जा सकता है कि मनुष्य की उत्पत्ति एक मिश्रित वीर्य की बूंद में से की गई।

कुरान के अनुसार सृष्टि का स्वामी, जो संपूर्ण सृष्टि का सर्जनहार है, मालिक और शासक है। स्वयं के असीम राज्य के इस भाग पर, जिसे पृथ्वी कहते हैं, मनुष्य को पैदा किया। उसे ज्ञान एवं सोचने-समझने की शक्ति प्रदान की। अच्छाई और बुराई के बीच भेद करने की योग्यता प्रदान की। पसंद और निर्णय करने की स्वतंत्रता प्रदान की, चीज-वस्तुओं के उपयोग करने का अधिकार प्रदान किया। इस तरह हर दृष्टि से स्वायत्ता प्रदान करके पृथ्वी पर अपना खलीफा यानि प्रतिनिधि बनाया। इस पद पर मनुष्य की नियुक्त करते समय सृष्टि के स्वामी ने अच्छी तरह से उसके कान खोलकर यह बात उसके दिमाग में डाल दी थी कि तुम्हारा और समग्र विश्व का मालिक, उपास्य और शासक मैं ही हूं। मेरे इस राज्य में न तुम स्वाधीन हो, न किसी और के दास हो और न मेरे विसाय कोई तुम्हारी भक्ति, आज्ञापालन और उपासना का अधिकारी है। इस दुनिया के इस जीवन में तुम्हें अधिकार देकर भेजा जा रहा है, वास्तव में यह तुम्हारे लिए एक परीक्षा की अवधि है, उसके बाद तुम्हें मेरे पास पुनः लौटना होगा और मैं तुम्हारे कर्मों के आधार पर फैसला करुंगा कि कौन सफल हुआ और कौन असफल। तुम्हारे लिए यही सच्चा मार्ग है कि मुझे अपना एकमात्र उपास्य और शासक मानो। जिस तरह मैं मार्ग दर्शन प्रदान करुं, उस तरह जगत् में काम करो। जगत् को परीक्षा-स्थल समझ करके, होशपूर्वक जीवन व्यतीत करो कि तुम्हारे उद्देश्य में मेरे अंतिम निर्णय में सफल होना हो। प्रथम मार्ग अपनायेंगे तो जगत् में सुख-शांति प्राप्त होगी औार मैं तुम्हें शाश्वत सुख-चैन का घर प्रदान करुंगा, जिसका नाम जन्नत (स्वर्ग) है और यदि दूसरे मार्ग पर चलोगे तो जगत् में तुम्हें अशांति का मजा चखना पड़ेगा और परलोक में जाओगे तो शाश्वत दुःख और कष्ट के खड्डे में फेंक दिये जाओगे, जिसे दोजख या जहन्नुम (नर्क) कहते हैं।

यह समझाने के बाद सृष्टि के मालिक ने मानव-जाति को पृथ्वी पर जगह दी और इस जाति के सबसे पहले दो व्यक्तियों आदम और हव्वा को, वह मार्ग दर्शन भी प्रदान कर दिया, जिसके अनुरुप उन्हें और उनकी संतानों को पृथ्वी पर कार्य करना था। ये प्रथम मानव अज्ञानता और अंधकार की स्थिति में नहीं जन्मे थे, अल्लाह ने पृथ्वी पर उनके जीवन का आरंभ पूर्ण प्रकाश में किया था। वे सत्य से परिचित थे।[29]

सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में ऋग्वेद, बाइबिल एवं कुरान में जो कहा गया है, उनमें ऋग्वेद के विचार स्थूल न होकर अतिसूक्ष्म हैं तथा यहां सृष्टि की उत्पत्ति-पूर्व की स्थिति का वर्णन प्राप्त होता है। बाइबिल में सृष्टि-प्रक्रिया के क्रम को सात दिनों में दर्शाया गया है, जो स्थूल है एवं चमत्कारिक अधिक लगता है। सातवें दिन ईश्वर ने अपना समस्त कार्य समाप्त करके विश्राम किया। बाइबिल के अनुसार ईश्वर ने सर्वप्रथम स्वर्ग और पृथ्वी की उत्पत्ति की। पृथ्वी उजाड़ और सुनसान थी। अथाह गर्त पर अंधकार छाया हुआ था। ऋग्वेद के नासदीयसूक्त में सृष्टि-उत्पत्ति के पूर्व प्रलय दशा में न सत् था, न असत् था। न लोक थे, न आकाश था। न गति थी, न स्थान था। न जन्म था, न मृत्यु थी और न अमृत था। न दिन था, न रात थी। वही एक मात्र परमेष्ठी सर्वशक्तिमान परमेश्वर अन्तश्चेतना क साथ निर्वात अवस्था में शांत रुप से वर्तमान था। उस समय कार्य और कारण दोनों मिले हुए थे। उसमें इच्छा का प्रादुर्भाव हुआ। वही इच्छा सृष्टि का बीज रुप कारण हुआ। वह स्वयं कहां से उत्पन्न हुआ, यह

सृष्टि कहां से उत्पन्न हुई, देवता सृष्टि से पहले उत्पन्न हुए या बाद में कौन जानता है।

ऋग्वेद में सृष्टि का बीज रुप कारण ईश्वरेच्छा है। यही इच्छा बाइबिल और कुरान में भी मिलती है। बाइबिल में इसी इच्छा से ईश्वर ने छह दिन में सृष्टि की रचना की। वह छह दिनों तक सृष्टि करता रहा और देखता भी रहा कि सृष्टि बराबर है या नहीं। ईश्वर ने अपनी छह दिनों की सृष्टि में जो भी तत्व-प्राणी बनाये, उस पर मनुष्य को शासन करने का अधिकार दिया। इसके बाद नर-नारी एवं ज्ञान के वृक्ष एवं उसके वर्जित फल को खाने की कथा वर्णित है। कुरान में भी अल्लाह की सृष्टि उत्पत्ति की इच्छा का ही वर्णन है। कुरान में अल्लाह ने पृथ्वी पर मनुष्य की उत्पत्ति करने से पहले उसे सारे नियम बताये और यह भी बता दिया कि वह ही तुम्हारा स्वामी है और सर्वशक्तिमान है। पृथ्वी पर जैसे कर्म करोगे उसके अनुसार तुम्हें स्वर्ग और नरक की प्राप्ति होगी। इस तरह ईश्वर ने पृथ्वी पर मनुष्य को जगह दी। इसके बाद कुरान में भी आदम और हव्वा तथा वृक्ष के वर्जित फल की कथा कही गई है।

विश्व के इन तीन प्रमुख ग्रंथों के अनुसार सृष्टि उत्पत्ति के मूल कारण में ऐसी कोई शक्ति जरुरी रही है, जो न तथ्यात्मक थी और न इन्द्रिय-ग्राह्य। जिसे इन ग्रंथों में नाम कुछ भी दिया गया हो और हमारे यहां कहा भी गया है- अल्लाह, ईश्वर एक ही नाम। भाषा के अनुसार शब्द अलग-अलग है, परंतु सृष्टि की वह आदि शक्ति है एक ही। उस शक्ति की भी आदि रुप में सृष्टि को उत्पन्न करने की इच्छा निश्चित रुप में रही है। बाइबिल और कुरान की तुलना में ऋग्वेद प्राचीन ग्रंथ है। ऋग्वेद में सृष्टि-उत्पत्ति एवं सृष्टि के पूर्व की स्थिति का वर्णन कुरान एवं बाइबिल की तुलना में अत्यधिक सूक्ष्म एवं महत्वपूर्ण है। नासदीय सूक्त में सृष्टि पूर्व की स्थिति के वर्णन में निस्सीम आकाश एवं अंधकार की अद्भुत चित्रात्मकता हमारे अपने अंदर दिखाई देती है, जो इन्द्रिय-ग्राह्य नहीं हो सकती है, परंतु अनुभव जरुर की जा सकती है। ईश्वर ने सृष्टि की उत्पत्ति की है। इस बात का तीनों ग्रंथों में वर्णन है। सृष्टि की उत्पत्ति के पूर्व की स्थिति का थोड़ा वर्णन बाइबिल और कुरान में भी मिलता है, परंतु ऋग्वेद में स्पष्ट कहा गया है- तम आसीत्तमसा गुळहग्रअप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम्।[30] सृष्टि के उत्पन्न होने से पहले अर्थात् प्रलय की अवस्था में यह जगत् अंधकार से आच्छादित था और यह जगत् अपने तमस् रूप मूल कारण में विद्यमान था। साथ में यह भी कहा गया है कि अज्ञायमान यह संपूर्ण जगत् उस समय सलिल रूप में था। यहां ये संकेत मिलता है कि सबसे पहले अंधकार था और पानी भी था।

संदर्भः

1. नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं जनासीद्रजो नो व्योमा परो यत्। किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गंभीरम्।। ऋग्वेद, हिन्दी भाष्य, नवम, दशम मण्डल, महर्षि दयानंद सरस्वती, आर्य प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2009, 10.129.1
2. न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः। आनीदवातं सवधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास.. वही, 10.129.2
3. वही, 10.129.3
4. कामस्तदग्रे समवर्तताधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् सतो बन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा।। वही, 10.129.4
5. वही, 10.129.5
6. वही, 10.129.6
7. इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न. यो अस्याध्यक्षः परमे व्येमन् सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद.. वही, 10.129.7
8. वैदिक माइथौलोजी, ए. ए. मैक्डौनेल, वैदिक पुराकथा-शास्त्र, अनुवादक रामकुमार राय, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करणः प्रथम, संवत् 2018 वि., 1961, पृ.23
9. वही, पृ. 22-23
10. हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम.. ऋग्वेद, 10.121.1
11. य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।

यस्य च्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।
वही, 10.121.1
12. पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूत यच्च भव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।। वही, 10.90.2
13. तस्माद् विराळजायत विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ।। वही, 10.90.5
14. वैदिक माइथौलोजी, पृ. 22-23
15. ब्रह्मणस्पतिरेता सं कर्मारइवाधमत्।
देवाना पूर्व्ये युगेऽसतः सदजायत.. ऋग्वेद, 10.72.2
16. देवाना युगे प्रथमेऽसतः सदजायत।
तदाशा अन्वजायन्त तदुत्तानपदस्परि।। वही, 10.72.3
17. वही, 10.72.4
18. पवित्र बाइबिल, अनुवादक वाल्द-बुल्के, सत्पकाशन, इंदौर, 1990, पृ. 4-5
19. वही, पृ. 9
20. वही, पृ. 9
21. दिव्य कुर्आन, मौलाना सैयद अबुलआला मौदूदी, गुजराती अनुवादः जहीरुद्दीन शेख, प्रचार-प्रसार विभाग, जमाअते इस्लामी हिन्द-गुजरात, अहमदाबाद, पारा-1, सुरः अल-बकरह-2, आयत 21-22
22. वही, सूरः अल-बकरह -2.28-29
23. वही, सूरः अल-बकरह -2.35-37
24. वही, सूरः फातिर -35.1-3
25. वही, सूरः फातिर -35.9-13
26. वही, सूरः फातिर -35.9-15
27. वही, सूरः फातिर -35.15.27.38
28. वही, सूरः अल-कियामह -75.37-39
29. वही, पृ. 17-18
30. ऋग्वेद, 10.129.3

●

प्राचार्य, शाह के. एस. आर्ट्स एण्ड वी. एम. पारेख कॉमर्स कॉलेज
कपड़वंज (जिला-खेड़ा) गुजरात-387620
gopalsahar@gmail.com
मो. 94278 54690

महामृत्युंजय मंत्र

ओ3म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्। उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः।। (यजु.अ.03/60)

हम लोग जो (सुगन्धिम्) शुद्ध गन्धयुक्त (पुष्टिवर्धनम्) शरीर आत्मा और समाज के बल को बढ़ाने वाला, (त्र्यम्बकम्) रुद्ररूप जगदीश्वर है, उसकी (यज्ञामहे) निरन्तर स्तुति करें, इनकी कृपा से (उर्वारुकमिव) जैसे खरबूजा फल पक कर (बन्धनात्) लता के सम्बन्ध से छूट कर अमृत के तुल्य होता है, वैसे हम लोग भी (मृत्योः) प्राण व शरीर के वियोग से (मुक्षीय) छूट जावें। (अमृतात्) और मोक्षरूप सुख से (मा) श्रद्धारहित कभी न होवें तथा हमलोग (सुगन्धिम्) उत्तम गन्धयुक्त (पतिवेदनम्) रक्षा करने हारे स्वामी को देने वाले (त्र्यम्बकम्) सबके अध्यक्ष जगदीश्वर का (यज्ञामहे) निरन्तर सत्कारपूर्वक ध्यान करें, और इसके अनुग्रह से (उर्वारुकमिव)। जैसे खरबूजा पक कर (बन्धनात्), लता के सम्बंध से छूट कर अमृत के समान मिष्ट होता है, वैसे हम लोग भी (इतः) इस शरीर से (मुक्षीय) छूट जावें (अमुतः) मोक्ष और अन्य जन्म के सुख और सत्यधर्म के फल से (मा) पृथक् न होवें।।

महामृत्युंजय मंत्र का उल्लेख ऋगवेद से लेकर यजुर्वेद तक मिलता है। वहीं शिवपुराण सहित अन्य ग्रंथों में भी इसके महत्व की चर्चा की गई है। महामृत्युंजय उसे कहते हैं जो मृत्यु को जीतने वाला हो। इसलिए भगवान शिव के स्तुति के लिए इस मंत्र का जाप किया जाता है। इस मंत्र से जीवनी शक्ति तो बढ़ती ही है साथ ही सकारात्मकता की ओर भी मनुष्य उन्मुख होता है। महामृत्युंजय मंत्र के प्रभाव से हर तरह की व्याधियों से भय चला जाता है और मानसिक तनाव से मुक्ति मिलती है। ऐसा कहा जाता है कि इसी मंत्र के जाप से आदि शंकाराचार्य को भी जीवन की प्राप्ति हुई थी।

हिंदी भाषा का आरंभिक संघर्ष

डॉ. बीरेन्द्र सिंह

भारतेन्दुयुग ने हिन्दी जाति के साथ ही हिन्दी भाषा के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। तत्कालीन समय में सरकार और कानून की भाषा या तो अंग्रेजी थी या फिर फारसी के बोझ से लदी उर्दू। इन दोनों ही भाषाओं का साधारण जन से कोई संबंध न जुड़ता था। भारतेन्दुयुगीन मनीषियों ने जातीय विकास में आने वाली इस भाषाई अड़चन को भलीभाँति महसूस करते हुए हिन्दी के विकास का बीड़ा उठाया। पत्र-पत्रिकाओं ने समुचित जातीय विकास संबंधी हितों को ध्यान में रखकर आमजन की भाषा को उसका प्राप्य दिलाने की लड़ाई छेड़ दी।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी के महत्त्व को अस्वीकारने वालों को लक्ष्य कर 'कविवचन सुधा' में 'हिन्दी भाषा' शीर्षक से लिखा, 'प्रायः लोग कहते हैं कि हिन्दी कोई भाषा ही नहीं है। हमको इस बात को सुनकर बड़ा क्षोभ होता है यदि कोई अंगरेज ऐसा कहता तो हम जानते कि वह अज्ञान है इस देश का समाचार भलीभांति नहीं जानता। पर अपने स्वदेशियों को हम क्या कहें । हम नहीं जानते कि उनकी ऐसी हत बुद्धि क्यों हो गई कि वे अपने प्राचीन भाषा का तिरस्कार करते हैं।'[1] दरअसल यह हमारी जातीय चेतना का अभाव ही था कि हम अपनी जातीय भाषा की महत्ता भुलाते जा रहे थे।

भारतेन्दु ने अपनी पत्रिकाओं के माध्यम से जातीय चेतना की इस कमी को दूर करने का निरंतर प्रयास किया। 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल' के सिद्धांतानुसार भारतेन्दु ने जातीय भाषा की समृद्धि को विशेष महत्त्व दिया। भारतेन्दु की भाषाई उन्नति के प्रण में धर्म कोई बन्धन न था। उन्होंने 'कविवचन सुधा' के एक विज्ञापन में स्वयं द्वारा किये गए कुरान शरीफ के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन की योजना कुछ यों प्रकट की, 'मुसलमानों के मत की पवित्र धर्म पुस्तक हिन्दी भाषा में इस बड़े ग्रन्थ को मैंने बड़े परिश्रम से हिन्दी भाषा में अनुवाद किया है और अब इसको छापने का भी विचार है परन्तु बड़ा ग्रन्थ है और व्यय विशेष है इससे इच्छा की है कि पहिले 100 ग्राहक ठहराकर तब छापना आरम्भ करूँ इससे विद्यानुरागी और मतों के जानकारों से निवेदन है कि वे लोग इसके छापने का उत्साह अपने आज्ञापत्र से शीघ्र बढ़ावैं।'[2] हिन्दी को उन्होंने हिन्दू और मुसलमान दोनों की भाषा माना था। इस प्रकार जैसा कि हम जानते हैं भाषा ही किसी जाति की पहचान का सबसे बड़ा लक्षण है हिन्दी बोलने वाले सभी आम हिन्दू और मुसलमानों को उन्होंने एक ही हिन्दी जाति के अन्तर्गत मानकर उसकी उन्नति की कामना की थी।

कानून की प्रचलित भाषा तत्कालीन साधारण जनता के लिए बड़ी मुसीबत थी फलतः उसके हिन्दी-अनुवाद पर विचार करते हुए 20 जुलाई, सन् 1872 की 'कविवचन सुधा' में इस सबब का एक 'इश्तिहार' कुछ यों प्रकाशित हुआ, 'प्रगट है कि सरकारी कानूनों से परिचय होना सब को अवश्य ओ हितकारी हो पर इसके साथ यह भी सिद्ध ओ माननीय है कि जब तक वे कानून हमारी भाषा में उलथा ओ हमारे देवनागरी अक्षरों में न लिखे जायेंगे उनसे सब को ज्ञान होना सम्भव नहीं है। इसलिए विचार है कि आदि से लेकर गत साल सन् 1876 ई. के अनन्तर कि जितने कानून उन देशों से किसी भांति सम्बन्ध रखते हैं जहां एक भाषा बोली और अक्षर बर्ते जाते हैं हमारी भाषा ओ अक्षरों में उलथा हो जावें (और यदि मावकाम होगा और ग्राहकों को सावधानी होगी तो सन् 1872 ई. से पिछ्ले एक साल पीछे जुदे जुदे उलथा होकर छपवा दिए जाया करेंगे क्योंकि संग्रह की पूर्णता में विघ्न न आवे) पर कानूनों का समूह बहुत बड़ा है इसलिए सुगमता के विचार से यह चित्त मन है कि एक मासिक पत्र के द्वारा प्रकास किया जावे।[3]

तत्कालीन समय में हिन्दी की दशा काफी शोचनीय थी। 'हिन्दी प्रदीप' ने अपने एक वर्ष के प्रकाशन के अनुभव पर हिन्दी की स्थिति को अपने पाठकों के साथ साझा करते हुए लिखा, 'इस थोड़े से समय एक बर्ष में मुझे यह तो स्पष्ट रूप से प्रगट हो गया कि यह हिन्दी भाषा अभी ऐसी हीन, दीन और बे-कदर है, वैसी कोई दूसरी भाषा न होगी। हुआ चाहे, जिस हिन्दी का देश में प्रमोद-निद्रा-मग्न धनिकों के यहाँ कुछ आदर नहीं है, दाहिने बायें खड़े होने का स्थान जिसे नहीं है, सामने स-पत्नी समान एक कुलटा-यवनी गाज रही है। जहाँ काँच और काञ्चन दोनों एक-से हैं। भ्रमर गुञ्जन और मेढ़क की टर्र-टर्र एक समान है। जहाँ एक श्रेणी के लोग धन के उन्माद से अन्धे हो कार्य-अकार्य विवेक शून्य हो रहे हैं। दूसरे श्रेणी के लोग 'हा अन्न, हा अन्न' चिल्लाते व्याकुल हैं। जहाँ मूर्ख मण्डली रसिक समाज गिनी जाती है और अज्ञों का नाम सर्वत्र, महाआचार्य, महोपाध्याय है। मातृभाषा न जानना ही पाण्डित्य है। 'हाँ जी, में हाँ जी' मिलाना ही जहाँ पुरुषार्थ है और चोखी बात समझी जाती है। वहाँ सब भाँति निराश्रयी हिन्दी भाषा का उतना भी अवलम्ब होने से निश्चय होता है कि इसका भविष्य काल सर्वथा अन्धकार पूर्ण नहीं है।'[4] चरम निराशाजनक स्थितियों में भी पत्रिका संपादक बालकृष्ण भट्ट की यह जातीय आस्था ही उनके दीर्घकालीन संघर्ष का सम्बल बनी और 'हिन्दी प्रदीप' के द्वारा उन्होंने एक लम्बे समय तक हिन्दी जाति की सेवा की।

भारतेन्दुयुगीन विद्वानों और सुधीजनों ने समाज की उन्नति के लिए हिन्दी के समाचार पत्रों की आवश्यकता पर विशेष जोर दिया। उस समय जो अंग्रेजी समाचार पत्र वगैरह निकलते थे उनसे साधारण लोगों को कोई विशेष लाभ न हो सकता था, इसी आशय से 'हिन्दी प्रदीप' के मई, 1885 के अंक में 'प्रयाग में हिन्दी पत्र की आवश्यकता' शीर्षक से छपा, 'अंगरेजी पत्र से विशेष उपकार देश का नहीं हो सकता, क्योंकि यह उन्हीं के प्रयोजन का है जो अंगरेजी पढ़े हैं पर अब ठौर-ठौर से छोटे-मोटे देशी भाषा के साप्ताहिक पत्र निकलते देख कर लोकल सेल्फ गवर्नमेण्ट की घर-घर चर्चा और भाँति-भाँति के उत्तेजक व्याख्यान लेक्चर्स सुन तथा और अनेक प्रकार के कितने देश हितैषी आन्दोलन में लोगों की प्रवृत्ति देख क्यों न तबियत फड़के कि यहाँ से भी एक हिन्दी का साप्ताहिक पत्र निकलता, जिसमें देशी तथा राजकीय विषय की पूरी-पूरी समालोचना रहती तो कैसा अच्छा होता और छोटी-छोटी बातों के लिए भी पायोनियर का जो मुँह ताकना पड़ता है, सो न करना पड़े । और संकीर्ण हृदय गौरांगों का प्रधान अस्त्र होने के कारण पायोनियर हम सब देशी लोगों से घिनाता है और न कभी हमारे सुख-दुःख से हर्ष या विषाद से उससे कुछ सरोकार है। फिर वह अंगरेजी भाषा में है, इसलिए सर्वसाधारण को उससे कुछ लाभ नहीं पहुँच सकता।[5]

हिन्दी पत्रकारिता ने फारसी बोझिल उर्दू और अंग्रेजी की कमियों की ओर इशारा करते हुए अपनी भाषा के खड़ी और पड़ी बोली के संघर्ष पर भी ध्यान दिया। पद्य के समुचित विकास के आगे हिन्दी के गद्य विकास की आवश्यकता पर विचार करते हुए हरदेव प्रसाद ने 'हिन्दी प्रदीप' के अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर, सन् 1889 के अंक में लिखा, 'गद्य के द्वारा हिन्दी का भांडार बढ़ाइये जिस्के लिए हिन्दी अत्यन्त लालायित हो रही है अच्छे-2 उपन्यास रचिये जीवन चरित्र लिखिये विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थों का उलथा कर डालिये हां यदि हिन्दी कविता का सम्पूर्ण लालित्य और मिठास छार में मिलाय रूखी उर्दू का बच्चा इसे बनाया चाहते हो तो खड़ी और पड़ी भाषा के बारे में खूब लड़िये झगड़यि फलसिद्धि कुछ न होगी।'[6] दरअसल भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता की मूल चिन्ता अपने जातीय भाई-बंधुओं को अज्ञान के गहन अन्धकार से निकालने की थी और इसी हेतु जातीय भाषा के पत्रों के प्रकाशन पर इतना जोर था। कलकत्ते से प्रकाशित 'भारतमित्र' ने अपने पहले अंक में लिखा, 'बड़े आश्चर्य की बात यह है कि आज तक कोई ऐसा कोई समाचार पत्र नहीं प्रचारित हुआ जिससे हियां के हिन्दुस्तानी लोग भी पृथ्वी के दूसरे लोगों की तरह अपने अक्षर अपने बोली में पृथ्वी की समस्त घटना जान सकें। क्या यह बड़े पछतावे की बात नहीं है जब कि इस 19वीं सदी में बंगाली तथा अन्यान्य जाति के आदमी अपनी-अपनी बोली में केवल एक समाचार पत्र की उन्नति से विद्या में ज्ञान में दिन-दिन उन्नत हुए जाते हैं और हमारे हिन्दुस्तानी भाई केवल अज्ञान की खटिया पर पैर फैलाये हुए पड़े हैं और ऐसा कोई नहीं जो इनको उस खटिया पर से उठा के ज्ञान की किरण उनके अन्तःकरण में प्रकाश करे। बहोत दिनों से हम आशा करते थे कि कोई विद्वान बहुदर्शी आदमी इस अभाव को दूर करने की चेष्टा करेंगे परन्तु यह आशा परिपूर्ण न हुई । इस आशा के परिपूर्ण न होने से बहोत से हिन्दुस्तानियों को सांसारिक खबर जानने के लिए बंगालियों का मुँह ताकते देखकर हमारे चित्त में यह भाव उत्पन्न हुआ कि यदि एक ऐसा समाचारपत्र प्रचलित हो कि जिसको हमारे हिन्दुस्तानी और मारवाड़ी लोग अच्छी तरह पढ़ सकें तो इससे हमारे समाज की अवश्य उन्नति होगी।'[7] तत्कालीन हिन्दी पत्रकारिता के विकास का मूल उद्देश्य समाज की उन्नति का यह भाव ही था।

'सारसुधानिधि' संपादक सदानंद मिश्र ने भी हिन्दी की उन्नति में ही जातीय उन्नति की बात करते हुए लिखा, 'हमलोगों को मुनासब है कि जिसमें देश की उन्नति हो और निष्कपट और निर्दोष सभ्यता की वृद्धि हो, ऐसे उद्यम उपाय और यत्न करें । इसलिए जब हम सोचते हैं तो प्रथम दृष्टि हमारी भाषा पर पड़ती है, क्योंकि जब तक निष्कपट विशुद्ध भाषा की उन्नति नहीं होगी तब तक निष्कपट सभ्यता और देश की उन्नति भी नहीं होगी, इससे उचित है कि पहले भारतवर्ष की प्रधान और प्रसिद्ध चांद वे गहन हिन्दी की उन्नति करें और अपने राजपुरुषों को दिखावें कि जिन्होंने बे जाने पहिचाने उर्दू को अपने घर का इतना अधिकार दे दिया है कि जिस कारण कपट आदि कितनी ही बातों की वृद्धि और प्रजा की विशेष क्षति और हानी होती है। और सुसभ्य जाति को तो सरलता ही अंगीकार करना उचित है, क्योंकि सीधी चाल चलन, बोलचाल और सीधा व्योहार सभ्यता का प्रधान लक्षण है इसलिये हम अपने पाठकों से अनुरोध और प्रार्थना करते हैं कि जो भाषा सरल कोमल और प्रांजल भारत भूमि की चिर परचिता है और जिसकी सहचरी और सहेली उपर कही हुई बंगला आदि निष्कण्ट प्रचलित हैं उसी अपूर्व सुन्दरी हिन्दी की चित्त से सहायता और उन्नति करें।'[8]

'सारसुधानिधि' संपादक ने अपने पत्र में हिन्दी की उन्नति से संबंधित कई लेख प्रकाशित किए । 'हिन्दी की सौभाग्य' शीर्षक लेख में उन्होंने ब्रिटिश गवर्नमेंट के समक्ष शासन और अदालतों में हिन्दी प्रचलन की अपील और उसके समर्थन में तर्क रखते हुए लिखा, 'जब तक देश की मातृभाषा उन्नत नहीं होती है तब तक देश भी उन्नत भावधारण नहीं कर सकता है ।... हमारी भारत गवर्नमेण्ट को चाहिए कि

भारतवर्ष की बहु दूर देशव्यापी हिन्दी भाषा को अपने राजकाज में स्थान देवें। हिन्दी भाषा और देवनागरी अक्षरों का चलन गवर्नमेण्ट के हर विभागों में होना उचित है । इसके प्रचलित होने से प्रथम तो लोगों को इतना सुवीता हो जायगा कि दूसरी भाषा के सीखने में इस देश वालों को जो कठिनता होती है वह न होगी । दूसरे जब जो अदालतों के कागज पत्र, पट्टा, कवाला, सनद दलील, पर्वाना, डिग्री, आदि जो कुछ लिखा पढ़ी होता है उपर के गिनाये हुए प्रदेशों में उर्दू भाषा और फारसी अक्षरों में लिखा जाता है । इस कारण देश की कितनी हानी होती है वे कह के शेष नहीं हो सकती, उन हानियों का यदि उल्लेख करें तो एक पुस्तक बन जाय।'[9] इस प्रकार हम देख सकते हैं कि तत्कालीन पत्रकारिता ने जातीय भाषा की प्रगति के लिए हरसंभव प्रयास किया था ।

कुल मिलाकर हम भारतेन्दुयुगीन हिन्दी पत्रकारिता में जातीय चेतना के उत्कृष्टतम रूप के दर्शन पाते हैं। साहित्य की अन्य विधाओं में जहाँ पाठक की रूचि के अनुसार चयन का एक सवाल रहता है वहाँ पत्र-पत्रिकाएँ सीधे-सीधे प्रथमतया पूरे समाज तक पहुँचती हैं और इस प्रकार इनका प्रभाव क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो उठता है। चूंकि भारतेन्दुयुगीन पत्र संपादक पत्रकारिता की इस शक्ति से भलीभांति परिचित थे अतः उन्होंने पत्रकारिता को जातीय चेतना के प्रचार-प्रसार के लिए सबसे अहम् साधन के रूप में विकसित किया था।

इतना ही नहीं, भारतेन्दुयुगीन पत्रकार-संपादकों ने जातीय उन्नति के अपने प्रण को पूरा करने के लिए अपना सर्वस्व दांव पर लगा दिया था । विपरीत परिस्थितियों के बीच भी तत्कालीन हिन्दी पत्रकारिता जिस संकल्प और दृढ़ता के साथ विकास की सीढ़ियां चढ़ती गई, उसका विश्लेषण हमें रोमांचित कर देता है । डा. रामविलास शर्मा ने उस समय के पत्रकार-संपादकों पर लिखा, 'बंगाल, बिहार, युक्तप्रांत, पंजाब, बम्बई और राजपूताना में जो पत्र निकले उनमें व्यक्ति गत चेष्टा और अध्यवसाय अधिक था, सभा-समितियों अथवा धनी व्यक्तियों का सहयोग कम था। तब के सेठ लोग आज की ही भाँति अथवा आज से भी अधिक भाषा और साहित्य की ओर से उदासीन थे। इसीलिए 'ब्राह्मण' जैसे पत्र को दो आना मूल्य रखते हुए भी ग्राहक बनने के लिए लोगों से अपीलें करनी पड़ती थीं। सरकार के प्रेस-ऐक्ट आदि का भय अलग था। इन सब कठिनाइयों के होते हुए भी उस युग के समर्थ पत्रकारों ने कलकत्ता, लाहौर और बम्बई के त्रिकोण में हिन्दी-पत्रों का एक जाल-सा बिछा दिया।'[10] हिन्दी जाति को उसकी शक्ति और गौरव-बोध से परिचित करानेवाले भाषा और समाज चिंतक का यह कथन भारतेन्दुयुगीन पत्रकारिता के साथ ही हिन्दी भाषा और जाति की अदम्य जिजीविषा की भी कहानी बयां करता है।

सन्दर्भ :

1. सिंह ओमप्रकाश (सं.), भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ग्रंथावली, खंड-6, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन् 2008, पृ.- 257
2. वही, पृ.-322
3. वही, पृ.-311
4. 'सरल' धनंजय भट्ट (सं.), हिन्दी की दशा और पत्रकारिता, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1983, पृ.-86
5. वही, पृ.-98
6. 'हिन्दी प्रदीप', जिल्द-13, संख्या-2-3-4, अक्टूबर-नवम्बर-दिसम्बर, सन् 1889
7. शंभुनाथ तथा रामनिवास द्विवेदी (सं), हिंदी पत्रकारिता ?हमारी विरासत, खंड-1, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2012, पृ.-88
8. शिशिर कर्मेन्दु(सं.), नवजागरणकालीन पत्रकारिता और सारसुधानिधि, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृ.-354-355
9. वही, पृ.-356
10. शर्मा रामविलास, भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, परिवर्द्धित पहला संस्करण, 1975, पृ.-28

●

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
स्कॉटिश चर्च कॉलेज, कोलकाता
E mail : birendra_scottish@yahoo.in
मो.-9331265343

हिन्दी साहित्य मे नारीं विमर्श

अंजना देवी,

भारतीय नारी सदा से उच्चतर सांस्कृतिक मूल्यों की वाहक रही है। दया, क्षमा, विनय अहिंसा, श्रद्धा, सेवा त्याग जैसे मूल्य उसके स्वभाव के अंग रहे हैं। भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ अंश को नारी ने ही बचाया है। यहां की परम्परा में जो कुछ भी श्रेष्ठ है, सत्य, शिव और सुन्दर है, रक्षणीय है, उसका आधार नारी रही है। नारी जहां विपत्ति विनाश के लिए दुर्गा शक्ति भी बनती आई है, वही अज्ञान के अंधकार को मिटाने वाली सरस्वती तथा दीनता और निर्धनता को हरने वाली लक्ष्मी है। **सीता-सावित्री, आत्री-अनुसूया, जीजाबाई, लक्ष्मीबाई,** अनेक रूपों में भारतीय नारी ने भारतीय संस्कृति की रक्षा की है। वस्तुतः भारतीय साहित्य तो नारी चित्रण से ओत-प्रोत है। उन्नीसवीं शताब्दी में भारतीय नवजागरण के समानान्तर विकसित होने वाले भारतीय साहित्य में भी स्त्रियो की दीन-दशा को दर्शाते हुए उनके उन्नयन का स्वर मुखरित होने लगा था। आधुनिक हिन्दी साहित्य के निर्माता भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने भी 1868 में अपनी पत्रिका, 'कवि वचन सुधा' में नारी नर सम-होंहि, जैसा उद्घोष कर आधुनिक साहित्य के प्रमुख विषयों में नर नारी समता को एक महत्त्वपूर्ण मुद्दे के रूप में स्थापित किया, जिसका उत्तरोतर विकास होता गया। द्विवेदी युगीन छायावादी कवियों, लेखकों, प्रेमचन्द जैसे साहित्यकारों ने सदियों से पीड़ित, उपेक्षित स्त्री जाति की विभिन्न समस्याओं को अपने लेखन का विषय बनाते हुए नारी मुक्ति के जागरण को उभारा एवं स्त्री के प्रति रूढ़िवादी दकियानूसी सोच में बदलाव को प्रेरित किया। महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम में स्त्रियों को शामिल कर स्त्री-पुरुष के बीच स्थापित भेद को कम करने में सराहनीय पहल की।

हिन्दी साहित्य जगत में महादेवी वर्मा की प्रतिनिधि गद्य रचनाओं में नारी विमर्श को लेकर अधिक वर्णन मिलता है। उनके पांच आलेख सीधे नारी विमर्श से सम्बन्धित हैं। उनमें **'युद्ध और नारी', 'नारीत्व का अभिशाप', स्त्री के अर्थ स्वातन्त्रय प्रश्न,** नए दशक में महिलाओं का स्थान प्रथम चार श्रृंखला की कड़ियां से और पांचवा सम्भाषण से है। युद्ध और नारी महादेवी वैश्विक फलक पर बात शुरु करती है। युद्ध के मूल में छुपा हिंसक जन्तु एवं बबर्रता मानती हुई तथ्यों को मनोवैज्ञानिक आधार देती कहती है,' **इन पवित्र गृहों की नींव स्त्री की बुद्धि पर रखी गई है, पुरुष की शक्ति पर नहीं। अपनी सहज बुद्धि के कारण ही स्त्री ने पुरुष के साथ अपना संघर्ष नहीं होने दिया। वह मानते हैं कि स्त्री शारीरिक और मानसिक दृष्टि से युद्ध के उपयुक्त नहीं है। युद्ध**

उसके विकास में बाधक रहा है। युद्ध ने ही द्रोपदी को न महिमामय जननी बनने दिया और न ही गौरवान्वित पत्नी,' पुरु ष और स्त्री के स्वभाव में कुछ मुलभूत अंतर हैं। स्त्री के स्वभाव और गृह के आकर्षण ने पुरु ष को युद्ध से कुछ विरत भले ही किया हो, युद्ध, कर्म और संघर्ष उसकी मूलवृत्ति है।'

नारीत्व और अभिशाप में महादेवी दो पौराणिक प्रसंग देती हैं - न माता का वध करते हुए परशुराम का हृदय पिघला और न सीता को धरती में समाहित होते देख राम का हृदय विदीर्ण हुआ। पुरुष युगों से नारी के हर त्याग को अपना अधिकार और उसके हर बलिदान को उसकी दुर्बलता मानता आया है। स्त्री की हतसंज्ञता के पीछे उसका सदियों से चला आ रहा शोषण ही है। 'हम जब बहुत समय तक अपने किसी अंग से उसकी शक्ति से अधिक कार्य लेते हैं तो वह शिथिल और संज्ञाहीन सा हुए बिना नहीं रहता।' नारी जाति भी समाज को अपनी शक्ति से अधिक देकर अपनी सहनशक्ति से अधिक त्याग स्वीकार करके संज्ञाहीन सी हो गई है। घर और समाज दोनों ही स्थलों पर उसकी हालत करूण है। न उसे मायके में स्नेह और अधिकार मिलते हैं और न ही ससुराल में। स्त्री की गुणहीन या सर्वगुण सम्पन्न होना दोनों ही स्थितियां पुरु ष को स्वीकार्य नहीं है। यदि वह अति आकर्षक है तो पुरुष उसे रंगीन खिलौने की तरह समझेगा और यदि कुरू प है तो उपेक्षा की वस्तु बन जाएगी-दोनों ही स्थितियां अपमानजनक हैं। स्त्री अगर सीधी सादी है तो उसे इस दोष के कारण और यदि पति से इक्कीस है तो दोषों के अभाव के कारण पति की अप्रसन्नता झेलनी ही पड़ती है। उसकी किसी क्यों का उत्तर देने के लिए न पति बाध्य है, न समाज बाध्य है, न धर्म बाध्य है। चाहे वह स्वर्ण पिंजर की बंदिनी हो, चाहे लोह पिंजर की, परन्तु बन्दिनी तो वह है ही और ऐसी कि जिसके निकट स्वतन्त्रता का विचार तक पाप माना जाता है।

स्त्री चाहे बाल विधवा हो, समाज उसे तापसी के रूप में ही देखना चाहता है। वैधव्य उसके जीवन में घोर अपराध तथा दंड के रूप में आता है। युगों से दासत्य भोग रही स्त्री आत्मरक्षा का साहस भी खो चुकी है। स्थिति यह है कि हम पशु-पक्षियों को, पाषाणों को, अपनी सहानुभूति बांट सकते हैं। नारी को निर्मम आदेश के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे पाते। देवता की भूख हम समझते हैं, मानव की नहीं। अंत में महादेवी लिखती है, 'आवश्यकता है एक ऐसे देशव्यापी आंदोलन की जो सबको सजग कर दे, मनुष्य जाति के कलंक के समान लगने वाले इन अत्याचारों का तुरन्त अंत हो जाए, अन्यथा नारी के लिए नारीत्य अभिशाप तो है ही।'

तृतीय निबन्ध 'आधुनिक नारी' दो भागों में विभक्त है। आधुनिक नारी ने यत्न और परिश्रम से उस भावुक्ता को नष्ट करने का संकल्प किया है, जिसका आश्रय लेकर पुरुष उसे रमणी समझता आया है, उस गृह बंधन को छिन्न-भिन्न करने का प्रयास किया है, जिसकी सीमा ने उसे भार्या बनाया है, उस कोमलता को कुचलने का यत्न किया है, जिसके कारण पुरुष को रक्षक बनना पड़ता था। निस्संदेह स्त्री ने अर्थ-स्वातंत्रय प्राप्त किया है, किन्तु उसका प्रसाधन मोह स्पष्ट करता है कि परम्परागत रमणत्व से वह मुक्ति चाहती ही नहीं। भारतीय परम्परागत संस्कार, विषम परिस्थितियां, और प्रतिद्वन्द्विता के भावों ने उसका मार्ग रोक रखा है।

महादेवी स्त्रियों को तीन भागों में बांटती है - **1. राजनीतिक आन्दोलन में पुरु षों का साथ देने वाली स्त्रियाँ। 2. शिक्षा को आजीविका बनाने वाली स्त्रियां। 3. शिक्षा और आधुनिकता से युक्त सम्पन्न वर्ग की स्त्रियां।** वे मानती हैं कि राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने वाली स्त्रियों ने आधुनिकता को जागृति के रूप में देखा। कंकण और कृपाण में, गृहस्थ और राष्ट्रीय संघर्ष में समन्वय स्थापित किया, किन्तु स्वातंत्रयोतर काल में उसे संतुलित जीवन न मिल सका।

महादेवी वर्मा ने स्त्री के अर्थ स्वातंत्र्य के प्रश्न पर भी विचार किया है। आर्थिक स्तर पर भारतीय स्त्री नितान्त रंक एवं परतंत्र रही है। उसे कभी भी सहयोगिनी नहीं माना गया। किसी भी स्मृतिकार या शास्त्रकार ने उसकी आर्थिक समस्या पर विचार नहीं किया। इस देश में नारी को देवत्व देकर उसे पूजा की वस्तु बना दिया गया। उसके मौन जड़ देवत्व में ही पुरुष अपना कल्याण समझने लगा। उसके चारों ओर संस्कारों का क्रूर पहरा बिठा दिया गया। उसकी निश्रेष्ठता को भी उसके सहयोग और संतोष का सूचक माना गया। लेकिन उसे मानवी मानते हुए मानवाधिकारों की बात सर्वप्रथम 19वीं शताब्दी के समाज सुधारकों ने ही की है। संसार ने स्त्री के संबंध में अर्थ का ऐसा विषम विभाजन किया है कि साधारण श्रमजीवी वर्ग से लेकर सम्पन्न वर्ग की स्त्रियों तक की दयनीय स्थिति ही कही जाने योग्य हैं। वह केवल उत्तराधिकार से ही वंचित नहीं है, वरन् अर्थ के क्षेत्र में एक प्रकार की विवशता के बंधन में बधी हुई है। कहीं पुरुष ने न्याय का सहारा लेकर और कहीं अपने स्वामित्व की शक्तिसे लाभ उठाकर इसे इतना अधिक परावलम्बी बना दिया है कि वह उसकी सहायता के बिना संसार पथ पर एक भी पग आगे नहीं बढ़ा सकती, अर्थ संकट ही स्त्री को उस अवस्था तक ले जाता है, जिसे समाज पतिता कहता है।

मुंशी प्रेमचन्द की रचनाओं में भी नारी जीवन के विभिन्न स्वरू पों का चित्रण मिलता है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में नारी के माता रूप को सर्वोपरी माना है। उन्होंने 'गोदान' उपन्यास में लिखा है कि नारी केवल माता है और उसके पश्चात् वह जो कुछ भी है वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, तपस्या, त्याग सबसे महान् विजय है। प्रेमचन्द के साहित्य में स्त्री-पुरु ष स्वच्छन्द प्रेम की समस्या पर भी विचार विमर्श मिलता है। उनके मतानुसार विवाह से पूर्व भावी पति पत्नी का पारस्परिक परिचय होना व एक दूसरे की रु चियों को जानना आवश्यक है। उनकी धारणा है कि माता-पिता द्वारा निश्चित किये गए विवाह आदर्श विवाह तो होते हैं, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से वे संतोष जनक नहीं होते क्योंकि विवाह के बाद कोई विकल्प नहीं रहता। 'गोदान' के पात्र 'मेहता' के माध्यम से प्रेमचन्द जी कहते हैं, **'कि विवाह को मैं एक सामाजिक समझौता मानता हूं और उसे तौड़ने का अधिकार न पुरु ष को और न ही स्त्री को। समझौता करने से पहले आप स्वाधीन हैं तथा समझौता होने के बाद आपके हाथ कट जाते है।'**

'रंगभूमि' की सोफिया के विचार मेहता के विचार के समान हैं। वह आध्यात्मिक प्रेम को असंभव मानती है वह कहती है कि पहले मैंने समझा था कि उनसे केवल आध्यात्मिक प्रेम करूंगी। विधित हो रहा है कि आध्यात्मिक प्रेम या भक्ति केवल धर्म जगत की ही वस्तु है। स्त्री और पुरुष में पवित्र प्रेम होना असंभव है। इस प्रकार प्रेमचन्द जी ने प्रेम के भौतिक पक्ष की उपेक्षा नहीं की है, परन्तु उसके रू प का भी समर्थन किया है। प्रेमचन्द जी के रचनाकाल में विधवा कल्याण के लिए अनेक आंदोलन हुए उस समय विधवा नारी के नरक तुल्य कष्टमय जीवन का कारण उनकी निर्धनता व विपन्नता तो थी ही, परन्तु अधिक महत्त्वपूर्ण कारण था नारी शिक्षा का अभाव व स्त्रियों को समान अधिकार प्राप्त न होना। प्रेमचन्द ने विधवा नारी के जीवन के अनेक पक्षों का चित्रण किया है। 'वरदान' की वृजरानी के संबंध में वह कहते हैं कि, **'सौभाग्यवती स्त्री के लिए उसका पति संसार की सबसे प्यारी वस्तु होती है। वह उसी की लिए जीती है और उसी के लिए मरती है। उसका हंसना बोलना उसी को प्रसन्न करने के लिए और उसका बनाव श्रृंगार उसी को लुभाने के लिए होता है। उसका सुहाग उसका जीवन है और सुहाग का उठ जाना उसके जीवन का अंत है।'** 'निर्मला' उपन्यास में विधवा कल्याणी के सामने उसकी युवा पुत्री के विवाह की समस्या का चित्रण मिलता है। उपन्यास की पात्र दरिद्र विधवा के लिए इससे बड़ी और क्या विपत्ति हो सकती है

कि जवान बेटी सिर पर सवार हो। वह अन्य समस्त कष्टों को सहन कर सकती है, परन्तु 'युवती कन्या को घर में नहीं बिठाया जा सकता। दहेज के अभाव में वह अपनी पुत्री का विवाह एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति से कर देती है।

प्रेमचन्द ने दहेज प्रथा को एक अभिशाप माना है। 'निर्मला' उपन्यास में उन्होंने इस समस्या को उभारा गया है। निर्मला सर्वगुणसम्पन्न नारी है, परन्तु उसके हृदय में विप्लव की प्रचण्ड अग्नि है। वह सोचती है-**'मेरे लिए जीवन में कोई आनन्द नहीं हैं।** उसका स्वप्न देखकर क्यों इस जीवन का नष्ट करुं।' वह स्वयं को अभागिन समझती है उसका विचार है कि विधाता ने उसे दुःख की गठरी ढोने के लिए चुना है। वह तो ढोनी ही पड़ेगी। वह एक ऐसी उम्रकैदी है, जिस पर किसी को दया नहीं आती।

नारी जीवन के विविध आयामों के अन्तर्गत प्रेमचन्द ने वेश्या समस्या का भी विशद विश्लेषण किया है। वे वेश्यावृति का कारण अशिक्षा, कुरीतियां, आर्थिक अभाव, अनैतिकता व संस्कारहीनता को मानते हैं। साथ ही उन्होंने पुरुषों की वासनावृत्ति को वेश्यावृत्ति का एक महत्त्वपूर्ण कारण माना है। 'सेवासदन' उपन्यास के पद्मसिंह कहते हैं, **'आप यह मानते हैं कि बाजार में वही वस्तु दिखाई देती है, जिसके ग्राहक होते हैं और ग्राहकों के न्यूनाधिक होने पर वस्तु का न्यूनाधिक होना निर्भर है। यदि कोई मांस न खाए तो बकरे की गर्दन पर छुरी क्यों चले?'** अतः स्पष्ट है, कि प्रेमचन्द ने वेश्याओं का उपयोग करने वाले व उन्होंने बढ़ावा देने वाले लोगों को बकरे की गर्दन पर छुरी चलाने वाले के समान ही पाप का भागी माना है। प्रेमचन्द ने वेश्याओं के उद्धार के लिए स्त्री व पुरुष दोनों में संयम, सेवा, त्याग व परोपकार की भावना जागृत करने की आवश्यकता पर बल दिया है– अशिक्षा नारी दुर्दशा का एक महत्त्वपूर्ण कारण है जिसके लिए प्रेमचन्द ने नारी-शिक्षा का समर्थन किया। उनकी मान्यता है कि नारी अपने अधिकारों व कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक होकर अपने पैरों पर खड़ी हो सके, तभी नारी-शिक्षा सार्थक है। वे उच्च शिक्षित नारी द्वारा परम्परागत सामाजिक मर्यादाओं के उल्लंघन को अनुचित मानते हैं। गोदान में उनकी यही धारणा व्यक्त हुई है। प्रेमचन्द के नारी-पात्रों में राजनैतिक चेतन व राष्ट्र प्रेम की उद्दात भावनाएं भी दृष्टिगत होती हैं। 'गबन' की जग्गो जैसी अशिक्षित नारी का चरित्र इसी कारण प्रभावशाली बन पड़ा है। शिक्षित नारियों के विचार इस सम्बन्ध में अधिक परिष्कृत व तार्किक हैं। 'कर्मभूमि' की सुखदा का हृदय परिवर्तन जनता का बलिदान देखकर होता है और बाद में वह प्रदर्शनकारियों का नेतृत्व करती है व जेल भी जाती है। इस प्रकार प्रेमचन्द ने नारी पात्रों के माध्यम से नारी जीवन के विभिन्न रूप दर्शाये हैं। उन्होंने भारतीय व पाश्चात्य नारी के स्वरूप का चित्रण करते हुए नारी के प्राचीन आदर्श रूप को ही उपयुक्त माना है। उसके मतानुसार नारी-शिक्षा उसे स्वावलम्बी बनने के लिए आवश्यक है।

सामयिक यथार्थ बोध से जुड़े हिन्दी साहित्य की कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास आदि विधाओं में नारी समस्याओं का कारण मिलता है वस्तुतः हिन्दी कथा साहित्य के आरम्भिक चरण में ही तिलिस्म एवं ऐय्यारी किस्म की मनोरंजकता के लिए चर्चित 'चन्द्रकान्ता' एवं 'चन्द्रकान्ता संतति' जैसे उपन्यासों का नामकरण स्त्री चरित्रों पर आधारित होना स्त्री महत्त्व को उजागर करने वाला है। हिन्दी कथा साहित्य में युगान्तर उपस्थित करने वाले प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों एवं **'वरदान', 'सेवा सदन'** और **'निर्मला'** जैसे उपन्यासों से **दहेज, बेमेल विवाह, वेश्यावृति** जैसी समस्याओं के प्रति समाज की जड़ता पर कठोर प्रहार किया। पुरुष वर्चस्व से स्त्री की मुक्ति व उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व के प्रतिपादन के कार्य प्रसाद, निराला, उग्र, जैनेन्द्र, यशपाल, अज्ञेय आदि ने अपनी-अपनी कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से, तो महादेवी वर्मा जैसी लेखिका ने लेखों के माध्यम से सम्पन्न किये। स्त्री जीवन से जुड़ी समस्याओं के

चित्रण के जो उपक्रम औपनिवेशिक काल में रचित साहित्य में किये गये, उनका निर्वाह उत्तर औपनिवेशिक काल के कथा साहित्य में और गम्भीरतापूर्वक हुआ। इधर दो-तीन दशकों के दौरान हिन्दी कथा लेखन के क्षेत्र में ऐसी महिलाओं का भी आगमन हुआ है, जो नारी उद्धार के लिए पुरुषों का मोहताज रहने के बजाए खुद इस दिशा में सदियों पुरानी स्थापित दकियानूसी रुढ़ियों एवं वर्जनाओं को चुनौती देने का साहस प्रकट करने लगी है।

वर्तमान दौर में लिखे जा रहे कथा-साहित्य को देखकर लगता है कि अब स्त्री की मुक्ति से जुड़े विभिन्न आयामों को बड़ी प्रखरता से अभिव्यक्ति मिलने लगी है। पहले के लेखन में स्त्रियों की दीन दशा के प्रति करूणा का भाव पैदा करना एक बड़ा लेखकीय दायित्व समझा जाता रहा है जबकि करूणा की जगह पर महिलाओं के अंदर अपनी दुर्दशा के प्रति आक्रोश एवं आक्रामकता के भाव प्रकट होने लगे हैं-परिवार से लेकर समाज, राजनीति क्षेत्रों में समान अधिकारों के लिए वे जुझारूपन दिखाने लगी है। अब वह न **'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी, आंचल में दूध आंखो में पानी'** को अपनी नीति मान कर चुपचाप बैठने वाली है, न ही **'नारी तुम श्रद्धा हो'** जैसी विरुदावली से आत्म मुग्ध होकर संतुष्ट होने वाली है। वह तो अब नाना व्यवधानों, रूढ़ियों, वर्जनाओं को झटकते हुए शिक्षा, राजनीति, नौकरी, प्रशासन, विज्ञान प्रोद्योगिकी, फिल्म, गायन, नृत्य आदि विभिन्न क्षेत्रों में अपनी गुणवत्ता को प्रकट करते हुए पुरुष श्रेष्ठता के शिला-दंभ को तिरोहित करने वाली प्रबल जलधारा सदृश अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है। इधर कुछेक वर्षों के दौरान छपे **'मुझे चांद चाहिए'**, **'छिन्नमस्ता'**, **'चाक'**, **'अल्माकबूतरी'**, **'आँवा'** जैसे उपन्यासों में पुरुष-वर्चस्व के विरोध में ऐसा ही स्त्री- तेवर का उभार देखने को मिलता है।

'मुझे चांद चाहिए' सुरेन्द्र वर्मा का उपन्यास है जिसमें एक कस्बाई परिवेश में पली-बढ़ी लड़की की 'चांद' जैसे अप्राप्य को प्राप्त कर लेने की महत्त्वकांक्षा रूपायित हुई है। उपन्यास की नायिका यह लड़की अपनी इच्छा के अनुरूप घरेलु नाम सिलबिल का परित्याग कर वर्षा वशिष्ठ जैसा नाम धारण करती है और उँचे से उँचे तक पहुचंने की महत्त्वकांक्षा को मूर्तरूप देने के लिए वह पारंपरिक पारिवारिक सीमाओं का अतिक्रमण कर दिल्ली की राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में दाखिला लेती है। जातिगत बंधनों की परवाह न करते हुए वह हर्ष नामक युवक से प्रेम करती है और बगैर विवाह किये ही वह उसके बच्चे की मां भी बन जाती है। प्रभा खेतान के उपन्यास **'छिन्नमस्ता'** की नायिका प्रिया एक विद्रोही स्त्री-चरित्र के रूप में सामने आती है जिसे प्रेम, सेक्स, विवाह आदि सदियों पुराने घिसे हुए शब्द लगते हैं। वह पीहर से लेकर सुसराल तक, मां से लेकर पति तक उपेक्षा, अवमानना का दंश झेलते हुए अतंतः अपनी स्वतंत्र इयत्ता के पक्ष में उठ खड़ी होती है। अपनी इच्छाओं को पति की अनुमति की दासी नहीं बनने देती बल्कि अवरोध बनने वाले पति से संबंध विच्छेद कर वह अपने स्वत्रंत व्यक्तित्व के विकास को नयी गति एवं दिशा देती है। 'चाक' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने सारंग नेनी के रूप में एक ऐसी स्त्री के रूप में प्रस्तुत किया है जो अपनी बहन रेशमा के हत्यारे के साथ अपने पति की समझौतावादी नीति के विरूद्ध खुद संघर्ष में उतर पड़ती है और पति के ना चाहने के बावजूद राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करने की दिशा में सक्रिय हो उठती है।

इस प्रकार देखा जाए तो इधर के उपन्यासों में ऐसी स्त्री-पात्रों का अवतरण हुआ है, जो केवल घर-गृहस्थी, पत्नी का पारंपरिक कर्तव्य-सीमा सीमित रहने वाली नहीं है, न ही पारंपरिक दायरे में बंधे रहकर कुछ सामाजिक अधिकारों एवं सम्मान को प्राप्त कर लेने से संतुष्ट रहने वाली है अपितु अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए कतिपय नैतिक एवं पारिवारिक बंधनों एवं यौन-वर्जनाओं को ध्वस्त करते हुए अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व को स्थापित करने में सचेष्ठ दिखाई

पड़ती है। लेकिन वर्जनाओं के निषेध के नाम पर सब कुछ ठीक हो रहा है, यह नहीं कहा जा सकता। कई लेखक एवं लेखिकाएं तो स्त्री-मुक्ति के प्रश्न को सिर्फ यौन-मुक्ति का प्रश्न बनाने में लगे हुए हैं। इन सब की दृष्टि में स्त्री-मुक्ति के लिए आर्थिक-राजनीतिक अधिकारों को हासिल करने की तुलना में यौन-इच्छाओं की मनमाने ढंग से पूर्ति करने का अधिकार अधिक महत्त्वपूर्ण हो उठा है। इनके लिए एक पतिव्रता या एक पत्नीव्रता या फिर वैवाहिक संबधों में निष्ठा एवं वफादारी जैसी मूल्य सामंती समाज के होने के कारण वर्तमान संदर्भ में अप्रासंगिक हो चुके हैं, अतएव स्त्री-पुरुष के संबंधों में पूरी स्वच्छेदता होनी चाहिए। यौन-तुष्टि के लिए स्त्री जब चाहे अपना पार्टनर बदलने को स्वतंत्र है, विवाह पूर्व या विवाह के बाद भी इतर यौन संबंध मौलिक अधिकार है, तभी तो 'मुझे चांद चाहिए' की वर्षा विशिष्ठ विवाह से पूर्व ही अपने प्रेम को अपनी देह अर्पित कर देती है। **'चाक'** में सारंग नैनी अपने पति की कायरता के प्रति वितृष्णा अपनी देह पर पुरुष श्रीधर को समर्पित करके व्यक्त करती है। कहानी लेखिका लवलीन ने अपनी कहानी 'चक्रवात' में कीर्ति के रूप में एक ऐसी 'बोल्ड' औरत को प्रस्तुत किया है जिसके लिए पुरुष कोई संबध नहीं, मात्र यौन तृप्ति देने वाला साधन है जिसे जब जी चाहे बदला जा सकता है। राजेन्द्र यादव की कहानी 'हासिल' की स्वपना संदीप की बाप के उम्र वाले व्यक्ति से भी यौन सम्बन्ध कायम करने में परहेज नहीं करती।

इस प्रकार वर्तमान कथा-साहित्य में जहां जीवन के आर्थिक, सामाजिक गैर-बराबरी के विरुद्ध स्त्रियों की संघर्षशीलता के चित्रण हो रहे हैं। वहीं **बोल्डनेस** एवं विद्रोह के नाम पर योन-स्वच्छ्दंता की भी वकालत की जा रही है जो स्त्री-मुक्ति आंदोलन का स्वस्थ विकास नहीं कहा जा सकता। महादेवी वर्मा से लेकर महाश्वेता देवी, लता मंगेशकर, मेघा पाटेकर, किरण वेदी, कल्पना चावला आदि स्त्रियों ने विभिन्न क्षेत्रों में कर्म एवं संघर्षरत रहकर जिन नारी उप्रलब्धियों को सामने रखा है, वे ही स्त्री विमर्श का विषय बनकर स्त्री-मुक्ति के प्रश्न को सही दिशा दे सकते है।

किसी भी संस्कृति, समाज और देश के विकास का मापदण्ड उसमें नारी की स्थिति मानी जाती है। भूमण्डलीकरण के इस युग के शिक्षित एवं स्वयंवरा होने के प्रमाण मिलते हैं। जब हम शिव को अर्ध नारीश्वर कहते हैं, तो भारतीय समाज में नारी के भौतिक एवं आध्यात्मिक उच्चासन का पता चलता है, किन्तु कालान्तर में ना जाने कैसे उसे सातवें आसमान से जमीन पर पटक दिया गया। 'सीता पत्नी होने के कारण कष्ट सहने को बाध्य थी और राधा पत्नी न होने के कारण। तंत्र साधक अलौकिक शक्ति प्राप्त करने के लिए स्त्री को साधन बनाने की साधना करते थे और निर्गुणवादी संत उसे माया कहकर छोड़ने की साधना करते थे। कहीं वह देवताओं के मनोरंजन के लिए देवदासी बनी और कहीं पुरुष के मनोरंजन की सामग्री। फिर भी भारतीय नारी का संघर्ष वर्गगत अधिकारों के लिए न होकर सम्पूर्ण देश की स्वतंत्रता के लिए था। प्रथम मुक्ति संग्राम, आजाद हिन्द फौज की नारी सैनिकाएं, द्वितीय स्वतंत्रता आंदोलन की नेत्रियां एवं सशस्त्र क्रांति में योगदान देने वाली स्त्रियों का योगदान उल्लेखनीय है। **1916 में एनीबेसेन्ट तथा 1925 में सरोजनी नायडू पुरुष प्रधान** कांग्रेस की अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित हुई। विजयलक्ष्मी पंडित प्रथम मंत्री, सुचेता कृपलानी प्रथम मुख्यमंत्री, सरोजिनी नायडू प्रथम राज्यपाल एवं इंदिरा गांधी प्रथम महिला प्रधानमंत्री बनी। ब्रिटेन, फ्रांस, अमेरिका में नारी को लम्बे संघर्ष के बाद क्रमशः **1918, 1920, एवं 1944 में मताधिकार मिले जबकि भारतीय संविधान ने भारत के गणराज्य बनते ही स्त्री को यह अधिकार दे दिया।** वस्तुतः समाज का विकास और ह्रास मध्यवर्गीय नारी पर ही निर्भर करता है। मध्य वर्ग की नारी आज **शिक्षिका, डाक्टर, वकील,**

राजनेता, पर्वतारोही, तैराक, खिलाड़ी, इंजीनियर, सैनिक, सेना, अभिनेत्री, अधिकारी, एयर होस्टेस, फैशन माडल बन रही हैं। युगों से पीड़ित रहने के कारण भले ही पुरुष समाज उसे घर बाहर सर्वत्र संदेह कि दृष्टि से देख रहा हो, लेकिन उसने नये क्षितिज मापने शुरु कर दिये हैं। इस नारी विमर्श में महादेवी वर्मा ने अतीत, प्रत्यक्ष वर्तमान एवं अनागत भविष्य तीनों पर दृष्टिपात किया है।

आज़ादी के बाद भी कथा-साहित्य में नारी का बहुआयामी स्वरू प उजागर हुआ। जैनेन्द्र की **'सुनीता',** अज्ञेय की रेखा, कृष्णा सोबती की रिक्तिका यानि रती मनोवैज्ञानिक ग्रन्थियों की शिकार भी है। इलाचन्द्र जोशी द्वारा लिखित 'संन्यासी' में शान्ति के विविध रू प हमारे सामने आते है। कमलेश्वर के 'काली आंधी' उपन्यास की मालती अनेक मुखौटों से सुसज्जित हुई। किन्तु रूढ़ियों, अंधविश्वासों तथा अन्य परम्पराओं में नारी जकड़ी हुई है। खासतौर पर आज़ादी के बाद बदली हुई परिस्थितियों ने समाज का ढांचा तो बदला ही, साथ में नारी की उलझनों को भी बढ़ाया, उसकी जीवन पद्धति उसके जीवन मूल्य, उसकी मनःस्थिति को भी तेजी से बदल डाला। परिणाम यह हुआ कि आज़ादी ने 'व्यक्तिवाद' को जन्म दिया, नारी अस्तित्व के नये प्रतिमानों की खोज हुई। नारी ने भी अपने अस्तित्व की पहचान शुरू की। नारी में अन्धानुकरण के स्थान पर तार्किक बुद्धि का उदय हुआ। प्राचीन भावभूमि से नवीन भवभूति में प्रवेश करने पर दबाव, टूटते व्यक्ति समाज और परिवार का सबसे अधिक बोझा भी नारी को ही ढोना पड़ा। कहानी हो या उपन्यास दोनों में जीवन की ही अभिव्यक्ति है। स्त्री परम्परागत नारी रावण द्वारा अपहृत होने पर राम के वियोग में अशोक वाटिका में बैठती थी। आज उसे ऐसी सीमा रेखायें कचोटने लगीं और बदलते प्रतिमानों सहित कथा साहित्य में उभरी। राजेन्द्र यादव की **'प्रतिरक्षा'** जहां लक्ष्मी कैद है। मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक', निर्मल वर्मा की **'वीक एंड',** उषा प्रियवंदा की **'जिन्दगी और गुलाब के फूल की नीलू'** कई पुरुषों के सम्पर्क में खुलती रहती है। कृष्णा सोबती और निरूपमा सेवती की कहानियों की कार्यरत नारी भी प्रलोभन के लिए विभिन्न पुरुषों से सम्पर्क जोड़ती है। आर्थिक दबाव के कारण नौकरी भी नारी की मजबूरी बन गयी है। यह कमाई भी चाहे उसके नारीत्व के दांव पर ही क्यों न अर्जित की गयी हो। आज पिता भी कमाने वाली बेटी की नैतिकता पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगाता। गिरिराज किशोर की कहानी 'फ्राक वाला घोड़ा' और **'निर्झर वाला साईस'** इसका साक्षात् उदाहरण हैं। राजेन्द्र यादव की खुले पर टूटे डैने, मणिमधुकर की **'फरिशते'** ऐसी दर्द भरी नारी के आत्मसमर्पण की कहानी है।

नर तथा नारी समाज के दो महत्त्वपूर्ण अंग है। दोनों एक दूसरे के पूरक है। इतिहास में कई बार दिखाई देता है कि पुरुष - समाज को नारी समाज की श्रेष्ठता प्राप्त रही है। इसका कारण यह है कि प्राचीन काल में नारी घर की चार दीवारी में रहकर अपने कर्तव्य का पालन करती थी। स्त्री को माता का जो महान् और भव्य रूप भारतीय शास्त्रकारों ने दिया है, वह संसार के किसी भी देशकाल के जातीय इतिहास में उपलब्ध नहीं होता। उसे देवी कहकर पुकारा गया और उपासना आराधना की वस्तु की संज्ञा दी गई। लेकिन इतिहास में कुछ ऐसे चरण भी आए जब नारी की उपेक्षा की गई और उसे भोग की वस्तु बना दिया। विशेष कर मध्यकाल में नारी की दशा शोचनीय बन गई। लेकिन आधुनिक काल में नारी ने करवट **ली और अपना कल्प कर डाला।** वह पुरु ष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ने लगी।

आज की नारी अपनी दोहरी भूमिका का निर्वाह कर रही है। उसके कर्तव्य का क्षेत्र पहले से बढ़ गया है। एक ओर वह विवाहित रू प में घर का उत्तरदायित्व संभालती है तो दूसरी ओर बाहर के क्षेत्रों में काम करके कुछ कमा करके अपने पति का घर का खर्च चलाने में हाथ बंटाती है। अविवाहित नारी

भी नर के समान बाहरी क्षेत्र में अपनी क्षमता का परिचय देकर कुछ अर्जित करके परिवार की आर्थिक दशा सुधारने में अपना योगदान देती है। आज कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जहां नारी ने पर्दापण कर अपनी प्रतिमा का परिचय न दिया हो। राजनीति के क्षेत्र में उसने कदम बढ़ाए है शिक्षा के क्षेत्र में तो उसका बोलबाला है। चिकित्सा के क्षेत्र में भी वह अपनी कुशलता का परिचय दे रही है। सरकारी कार्यालय में पुरु ष के बराबर काम कर रही है। कामकाजी महिलाओं की निरंतर वृद्धि हो रही है। शिक्षा के प्रसार ने उसके लिए प्रगति के सभी द्वार खोल दिये हैं।

भारतीय नव जागरण के आलोक में नारी ने अपनी सत्ता, महत्त्व, प्रतिमा और गौरव को पहचाना है। इधर साहित्य ने भी अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी को पुरुष के चंगुल से निकल कर आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है। आज की नारी प्राचीनता की केंचुली उतारकर एक नये आलोक में जा रही है। युनान के महान् दार्शनिक, अरस्तु ने सत्य की कहा है- **'स्त्रियों की ऊन्नति या अवनति पर ही राष्ट्र की ऊन्नति या अवनति निर्भर करती है।'** वर्तमान में भूमंडलीय और बाज़ारवाद से सर्वाधिक प्रभावित महिलाएं हुई हैं। आज की नारी ने परम्परागत नारी के मिथक को तोड़ते हुए आधुनिक रूप में अपने को स्थापित किया है। नारी के जीवन संघर्ष को अभिव्यक्त करने में मन्नु भंडारी, कृष्णा सोवती, ऊषा प्रियंवदा, शिवानी, महादेवी वर्मा, चित्रा मुद्गल, नासिर शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा आदि लेखिकाओं को महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। अतः आज के युग में पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से भारतीय संस्कृति के परंपरागत मूल्यों में काफी परिवर्तन आ गया है। अब नारी घर गृहस्थी की चार-दीवारी में सीमित न रहकर आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्रों में पुरुष की बराबरी करने में सक्षम है। वस्तुतः युग और परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ हमें आधुनिक युग के अनुरूप प्रगतिशील होना तो आवश्यक है, किन्तु हमारे प्राचीन ऋषि-महर्षियों और मनीषियों ने जीवन के परम लक्ष्य निर्धारित किए हैं, उन्हें संपूर्णतया गंवा देना भी बुद्धिमानी नहीं होगी और न यह हमारे भावी हित में उचित होगा।

सन्दर्भ :

1. राजु कुमार, नारी के बदलते आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दरिया गंज, नई दिल्ली।
2. चन्द्र मोहन अग्रवाल, भारतीय नारीः विविध आयाम, श्री अल्मोड़ा बुक डीपो, अल्मोड़ा, उत्तर प्रदेश).
3. विपिन कुमार, वश्वीकरण एवं महिला सशक्तिकरण विविध आयाम, रीगल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. आशारानी व्होरा, स्त्री सरोकार, आर्य प्रकाशन मंडल, गांधीनगर, दिल्ली।
5. मृणाल पाण्डे, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दरियागंज, नई दिल्ली।
6. गगनांचल, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, नई दिल्ली, 2010।
7. समकालीन भारतीय साहित्य, साहित्य अकादमी नई दिल्ली, 2010।
8. सोमसी, हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला, 2010।
9. विपाशा, भाषा एवं संस्कृति विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला, 2010।

●

शोधार्थी, हिंदी विभाग,
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय,
समरहिल, शिमला
E-mail: thakur.anjana60@gmail.com

सार्वजनिक भाषण करते समय तीन लक्ष्य सामने रखने चाहिए। पहले अपने विषय में प्रवेश करें, उसके बाद विषय को अपने भीतर प्रवेश कराओ और अंत में विषय को अपने श्रोताओं के भीतर उतार दो।

– एलेक्जेंडर ग्रेग

हिन्दी-गुजराती गजलः एक तुलनात्मक दृष्टि

प्रो. भगवानदास जैन

प्रस्तुत आलेख में गजल की स्वरूपगत सैद्धांतिक चर्चा करना हमारा अभिप्रेत नहीं है। यहां हमारा प्रतिपाद्य हिन्दी और गुजराती गजल साहित्य का संक्षिप्त पर्यवेक्षण प्रस्तुत करना है। तथापि यहां एक बात अवश्य उल्लेखनीय है कि हिन्दी में जहां गजल को गजल के अतिरिक्त प्रगीत गीतिका, मुक्तिका, अनुगीत, तेवरी आदि कई नाम दिये गए हैं, वहां गुजराती में इसे गजल के नाम से ही स्वीकार किया गया है। हां, गजल की रुप-रचना एवं कथ्य-शिल्प की सैद्धांतिक चर्चा दोनों भाषाओं में पर्यापत मात्रा में उपलब्ध है।

हिन्दी-गुजराती गजलः एक पृष्ठभूमि - जो लोग यह मानते हैं कि हिन्दी में गजलों की न कोई परंपरा रही है और न ही इसकी कोई हैसियत बन पाई है। वस्तुतः यह उनकी भ्रांत धारणा है। हिन्दी गजल पर आज तक अनेक शोध कार्य हो चुके हैं और निरंतर उसके कथ्य-शिल्प पर बहुत कुछ लिखा जा रहा है। इस वस्तुस्थिति को नकारना सत्य की सरासर उपेक्षा करना है। प्रश्न है हिन्दी गजल की शुरूआत कब से हुई? हिन्दी का सर्वप्रथम गजलकार कौन है? हिन्दी गजल का उत्स हमें हिन्दी साहित्य के आदिकाल में मिलता है। जनकवि अमीर खुसरो ने आदिकाल में सर्वप्रथम कुछ प्रयोग मूलक गजलें लिखीं जिनकी एक पंक्ति फारसी में तो दूसरी ठेठ हिन्दी में थी। तत्पश्चात् भक्तिकाल के ज्ञानमार्गी संत कवि कबीर ने बोल-चाल की भाषा में कुछ गजलें लिखीं। जहांगीर की समकालीन कवि प्यारेलाल शौकी ने अपनी गजलों में अमीर खुसरो व कबीर की भाषा का परिनिष्ठित रूप प्रस्तुत किया। बावजूद इसके हिस्ट्री ऑफ पर्शियन लैंग्वेज एण्ड लिटरेचर सर द मुगल कोर्ट में एम. ए. गनी ने प्रामाणिक रूप से कबीर को पहला गजलकार कवि स्वीकार किया है। कबीर की प्रसिद्ध गजल के दो शेर देखिए -

हमन हैं इश्क मस्ताना हमन को होशियारी क्या।
रहें आजाद या जग से हमन दुनिया से यारी क्या।
कबीरा इश्क का माता दुई को दूर कर दिल से,
जो चलना राह नाजुक है हमन सिर बोझ भारी क्या।

हिन्दी की सेवा और समृद्धि में प्रारंभ से अद्यावधि गुजराती के कृतिकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। गुजरात के सूफी संतों में अनवर, सागर तथा सत्तार चिश्ती आदि के नाम भी हिन्दी गजल साहित्य में उल्लेख्य हैं। तदुपरांत साठोत्तरी युग के मूलतः गुजराती कवि सर्वश्री आदिल मंसूरी, शेखादम आबूवाला, डॉ. नवनीत ठक्कर, रमेश

पारेख, हर्ष ब्रह्मभट्ट आदि ने परिष्कृत खड़ी बोली में बड़ी उम्दा गजलें लिखी हैं।

आधुनिक युग के हिन्दी गजलकारों में भारतेन्दुजी तथा उनके समकालीनों यथा हरिऔध, प्रेमधन, सनेही, उग्र प्रभृति ने गजलें लिखने का स्तुत्य प्रयत्न किया है। छायावादी युग में निराला, प्रसाद और पंत ने भी स्वच्छंदतावादी शैली में प्रणय-प्रकृति से ओत प्रोत बड़ी सुंदर रूमानी गजलें लिखी हैं। बेला में संग्रहीत निरालाजी की गजल का एक शेर द्रष्टव्य है-

बदली जो उनकी आंखे इरादा बदल गया।
गुल जैसे चमचमाया कि बुलबुल मचल गया।

प्रगतिशील युग के गजलकारों में महत्वपूर्ण नाम हैं- रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर आदि। इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दी गजल की अपनी एक सुदीर्घ परंपरा रही है। फिर भी यह कहना असमीचीन या अयुक्तिसंगत न होगा कि मात्रा एवं गुणवत्ता की दृष्टि से हिन्दी गजल-साहित्य को व्यवस्थित और संगठित रूप साठोत्तरी युग में ही प्राप्त हुआ। हिन्दी गजल साहित्य में साठोत्तरी युग कथ्य एवं शिल्प के अभिनव प्रयोगों के साथ अवतरित हुआ। हम इसे हिन्दी गजल का नव जागरणकाल भी कह सकते हैं। साठोत्तरी गजल-साहित्य में सर्वाधिक सशक्त स्वर दुष्यंत कुमार त्यागी का रहा है। दुष्यंत के गजल-संग्रह साये में धूप के प्रकाशन के साथ ही संपूर्ण हिन्दी सहित्य-जगत का ध्यान अभिव्यक्ति की एक सशक्त काव्य-विधा के रूप में गजल की ओर उन्मुख हुआ। वस्तुतः दुष्यंत ने युगीन विसंगतियों और विद्रूपलाओं की जितनी और जैसी पैनी और तल्ख अभिव्यक्ति अपनी गजलों में की है वैसी अन्यत्र बहुत कम देखने को मिलती है। दूसरी ओर शिल्प के स्तर पर दुष्यंत ने अपनी गजलों में छंद के परंपरागत अनुशासन को भी बखूबी निभाया। यही कारण है हिन्दी कविता में दुष्यंत का नाम युग प्रवर्त्तक गजलकार के रूप में निर्विवादतः स्थापित हो चुका है। हिन्दी के सैकड़ों गजलकार आज उन्हीं के नक्शे कदम पर चल रहे हैं। दुष्यंत के अतिरिक्त हिन्दी गजल के सशक्त हस्ताार हैं- सर्वश्री त्रिलोचन, सूर्यभानु गुप्त, भवानीशंकर, नीरज, शमशेर, शेरजंग गर्ग, रामावतार त्यागी, माहेश्वर तिवारी, नईम बशीर अहमद (मयूख)। इन्होंने अपनी गजलों में युगबोध के स्वरों की सफल अभिव्यक्ति की है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य गजलकारों के नाम भी उल्लेखनीय हैं। जैसे, सर्वश्री चन्द्रसेन विराट, जहीर कुरेशी, शिवओम अम्बर, हनुमंत नायडू, कैलास गौतम, ज्ञानप्रकाश विवेक, ज्ञानेन्द्र साज़ राजेश रेड्डी, नचिकेता, बल्ली सिंह चीमा, अखिलेश तिवारी, गुलरेज अली खान, मधुर नज्मी, अशोक अंजुम, सार्थ, नासिर अली नदीम, हस्तीमल हस्ती, लक्ष्मण दुबे, मुनव्वर राना आदि। इनके अलावा कुछ महिला गजलकारों के नाम भी स्मरणीय हैं। जैसे डा. महाश्वेता चतुर्वेदी, सावित्री परमार, उमा श्री पूनम कौसर, डॉ. राजकुमारी शर्मा आदि। गुजरात के हिन्दी सेवी गजलकारों में महत्वपूर्ण नाम हैं - डॉ. दयाचंद जैन डॉ. किशोर काबरा, डॉ. नवनीत ठक्कर, सुल्तान अहमद, भागवत प्रसाद मिश्र नियाज, रमेशचंद्र शर्मा चन्द्र, ऋषिपाल धीमान, बसंत ठाकुर तथा भगवान दास जैन युगांतरकारी गजलकार दुष्यंतकुमार की लोकप्रिय सर्वथा नूतन भावबोध की गजलों के अतिरिक्त गुजरात के प्राचीन सूफी कवियों द्वारा रचित हिन्दी गजलों की प्रशस्त परंपरा एवं गुजराती का समृद्ध गजल-साहित्य गुजरात के समकालीन हिन्दी गजलकारों के प्रमुख प्रेरणा-स्रोत रहे हैं- ऐसा कहने में हमें संकोच नहीं होना चाहिए।

प्रयोग और परंपरा के विभिन्न सोपानों को पार करते हुए आज गुजराती गजल अपने चरम शिखर की बुलंदी पर पहुंच चुकी है। गुजराती गजल के विकास में पिछली एक शताब्दी में गुजराती गजलकारों की, गजल के आस्वादकों की और गुजराती पत्र-पत्रिकाओं की पुरुषार्थ सिद्ध उपलब्धियां निस्संदेह अवर्णनीय हैं। गुजराती गजल के मूल हमें उन्नीसवीं सदी के सुप्रसिद्ध कवि नर्मद की कविता

में प्राप्त होते हैं। आधुनिक गुजराती कविता के जनक कवि नर्मद ने खाविन्द ने खफा न थवानी विनंति के माध्यम से जिस रचना को प्रस्तुत किया है उसे उन्होंने गजल ही कहा है। यद्यपि भारतेन्दुजी के समकालीन हिन्दी गजलकारों की भांति गुजरात के नर्मद और उनके समकालीनों ने भी गजल के स्वरूप का सम्यक् निर्वाह नहीं किया, किंतु गुजराती गजल के ऐतिहासिक सर्वेक्षण में उनके महत्व को नकारा भी नहीं जा सकता।

गुजराती साहित्येतिहास के पंडितयुगीन कवियों में सर्वप्रथम गजलकार श्री बालाशंकर कंथारिया बाल माने जाते हैं। इसी युग के दूसरे गजलकार हैं श्रीमणिभाई नभुभाई द्विवेदी। इनकी एक गजल का केवल एक मिसरा गुजराती काव्य-जगत की सूक्ति बन गया है- हजारो हा! निराशा मां अमर आशा छुपाई छे। इसी युग के प्रसद्धि गजलकार श्री सुरसिंह तख्तसिंह कलापी की गजलगोई तो गुजराती गजल-साहित्य में अविस्मरणीय है। श्री कलांपी की एक गजल की निम्नलिखित पंक्तियां गुजरात के हर काव्यप्रेमी का कंठहार बन गई हैं–

ज्यां ज्यां नजर मारी ठरे यादी भरी त्यां आपनी।
ऑसू महीं ये आपना यादी झरे छे आपनी।

'कलापी' के शिष्य सागर की बड़ी खूबसूरत गजलें दीवाने सागर में संग्रहीत हैं।

बीसवीं शती के प्रथम चरण से गुजराती गजलगोई का नया दौर शुरु होता है। इसे गुजराती गजल का नवयुग कहा जा सकता है। इस युग के समर्थ गजलकार हैं- शैदा, मरीज, जमियत पाण्ड्या जिगर, साबिर वरवावाले, अकर अली जसदण वाले, शून्य पालनपुरी आदि। इनकी गजलों की सबसे बड़ी विशेषता है इनके उद्‌गारों की सहजता और निश्चलता। श्री जिगर की गजल की यं पंक्तियां देखिए-

शुभनाम के बन्यो हुं बदनाम तने अर्पण।
तारां ज करावेला सौ काम तने अर्पण।
भूंडा अने भला नी शी भांजगड जमाना,
रावण हुं संघरुं छुं जा राम टने अर्पण।

इस युग के समर्थ गजलकार मरीज साहब की गजलों में तो गालिब की तरह परंपरा के बीच भी चिरंतन आधुनिकता के दर्शन होते हैं। प्रयोगकालीन युग के दूसरे चरण के सिद्धहस्त गजलकारों में महत्वपूर्ण नाम हैं -शेखादम आबूवाला, बरकत वीराणी, बेफामा आदिल मंसूरी, गनी दहीवाला अमृत घायल, रांदेरी आदि। इनके अतिरिक्त समकालीन गुजराती गजल के सशक्त हस्ताक्षर हैं सर्वश्री डॉ. चिनु मोदी, डॉ. सतीन देसाहई, मनोज खण्डेरिया, मनहर मोदी, राजेन्द्र शुक्ल, भगवतीकुमार शर्मा, शाल्पिन थानकी, माधव रामानुज, अम्बालाल डायर, हनीफ साहिल, हरीन्द्र दवे, हेमन्त देसाई, दिनेश देसाई, अजीज टंकारनी, गुलाम अब्बास नाशाद, दिलेश डोंगरे नादान, राज नवसारवी तथा डॉ. रशीद मीर (संपादक धबक, बड़ौदा) आदि। श्री जभियल पण्ड्या ने गुजराती गजल-साहित्य के संबंध में यथार्थ ही कहा है- अब तो गुजराती साहित्य में गजल ने अपना एक स्थान बना लिया है। वह पूर्णतः गुजरातिन बन गई है। रंग और मिजाज को बरकरार रखते हुए भी वह गुजरात के अनुरूप ढल गई है. सचमुच यह एक संतोषजनक घटना है। वास्तव में गुजराती गजलों में न तो अरबी-फारसी शब्दों की अधिकता मिलती है और न ही उर्दू भाषा की सामासिकता और नुक्ते का आग्रह। अनिवार्यतावश ज के स्थान पर झ लिखकर काम चला लिया जाता है। मसलन गजल जिंदगी और आजाद को गुजराती में गझल, सिंद्धगी और आझाद लिखा जाता है। जबकि हिन्दी और उर्दू तो एक ही भाषा-वृक्ष की दो शाखाऐं हैं, अतः हिन्दी में एक और उर्दू शब्दों की बहुलता है तो दूसरी ओर नुक्ते का भी चुस्ती से पालन किया जाता है। कम से कम ज, ज और झ के बीच उच्चारणगत स्पष्ट अंतर को हिंदी में नजर अंदाज नहीं किया जाता।

कथ्य की दृष्टि से हिन्दी-गुजराती गजल - डॉ. रामकुमार गुप्त ने अपने शोध प्रबंध में लिखा है - मद्यसेवी आनंद, वसेत-सौंदर्य, गुलाब अथवा बुलबुल

आदि की शोभा का वर्णन भी गजल का वर्ण्य विषय माना जाता है। आडम्बरपूर्ण संतों तथा मुल्ला-मौलवियों की कारस्तानी, दंभ और पाखण्डों का भण्डाफोड़ करने के लिए भी गजल का सहारा लिया जाता है। यद्यपि हिन्दी -गुजराती दोनों गजलों में उक्त सारी विशेषताएं उपलब्ध होती हैं, किंतु फिर भी आज के समस्याक्रांत युग का जागरूक गजलकार देश-दुनिया के मौजूदा हालात और आम आदमी की दारुण दशा को नजर अंजाद नहीं कर सकता। वह पूरी ईमानदारी के साथ अपनी गजलों में युगीन समस्याओं को भी रूपायित कर रहा है। इसके बावजूद गुजराती गजलों की अपेक्षा हिन्दी गजलों में सामाजिक चेतना विशेष परिलक्षित होती है। गुजराती गजलों में कुण्ठाओं, वर्जनाओं, अतृप्तियों आदि अनार्मुखी वृत्तियों का निरुपण विशेष रूप से मिलता है। जदीदियत के नाम पर अनेकत्र वायवी कल्पनाओं का भी चित्रण मिलता है। सामाजिक सरोकारों की अभिव्यक्ति बहुत कम गजलकारों में दिखाई देती है। जबकि हिन्दी गजल रागात्मक संवेदनाओं से परहेज नहीं करती, किंतु अपने परिवेशगत यथार्थ और समसामयिक जीवन-संदर्भो को सांकेतिक और व्यंग्यात्मक रूप में प्रस्तुत करने के लिए कृत संकल्प है।

गुजराती गजलों में प्रकृति-प्रेम तथा व्यक्तिनिष्ठ प्रेम-सौन्दर्य के चित्रण तो अनेकत्र मिलते है। हजलों के माध्यम से कवियों ने हास्य-विनोद भी पर्याप्त मात्रा में प्रस्तुत किया है किंतु उनमें चुटीले व्यंग्य का प्रायः अभाव है। महानगरीय संत्रास का चित्रण भी हुआ है, किंतु सामाजिक-राजनीतिक विसंगतियों तथा विज्ञान एवं बुद्धि के अप्रतिहत विकास और उसके विवेकहीन प्रयोग की दुष्परिणतियां के चित्र गुजराती गजलों में नहीं के बराबर हैं।

शिल्प की दृष्टि से हिन्दी-गुजराती गजल जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं कि हिन्दी की अपेक्षा गुजराती गजलों में उर्दू शब्दों के प्रयोग का आग्रह बहुत कम है। हां, संस्कृत एवं आंचलिक शब्दावली दोनों भाषाओं की गजलों में समान रूप से प्रयुक्त हुई है। आंचलिक शब्दों के प्राचुर्यवाली गजलों में लोकगीत का सा माधुर्य भी आह्लादक होता है। जो कुछ भी हो, एक सुखद बात यह है कि गजल के माध्यम से हिन्दी-गुजराती भाषाओं के बीच शब्दों के आदान-प्रदान और फलस्वरूप सामीप्य भी निरंतर बढ़ता गया है। हिन्दी के बहुसंख्यक शब्दों को अपनाकर गुजराती भाषा जहां एक ओर समृद्ध हुई है, वहीं दूसरी ओर उसने अपनी जीवंतता का प्रमाण भी दिया है और इसका अधिकांश श्रेय गजलकारों को ही है।

एक बात और, नई गजलों में मुहावरों-कहावतों का प्रयोग कम हो चला है। मुहावरेदानी का स्थान नए उपमानों, प्रतीकों और बिम्बों ने ले लिया है। समर्थ गुजराती गजलकार एवं समीक्षक श्री भगवतीकुमार शर्मा के शब्दों में - कदाचित् प्रतीकात्मकता गजल की श्रेष्ठतम लाक्षणिकता है। जब गजलकार ने अपना संपूर्ण कथ्य केवल दो मिसरों में व्यक्त करने का अनुशासन स्वीकार किया हो, तब प्रतीक-योजना के अभाव में काव्य रचना उसके लिए असंभव ही है।

एक ओर हिन्दी - गुजराती दोनों गजल-साहित्य में चमन, आशियाना, बागवां, कफस, गुल, बुलबुल सय्याद, साकी, शराब, शमा, परवाना, बहार, पतझर, कांटे, सितारे, बादल, चांद, सूरज जेसे परंपरागत प्रतीक मौजूद हैं तो दूसरी ओर साठोत्तरी नवजागरणकाल की गजलों में आईना, धुआं, तूफान, रौशनी, सलीब, सहरा, धूप, किरन, वर्फ, पत्थर, पोस्टर, दीवार, भीड़, वीरगी, परछाईं, धुंध आदि नए प्रतीक तथा धर्मग्रंथों और पुराणों के अनेकानेक मिथकीय प्रतीकों के माध्यम से गजलकारों ने युगीन जनजीवन की देवनाओं संवेदनाओं की अत्यंत मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति भी की है। आज उभय भाषाओं की गजलों में शून्यतावाद (निहिलिज्म) की तासीर भी अनेकत्र दिखाई दे रही है। वर्तमान जन जीवन की विडंबनाओं एवं विसंगतियों की व्यंजना के लिए

अनिवार्य परंपरागत विरोधाभास (पैराडॉक्स) भी आज दोनों भाषाओं की गजलों में बरकरार है।

गजल कविता की सर्वाधिक सुकुमार विधा है। अतः अभिव्यक्ति की सहजता, भाषा की सरलता और भावों की संप्रेषणयता उसकी अनिवार्य शर्तें हैं। जटिलता और क्लिष्टता यहां सर्वथा वर्जित है। जदीदियत या आधुनिकता के नाम पर प्रयोगों की भारी भरकम चट्टान के नीचे गजल की सुकुमार आत्मा दबकर रह जाती है। याद रहे, कचाचित् नई कविता प्रबुद्धजनों के लिए लिखी जाती है। किंतु गजल तो आम आदमी के लिए भी लिखी जाती है। अतः गजल को सर्वजन भोग्य बनाने के लिए उसे श्रमसाध्य प्रयोगवादिता के घेरे से निकालना होगा- यह युग की मांग है। यह सच्चाई हिन्दी के कुछेक तथा गुजराती के अनेक प्रयोगधर्मी गजलकारों को ध्यान में रखनी होगी।

कथ्य-शिल्प की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए हिन्दी-गुजराती गजलों के कतिपय शेर यहां प्रस्तुत करना अप्रासंगिक न होगा। सर्वप्रथम गुजराती गजलों के कुछ अशआर देखए-

(1) शक्यतानी चाल चलगत शुं बतावुं बादशा।
पंखी थी पथ्थर थ्ई ने काम बावुं बादशा।
तूटता संबंध बच्चे जीवता इशाद ने,
आप फांसी नो हुकम तो झट बजायुं बादशा।

...डॉ. चिनु मोदी

(2) कोण डोकाय हवे बारीए घर खाली छे।
कोई ने साद ना पाडो के नगर खाली छे।
आंख मींचावा नथी देतो सतत एकज विचार,
हु छुं बिस्तर मां अने मारी कबर खाली छे।

... आदिल मंसूरी

(3) फूलोना अपहरण ने खुशबूनुं नाम दइने।
छूटी गई हवा पण केवो मुकाम दइने।
आखर लपेटी बेठो परवेज मेली चादर,
अल्लाह जो के तारा सझ्घड़ा पयाम दइने।

...डॉ. सतीन देवाई

और कुछ कुछेक हिन्दी गजलों के रंग भी देखिए-

(1) ये सारा जिस्म झुककर बोझ से दुहरा हुआ होगा।
मैं सिजदे में नहीं था आपको धोखा हुआ होगा।
यहां तक आते–आते सूख जाती हैं सभी नदियां,
मुझे मालूम है पानी कहां ठहरा हुआ होगा।

... दुष्यंत कुमार

(2) पूजा मेरे कलाम को मैं देवता हुआ।
दुनिया को मेरी मौत से पहले ये क्या हुआ।
मैंने भी अपने हाथ में पत्थर उठा लिये,
शीशे के घर बना के परेशां बड़ा हुआ

... सूर्यभानु गुप्त

(3) बड़ा बेचैन मौसम है दिशाएं पुरखतर होंगी।
न जाने चादरें कितनी लहूं में और तर होंगी।
समय का आसुरी रावण जो लछमन-रेख लांघेगा,
तो मर्यादा की सीताएं न बाहर हैं न घर होंगी।

... बशीर अहमद मयूख

(4) मिस्ले तूफान उमड़ते हुए जज्बात तो देख।
जिनमें जलता हूं मैं जिंदा वो सवालात तो देख।
मेरे सीने में घड़कता है मेरे मुल्क का दिल,
तू मेरे दिल में निहां मुल्क के सदमात तो देख।

... भगवानदास जैन

निष्कर्ष रूम में कहा जा सकता है कि हिन्दी और गुजराती दोनों भाषाओं का गजल-साहित्य परंपरा और प्रयोग के जिन विविध नूतन रंगों और आयामों को आत्मसात करते हुए अग्रसर हो रहा है, उसे देखते हुए हम गजल की भावी सुखद संभावनाओं और उपलब्धियों के प्रति आश्वस्त हैं।

•

बी-105, मंगलतीर्थ पार्क, कैनाल के पास
जशोदानगर रोड, मणीनगर (पूर्व)
अहमदाबाद-382445, गुजरात
मो. 9426016862

‘अहल्या की अन्तर्व्यथा’

सीताराम पाण्डेय

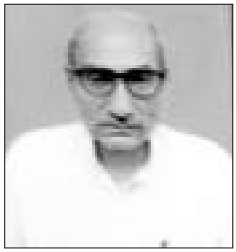

तपस्या के बल पर देवताओं के द्वारा वरदानित मारीच, सुवाहु, ताड़का जैसे बलिष्ट एवं दुष्ट असुरों के आघात से ऋषि विश्वामित्र के द्वारा संकल्पित आध्यात्मिक अनुष्ठान असफल हो जाते थे। अतः आश्रम के अंतर्गत सम्पन्न होने वाले यज्ञानुष्ठान की रक्षा हेतु मुनि, अवनि पर अवतरित अनन्त की आध्यात्मिक नगरी अयोध्या गये और राजा दशरथ से राम-लक्ष्मण को मांग कर ले आये। राम ने सभी उपद्रवी राक्षसों एवं असुर-सेनाओं का संहार किया और ऋषि विश्वामित्र के यज्ञानुष्ठान को सफलतापूर्वक सम्पन कराया।

निर्विघ्न यज्ञ समाप्तोपरान्त राम ने अपने गुरु ऋषि विश्वामित्र का चरण-स्पर्श किया और उनसे करबद्ध प्रार्थनापूर्वक पूछा– ‘अब हमारे लिए क्या आज्ञा है?’

तब मुनि ने बड़े स्नेहिल भाव से कहा- ‘मिथिला के राजा जनक ने धनुष-यज्ञ का वृहत् आयोजन किया है। शंकरजी का वह धनुष अद्‌भुत और अपूर्व है। अतः मेरे साथ इस धनुष-यज्ञ को देखने तुम दोनों भाई जनकपुर चलो!’ तद्‌पश्चात् गुरु के आज्ञानुसार विश्वामित्र के साथ दोनों राजकुमार मिथिला के लिए प्रस्थान कर गये। गुरु राम-लक्ष्मण को रास्ते में तरह-तरह की पौराणिक कथाएं सुनाते जा रहे थे। नये-नये स्थलों, स्थानों एवं कमनीय काननों के विषय में राम, अपने गुरु विश्वामित्र से जानने की जिज्ञासा जताते। मुनि भी उनको उन स्थानों के ऐतिहासिक एवं पौराणिक महत्व समझाते जाते।

सोननदी पार कर जब वे मिथिला के निकट पहुंचे तो नगर से बाहर एक बिल्कुल सूना-सा निर्जन आश्रम दिखाई पड़ा, जहां पशु-पंक्षी आदि किसी तरह के वन्य-प्राणी दिखाई नहीं पड़े। राम ने जब एक प्रस्तर को देखकर विश्वामित्र से उसके संबंध में जानने की जिज्ञासा जाहिर की। तब ऋषि ने विस्तारपूर्वक उस उजड़े उदास एवं सूने आश्रम की पौराणिक कथा सुनाते हुए कहा–

गौत्तमस्य नरश्रेष्ठ पूर्वमासीन्महात्मनः।
आश्रमो दिव्यसंकाशः सुरैशपि सुपूजितः।।
सा चात्र तप आतिष्ठदल्यासहितः पुरा।
वर्षपूगान्यनेकानि राजपुत्र महायज्ञः।।

-श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण से उद्धृत

दोनों श्लोकों का अर्थ है कि - हे नरश्रेष्ठ। पूर्व जन्म में यह स्थान महात्मा गौतम ऋषि का पावन आश्रम था। उस समय यह आश्रम न सिर्फ दिव्य और तपस्या की पवित्र

स्थली लगती थी बल्कि इसकी शोभा अपूर्व एवं अद्‌भुत थी। देवगण भी इसकी प्रशंसा और पूजा किया करते थे। सुबह-शाम यहां पंक्षियों का हर्षगान मुखरित होता; सारे जीव-जन्तु प्रसन्नता का उजहार करते, जिसके कारण यहां खुशियों का साम्राज्य कायम था।

पूर्वकाल में महर्षि गौतम अपनी पत्नी अहिल्या के साथ यहां तपस्या करने में तल्लीन थे। इस आश्रम में वर्षों तक महर्षि गौतम के द्वारा तपस्या की गयी। अहल्या अनुपम सौंदर्य शालिनी, बुद्धि बल एवं प्रतिभा की पुंज थी। वह एक ऐसी नारी थी, जिसके सौंदर्य के प्रति देवतागण भी विमुग्ध हो गये थे। ब्रह्मपुराण के अनुसार 'अहल्या' ब्रह्मा द्वारा निर्मित आयोनिजसंभवा थी। ब्रह्मा ने अप्सराओं को अपने सौंदर्य पर गर्व को खंडित करने के लिए 'अहल्या' का सृजन किया था। महर्षि गौतम और अहल्या की कथा अलग-अलग पुराणों, ग्रंथों, स्मृतियों रामायणों तथा महाकाव्यों में भिन्न-भिन्न रूपों में मिलती है–

'गौतम-धर्म सूत्र' और ब्रह्मपुराण के अनुसार ब्रह्मा के द्वारा सर्वांग सुन्दरी नारी 'अहल्या' की रचना की गई।

सोऽहंतासा विशेषार्थे स्त्रियंमेका विनिर्मने।
यत् यत् पुत्रानां प्रत्ङविशिष्टं तत्तदुदधृतम।।

अपरं च

ततो मया रूपगुणैरहल्या स्त्री विनिर्मिता।
हलं ना मेह वैरुप्यं हल्यं तप्प्रभावं भवेत्।।

(जो हल्य नहीं हो अर्थात् जिसमें कुरुपता नहीं हो)

संस्कृत की अध्यात्म रामायण, तुलसीदास रचित रामचरित्र 'मानस' नेपाली भाषा में लिखी भानुदेव रामायण; बांग्ला भाषा की कृतिवास रामायण आदिग्रंथों में अहल्या की उत्पति भ्रांतिपूर्ण मत दिखाई पड़ता है। 'तेलगू' रामायण में 'अहल्या' को एक यौनिकइच्छा से वशीभूत महिला के रूप में दर्शाया गया है।

संस्कृत और हिन्दी के उद्‌भट्ट विद्वान महाकवि आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री का गीति नाट्य पाषाणी अहल्या के काव्यात्मक आख्यान की प्रस्तुति है; जिसमें 'अहल्या' को राजपुत्री के रूप में दर्शाया गया है। 'अहल्या' राजकुमारी मल्लिका से कहती है-

मैं कब की तापसी! मल्लिके तुम्हें नहीं कुछ ज्ञात।
मैं भी राजकुमारी ही थी कभी भाग्य की बात...।

इस प्रसंग के आलोक में 'अहल्या' राजकुमारी मल्लिका से कहती है-

मैं कब की तापसी! मल्लिके तुम्हें नहीं कुछ ज्ञात।
मैं भी राजकुमारी ही थी कभी भाग्य की बात..।

इस प्रसंग के आलोक में 'अहल्या' राजपुत्री है, जो गौतम ऋषि के आश्रम में पली-बढ़ी है। 'भागवतपुराण' में भी अहल्या को पुरुवंशीय राजकुमारी के रूप में बताया गया है। जो राजा मुगद्रल की पुत्री और राजा दिवोदास की बहन तथा जन्मदात्री माता अप्सरा 'मोनिका' को दर्शाया गया है।

'भील रामायण के अनुसार- 'अहल्या' की उत्पत्ति सप्तर्षियों की यज्ञाग्नि की 'राख' से हुई। बाल्मीकि रामायण के बाल काण्ड में अहल्या का निर्माण ब्रह्मा द्वारा शुद्ध सर्जनात्मक उर्जा से माना जाता है। महारी लोकनृत्य की किंवदन्ती के अनुसार 'अप्सरा उर्वशी' का मान-मर्दन करने के लिए ब्रह्मा ने देवी 'अहल्या' का निर्माण जल से किया था।

इस तरह अहल्या की उत्पत्ति के भिन्न-भिन्न आख्यान अनुबद्ध है। जिसमें सर्वाधिक मान्यमत 'ब्रह्म पुराण के अनुसार ब्रह्माजी ने अहल्या की सृष्टि कर गौतम ऋषि को उसके युवती होने तक धरोहर के रूप में सौंप दिया।' 'अहल्या के युवती होने पर इन्द्र, अग्नि, वरुण आदि देवतागण भी इसके सौंदर्य के प्रति विमुग्ध हो गये थे। किन्तु, 'ब्रह्मा' ने यह प्रतिज्ञा की थी कि जो सारी पृथ्वी परिक्रमा कर पहले आयेगा; उसे ही अहल्या सौंपी जायेगी।

अहल्या के रूप -लावण्य के प्रति आकर्षित होकर देवगण पृथ्वी की परिक्रमा करने चले गये। किन्तु गौतम ऋषि ने कामधेनु और शिव की परिक्रमा करके 'ब्रह्मा को प्रसन्न कर दिया।' ब्रह्मा ने भी ऋषि गौतम के धैर्य, बुद्धि और ब्रह्मचर्य से प्रभावित होकर

'अहल्या' को पत्नी के रूप में उन्हें सौंप दिया। परिणाम स्वरूप देवतागण निराश हो गये और इन्द्र का क्रोध पराकाष्ठा पर पहुंच गया अर्थात् उनका क्रोध भभक उठा।

महर्षि गौतम और इन्द्र के बीच यहीं से अदावत आरम्भ हुई और यही निकोरा देवराज इन्द्र को पाप के शीर्ष तक ले गया। देवताओं के राजा इन्द्र 'देवलोक' की सारी वस्तुएं अपनी ही समझता था। इसलिए उसने इसे अपना अपमान समझा और 'अहल्या' के उपभोग का अवसर देखने लगा।

ब्रह्म पुराण के अनुसार गौतम और इन्द्र की अदावत में गौतम निर्दोष थे। दोषी तो देवताओं का राजा इन्द्र का अभिमान और उसकी विलासी प्रवृत्ति थी। 'अहल्या' सुखी, शान्त एवं स्थिर जीवन जीते हुए तीन संतानों की माँ बनी। जिसमें एक पुत्री अंजनी और दो पुत्र हुए। उसकी कुटिया में स्वर्ग बसने लगा। वह अत्यधिक आनंदित दिखाई पड़ती; किन्तु इन्द्र की अतृप्त भोग-लिप्सा ने उसे इन बीते वर्षों में चैन नहीं लेने दिया।

लिप्सा के मोह में फंसे इन्द्र, चन्द्रमा को साथ लेकर गौतम के आश्रम-स्थल में आ पहुंचे। देवराज इन्द्र ने अपनी दुष्टता एवं छल-बल से भोग लेने हेतु महर्षि गौतम को आश्रम से बाहर भेजने की साजिश रची और चन्द्रमा को मुर्गा बनकर बोलने अर्थात् प्रातःकाल हो की सूचना देने का दायित्व सौंपा। ताकि ऋषि सुबहर समझकर नित्यक्रिया करने हेतु गंगा किनारे चले जायें।

महर्षि गौतम प्रतिदिन प्रातःकाल की आहट होने पर नित्यक्रिया से निवृत्त होने के लिए गंगा किनारे जाते थे। इस बात की जानकारी ऐयाशी इन्द्र को पूर्व से ही थी। अतः अर्द्धरात्रि में ही माया का मुर्गा बनाकर ऊंची आवाज में चन्द्रमा बोला और ऋषि को सुबह होने की सूचना दे दी। अहल्या ने सुबह समझकर अपने पति गौतम को गंगा-धार जाने के लिए जगा दिया तथा गौतम भी मृगछाला, कमंडल अदि लेकर गंगा-धार की ओर चल पड़े।

तद्पश्चात् छलिया एवं मायावी इन्द्र गौतम ऋषि का मायावी रूप धारण कर अहल्या के समीप पहुंचता है। गौतम ऋषि का स्वरूप देखकर अहल्या भ्रमित होती है किन्तु ऋषि को लौटने का भ्रम पालते हुए खुद को कामी इन्द्र को समर्पित कर देती है।

नदी तट पर पहुंचकर गौतम को अपने साथ हुए छल का मान होता है और वे वापस अपनी कुटिया की ओर लौट आते हैं। यहां अनैतिक एवं अमर्यादित दृश्य देखकर पुरुषोचित क्रोध के वशीभूत होकर दोनो को शाप देते हैं। छली और कामी इन्द्र के साथ निर्दोष अहल्या को भी शाप की सजा भुगतनी पड़ती है औरर वह पत्थर में परिवर्ति होकर अचल हो जाती है। क्रोध से कांपते महर्षि गौतम ने अपनी कुमारी निर्दोष पुत्री अंजना को भी बिना पति के ही पुत्र पैदा होने का अनैतिक शाप देने में देर नहीं की। चन्द्रमा को तो मृगछाला चलाकर मारा, जिसके कारण काले-कलंक का चिन्ह आज भी उनके शरीर पर द्रष्टव्य है।

लेकिन कुछ कालोपरान्त जब मुनि का क्रोध शान्त हुआ तो इन्द्र अपनी गलती के लिए उनके पैर पर गिरकर क्षमा-याचना करने लगे। अहल्या एवं अंजना भी स्वयं को निर्दोष साबित करती हुई ऋषि से शाप समाप्त करने का आग्रह करने लगी।

तब गौतम ऋषि ने दिये गये शाप समाप्त करने में अपनी असमर्थता बताई। क्योंकि ब्रह्मपियों के द्वारा दिये गये बचन कभी वृथा नहीं होते। 'वृथा न हो ही ब्रहमऋषि वाणी।'

ऋषि, मुनि स्वभाव से ही परोपकारी होते हैं। उन्हें दूसरों की सहायता करने में संतोष प्राप्त होता है। अतः अंजना के शाप में सुधार करते हुए ऋषि ने कहा– 'शाप के प्रभाव से पुत्र तो तुम्हें कौमार्यावस्था में ही होगा' लेकिन वह महाबलवान, ब्रह्मचारी और परोपकारी तो होगा ही रामचन्द्रजी का अनन्य भक्त भी होगा। दुनिया में लोग उसको बजरंगबली के रूप में पूजन-अर्चन करेंगे।

शाप से प्रस्तर में परिवर्तित हुई अहल्या के

शाप में सुधार करते हुए मुनि ने कहा- त्रेता युग में जब राम पृथ्वी पर अवतरित होंगे, तो उनके स्पर्श से तुम्हारा शाप समाप्त हो जायेगा और तुम पुनः पूर्व की तरह सुन्दरी स्त्री के रूप में परिवर्तित हो जाओगी। यह कहकर अपनी पत्नी अहल्या को परित्याग कर हिमालय के रमणीय शिखर पर इस आश्रम को छोड़, तपस्या करने चले गये। तब से अहल्या पाषाण बन कर जीवन व्यतीत करती है और मन में राम नाम जपती हुई दिन काटती हैं।

अतः हे राम! अपने पैर का स्पर्श कराकर अहल्या का उद्धार करो। विश्वामित्र ने राम से कहा- गुरू की आज्ञा प्राप्त कर राम आगे बढ़े और ऋषि पत्नी के पैर छूए। राम का स्पर्श होते ही अहल्या शाप मुक्त हो गयी और पूर्व की तरह सुन्दरी स्त्री रूप में परिवर्तित होकर राम के प्रति आभार व्यक्त करती हुई उन्हें साष्टांग प्रणाम समर्पित किया।

त्रयाणामपि लोकानां यावत् रामस्य दर्शनम्।
शपस्यान्तमुपागम्य तेषां दर्शन भागता।।6।।

श्रीराम की चरण-धूली पड़ी तो अहल्या नारी बनी और श्रीराम एवं लक्ष्मण दोनों अहल्या के पैरों पर गिरे।

राघवौ तु सदा तस्याः पादो जगृहतुर्मुदा।
स्मरन्तौ गौतमबचः प्रतिगजग्राह साहितौ।।

अंत में महातेजस्वी गौतम ऋषि अहल्या को पत्नी के रूप में पाकर अत्यधिक प्रसन्न हुए। बाल्मीकीय रामायण ऐतिहासिक प्रमुख ग्रंथ है। इसलिए इस बात को भी असत्य नहीं बताया जा सकता है कि गौतम ऋषि को गंगा-धार में जाने के पश्चात् इन्द्र ने अहल्या से भोग की इच्छा जताते हुए मन की बात कही–

ऋतु काले प्रतीक्षन्ते नार्थिनः सुसमाहिते।
संगमं हवहमिच्छामि त्वया सह युमध्यते।।8।।

अर्थात् रति की इच्छा रखने वाले पुरुष ऋतुकाल की प्रतीक्षा नहीं करते हैं। इन्द्र ने यह भी कहा कि तुम्हारे साथ समागम की इच्छा है। अहल्या ने इन्द्रदेव कोपहचानकर तत्क्षण उत्तर दिया–

मुनिवेषं सहस्ताक्षे विज्ञारा रघुनन्दन।
मतिचकार दुर्मेधा देव राजा कुतुहात।।

अतः बाल्मीकि रामायण में अहल्या की कामातुर भूमिका भी कम नहीं आँकी गई है। क्योंकि उसने भी दैहिक वासना के फलस्वरूप इन्द्र के प्रणय-निवेदन में सार्थक भूमिका अदा की है और यह जानते हुए की यह देवराज इन्द्र है, उसके साथ संभोग किया।

गोस्वामी तुलसी दास ने अहल्या की पवित्रता का रक्षक बन इन्द्र और चन्द्रमा की काली करतूत कहा है और छल, छद्रम का सहारा लेने वाले पवित्रमयी नारी का बलात्कार करना दिखाया है। जो कि अहल्या आज भी संसार में लोगों के बीच पतिव्रता, तपस्वी, पवित्र देवी के रूप में अवलोकनीय पूजनीय, एवं दर्शनिया है। पत्थर से परिवर्तित अहल्या उद्धार में राम के नायकत्व की प्रति स्थापना युगान्तकारी लोक नायकत्व के रूप में होती है। इस प्रकार एक साधारण स्त्री के उद्रेक से पूरित स्त्री विशिष्ट अहल्या बनने की ओर अग्रसर होती है, यह हमारे समाज की परम्परागत पुरुष मानसिकता का परिचायक है।

राजा जनक के कुलगुरु महर्षि गौतम ने अपनी इच्छा और आज्ञा से पुत्र सदानन्द को राज गुरु के पद पर मातृज्ञा के बिना ही बैठा दिया और सदानन्द ने अपनी माता को पत्थर बनने के पश्चात् मात्र आंसू बहाकर ही अपने कर्तव्य को पूरा कर लिया।

यह निश्चित रूप से भौतिकवादी एवं आधुनिक मानसिकता को उजागर करता है। अहल्या पतिव्रत्य धर्म को पालन करने वाली एक विशिष्ट नारी है, जो शास्त्रानुसार सुदर्शना और सुकन्या के रूप में आज भी अवलोकनीया है। तभी तो प्रातः स्मरणीया पंच कन्याओं में अहल्या का प्रथम और प्रमुख नाम है।

अहिल्या, द्रौपदी, तारा कुन्ती, मंदोदरी यथा।
पंच कन्या स्मरेत् नित्यं सर्वपाप प्रनाशनम्।।

●

रामबाग चौड़ी , पो-रमना,
जिला-मुजफ्फरपुर-842002 (बिहार) मो.
9386752177

हम न मरिहैं, मरिहैं संसारा

डॉ. पूरन सहगल

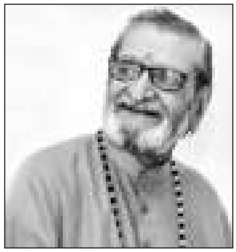

भारत में मध्यकाल का महत्व केवल आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं अपितु राजनैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण माना जाता है। रामानन्द का दक्षिण से उत्तर भारत में पदार्पण और भक्ति का पुनर्जागरण अपने युग का एक रिनांन्सा था। एक सांस्कृतिक नव जागरण की सुक्राँति थी। यह मध्ययुग का प्रारंभ था। इसे हम रामानंद का भक्ति आँदोलन अथवा कबीर का लोक दर्शन काल कह सकते हैं।

अनास्था के उस माहोल में अनेक रूढ़ियाँ समाज में स्थापित हो चुकी थीं। समस्त सांस्कृतिक मर्यादाएँ खंडित हो गई थीं। राजनैतिक अस्थिरता के कारण जनजीवन में भय का वातावरण व्याप्त था। ऐसे समय में सबसे महत्वपूर्ण काम था लोक जीवन में आत्मबल का संचार करना। लोगों को निर्भय बनाकर धर्म और ईश्वर पर विश्वास की पुनर्स्थापना करना। ऐसे समय में रामानन्द का उत्तर भारत में आर्विभाव हुआ। उनके द्वादश शिष्यों ने भारत के अँचलों में जा-जाकर साँस्कृतिक पुनर्जागरण का शंखनाद किया। रामानन्द जी के इन द्वादश शिष्यों में कबीर, पीपा, सेन, रविदास, धन्ना आदि का नाम गर्व के साथ लिया जाता है। कबीर का नाम सर्वोपरी जाना और माना गया।

कबीर के विषय में दार्शनिक ओशो ने कहा है 'यदि संत साहित्य में से कबीर का नाम हटा दिया जाय तब शेष जो बचेगा वह भी कबीर ही होगा।' संत पीपा ने कबीर के विषय में कहा है-

'जो कलिमांझ कबीर न होते
तो लोक, वेद और कलिजुग मिलि करि,
भगति रसातल देते।'

कबीर ने जो भी कहा वह उनका अनुभूत सत्य है। ग्रंथाधारित सत्य नहीं है। इसलिए कबीर कहते हैं-

'तू कहता कागज की लेखी,
मैं कहता आँखन की देखी।'

कबीर के पास अनुभव दृष्टि थी। उनकी प्रत्येक साखी वस्तुतः सत्य की साक्षी है। उन्होंने कहा भी है–

'साखी आँखी ज्ञान की, समझि लेहुँ मन माँहि।
बिन साखी संसार को, झगरो निपटत नाहिं।।'

इसी को कबीर ने पारख ज्ञान कहा है। जानकर, समझकर और परख कसौटी पर कसने के बाद ही कबीर अपना निर्णय देते हैं। कबीर ने तारणहार और धारणहार केवल सद्गुरू को ही माना है। सद्गुरू ही शिष्य का पथ निर्धारण करता है और सद्गुरू ही भवसागर से पार उतारने में सक्षम है। सद्गुरू ही सच्चा सूरमा है वह अपनी अनुभव कसौटी पर कस कर शिष्य को पारस स्पर्श प्रदान कर खरा कंचन बना सकता है। कबीर कहते हैं-

'सतगुरू साँचा सूरमा, ताते लोहि लुहार।
कसणी के कंचन किया, ताइं किया तत्कार।।'

यही बात कबीर के गुरू भाई संत पीपा, सेन और पीपा की संगिनी संत सीता भी कहती हैं–

'लोह पलट कंचन कियो, सतगुरू रामानंद।
पीपा पद रज है सदा, मिट्यो जग रो फंद।।'
'सतगुरू को एको सबद, पड़े कान के मांहि।
सेना सतगुरू को करज, जुग-जुग उतरे नांहि।'
'सीता थपकी सतगुरू, ज्युँ कुम्हार की चोट।
बाँक-चूक हगरी कढ़े, सतगुरू राखे ओट।।'

कबीर आचरण की शुद्धता पर जोर देते हैं। जब तक मन और चित्त निर्मल नहीं होगा तब तक स्मरण का कोई लाभ नहीं। वे कहते हैं-

'माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख मांहि।
मनुआ तो चहुँ दिसि फिरे, यह तो सिमरन नाहिं।।'

तथा

'माला फेरत जुग गया, गया न मन का फेर।
करका मनका डारि के, मन का मनका फेर।।'

यही बात संत पीपा कहते हैं-

'माला, मनका और मन, एक तार हो जाय।
पीपा सुमिरन साँच हे, सतगुरू दियो बताय।।'

साध्वी सीता भी यही बात कहती हैं-

'सुमिरन सोई, साँचलो, साँस, उसाँसा होय।
तन, मन, चित एको करे, सुण नहिं पावे कोय।।'

इसलिए कबीर कहते हैं-

'कबीरा मन निरमल भया, जैसे गंगा नीर।
हरि पीछे-पीछे फिरें, कहत कबीर-कबीर।।'

मन यदि निर्मल हो जाए। इतना निर्मल जितना निर्मल और पावन गंगाजल होता है तब फिर न तो स्मरण की आवश्यकता रहेगी और न प्रार्थना की। हरि स्वयं हमारे पीछे-पीछे दौड़े चले आएँगे।

मन की चंचलता और वक्रता ही हमें ईश्वर से दूर करती है। जिस दिन हृदय की सभी ग्रथियाँ खुल जाएँगी, मन के सभी विकार मिट जाएँगें उस दिन हमारा चरित्र भी निर्मल और निर्विकारी हो जाएगा। हम निष्काम हो जाएँगें।

जिस दिन तन-मन और चित्त की एक निष्ठा, एक सिष्ठा और एक समिष्ठा हो जाएगी उस दिन सच्चे कबीर का अविर्भाव होगा। उस दिन कबीर, फकीर, संत और ओलिया का एक अद्भूत रूप निखर कर प्रत्यक्ष होगा। जिस दिन कबीर की कबीरी प्रकट हो जाएगी उस दिन माया का फंदा भी निष्क्रिय हो जाएगा। कबीर कहते हैं-

'कबीरा माया पापणी, फंद ले बैठी हाट।
सब जग तो फंदे पड्यो, गयो कबीरा काट।।'

कबीर माया के फंद को काट कर ही कबीर बने। कबीर से ओलिया फिर पीर और अतंतः फकीर बन गए। फकीर तो सबसे उपर होता है। कबीर और फकीर तो एक ही दर्जे में माने जाते हैं। कबीर वही हो सकता है जिसकी सभी कामनाएँ समाप्त हो गई हों। फकीर भी वही हो सकता है जो निष्काम हो इसलिए फकीर स्वयं को बादशाह मानता है। जिसकी कोई चाह नही उसे किस बात की चिन्ता। जो निश्चिंत है उसे भला किसकी परवाह?

'चाह गई चिन्ता मिटी, मनुआ बेपरवाह।
जिनको कछु न चाहिए, वो शाहं के शाह।।'

कबीर ने स्वयं कहा है-

'हद तपे सो ओलिया, अणहद तपे सो पीर।
हद-अणहद दोनों तपे, उसका नाम फकीर।।'

कबीर ने हद और अणहद दोनों साध ली थी। इसी कारण वे फकीर थे। सच कहूँ तो संत तो सभी फकीर ही होते हैं। बशर्ते वे परपीड़ा से पीड़ित होते हों। कबीर स्पष्ट करते हैं–

'कबिरा सोई पीर है, जो जाणे पर पीर।
जो परपीर न जानहीं, सो काफिर बेपीर।।'

कबीर कहते हैं-

'सांई इतना दीजिए, जा में कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधू न भूखा जाय।।'

यह है कबीर का समाजवादी स्वरूप। समाजवाद की इससे बेहतर और सटीक परिभाषा और कौन सी हो सकती है? भले ही कबीर कहें-

'मसि कागद छुयो नहीं, कलम गही नहीं हाथ।'

किन्तु उनकी कहनी, रहनी, गहनी और कथनी इस बात की पुष्टि नहीं करती। वे बहुश्रुत थे। अनुभव सिद्ध थे। अपने समय के महान दार्शनिक थे। इसीलिए तो ओशो ने कहा- 'यदि कबीर में से कबीर को निकाल दो तो बचेगा वह कबीर ही होगा।'

महात्मा कबीर दर्शन के उदाहरण की ये साखियाँ उन्हें एक उत्कृष्ट दार्शनिक सिद्ध करने में पर्याप्त हैं।

'तूं-तूं करता तूं भया, मुझ में रही न तूं।
वारी फेरी बलि गई, जित देखौं तित तू।।'

तथा

'लाली तेरे लाल की, जित देखौं, तित लाल।
लली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।।'

इसी दर्शन को वे और स्पष्ट करते हुए कहते हैं-

'जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाँहि।
सब अंधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माँहि।।'

जब सब कुछ भीतर प्रकाशित हो रहा हो। भीतर घट में ज्ञान का दीपक दैदिप्यमान हो उठा हो फिर बाह्य जगत का क्या मोह? कैसा नाता? 'जो ब्रह्मांडे-सोई पिंडे' ऐसा संत पीपा जी ने भी कहा है। जगत का कण-कण जब राम मय दिखने लगे। और तूं-तूं कहते मैं का अहंकार बोध समाप्त हो जाए तो सर्वत्र उसी पूर्ण ब्रह्म परमात्मा की ही छवि दृष्टिगोचर होने लगती है। ऐसी स्थिति में यदि कबीर कहते हैं-

'मेरा मन सुमिरै राम कूँ, मेरा मन रामहिं आहि।
अब मन रामहि व्है रह्या, सीस नवावों काहि।।'

ऐसे हैं कबीर और ऐसा है उनका दर्शन। खरी खरी कहने वाला वह सच्चा फकीर किस की परवाह करता और क्यों करता? कबीर तो खड़े चौराहे कहता है-

'कबीरा खड़ा बाजार में लिए मुराड़ा हाथ।
जे घर फूँके आपणों, चले हमारे साथ।।'

घर कौन सा फूकना है? कबीर ऐसा क्यों कहते हैं? कबीर साहित्य के विद्वान समझाते क्यों नहीं साधारण जन को? ऐसा न हो जाए कोई कबीर का चेला सच में घर फूंक कर उनके पीछे चल पड़े। चल पड़े कबीर के पथ पर?

मुझे तो लगता है वे अपना 'घट' फूंकने की बात कहते हैं। घट के भीतर जो एषणाएँ हैं जो कामनाएँ हैं। ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, अहंकार, काम, बैर आदि जो दुष्प्रवृत्तियाँ हैं उन्हें जलाकर नष्ट करने का आह्वान कबीर करते हैं। पहले अपने घट को निर्मल कर लो। एक दम खरे हो जाओ। अपने भीतर को सभी एषणाओं से मुक्तकर लो। एक दम रीत जाओ। भीतर की शेष बची मैल पर भी सद्भाव का पोंछा फेर दो। खाली और स्वच्छ हृदय और निर्भय चित्त मस्तिष्क लेकर सद्गुरू के पास पहुँचो। कुछ पाना है तो अपने पात्र को खाली रखो। वर्ना सब बिखर जाएगा। फिर मेरे साथ चलो। फिर मेरे पथगामी बनो। अन्यथा मेरा तुम्हारा साथ नहीं निभ पाएगा। तब वही कबीर कहते हैं-

'कबीरा खड़ा बाजार में, मांगे सबकी खैर।
न काहू से दोस्ती, न काहू से बैर।।'

ऐसी स्थिति तभी बन सकती है जब हम स्थितप्रज्ञ हो जाएँ। हमारे मन में प्रेम की निर्झणी झरने लगे। प्रेम तो हमारे निर्मल मन की कोमल भावनाओं की शीतल निर्झणी है। वही निर्झणी हमें समस्त जीव जगत से सम भाव रखना सिखाती है। जब तक वह निर्झणी निर्मल है, तब की निर्झणी प्रेम 'सर्वे भवंतु सुखिनः' का संदेश देकर हमें 'मा कश्चिद, दुख भाग भवेत' की भव्य भावना के लिए प्रेरित करती रहेगी। प्रेम भीतर का निर्मल भाव है। स्वतः उद्भूत है। वह न बाजार में जाकर खरीदा जा सकता है और न किसी हाट से मोलाया जा सकता है।

'प्रेम बाजारां नी बिके, प्रेम न हाट बिकाय।।'

जब भी प्रेम की निर्झणी में कोई मैला नाला आ मिलेगा तब वह निर्झणी प्रदूषित हो जाएगी। प्रेम वासनामय और स्वार्थमय हो जाएगा। उस निर्झणी को निर्मल रखना अत्यंत आवश्यक है। इसलिए कबीर मन को गंगा के नीर की भाँति निर्मल बनाए रखने की बात करते हैं। वे मन को वश में रखने का संदेश इसीलिए देते हुए कहते हैं-

'कबिरा मन पंछी भया, बहुतक चढ़या आकास।
उहाँ ही ते गिरि पड़या, मन माया के पास।।'

मन पंछी जब स्वच्छंद हो जाता है तब वह उँची आकाशी उड़ाने भरने लगता है। वहीं से वह थककर और विवश होकर माया के चरणों में शरणम् हो जाता है और अनेक विकारों से भरकर अपनी निर्मलता खो बैठता है। इसलिए इस मन को वश में रखना आवश्यक है। इसलिए तो कबीर कहते हैं जिसका मन वश में नहीं वह खुदा को या ईश्वर को कैसे प्राप्त कर सकता है?

'जा का दिल साबत नहीं, ताको कहा खुदाई?'

इसलिए-

'कहत कबीर सुनहुरे प्रानी, छाड़हू मन के भरमा।
केवल नाम जपहू रे प्रानी, परहू एक की सरना।।'

एक आस और एक विश्वास जब तक नहीं होगा। तब तक मन भटकता ही रहेगा। इस प्रकार कबीर के सहज धर्म का स्वरूप सब प्रकार से सात्विक, सरल, सहज और भावनात्मक है। उनकी नैतिकता, सात्विकता, सरलता और मानवता सर्वधर्म समानत्व पर आधारित है। वस्तुतः कबीर सहज धर्म के प्रणेता, प्रस्तोता और प्रचारक थे। कबीर स्पष्ट कहते हैं-

'एक जोत से सब उत्पन्ना, कौन बाम्हन कौन सूदा।' कबीर तो सबके हैं। सभी कबीर के हैं। विद्वान कबीर के वाणी सागर में गोता लगाकर रत्नमणियाँ ढूण्ढने में प्रयत्नशील बने रहते हैं और सामान्य जन कबीर के वाणी सरोवर में विकसित बहुरंगे कमल पुष्पों की रूप छवियाँ निहार कर आनंदित होते हैं।

'जिन डूबा तिन पाइया।' जो डूब गए वे पा गए और जो किनारे बैठे रह गए वे भी कुछ तो अपनी झोली में भर ही लाए। खाली कोई नहीं गया। यही तो कबीर की कबीरी है कि, वे कल भी प्रासंगिक थे आज भी प्रासंगिक हैं। आने वाले कल भी वे प्रासंगिक रहेंगे। कबीर कभी मर नहीं सकता। उन्होंने स्वयं कहा है-

'हम न मरिहें-मरिहें संसारा।'

●

निदेशक-
मालव लोक संस्कृति अनुष्ठान,
मनासा नीमच (म.प्र)
मो. 9424041310

गायत्री मंत्र

देवी भागवत के अनुसार वैदिक गायत्री मंत्र सर्वोच्च मंत्र है।

गायत्री मंत्र का जप करने से पूर्व शताक्षरी (100 अक्षर वाले) मंत्र का एक बार पाठ करना उचित बताया है, इसमें गायत्री मंत्र (24 अक्षर), त्रयम्बक मंत्र (32 अक्षर) एवं जटावेदा मंत्र (44 अक्षर) समाहित हैं। सामान्यतः एक सूक्त मंत्र का एक ऋषि एवं एक देवता होता है। गायत्री मंत्र के 24 अक्षरों के 24 ऋषि एवं 24 देवता (अग्नि, अश्विनी कुमार के। इसमें 24 शक्तियाँ (वामदेवी-त्रिपदा), 24 वर्ण (रंग), 24 तत्व (5 पंचभूत, 5 उनके गुण, 5 कर्मेन्द्रियां, 5 ज्ञानन्द्रियां, 4 मुख्य प्राण (49 में से) एवं 24 मुद्रा का भी समावेश है।

संदर्भ : *Bhavans Journal*

हिन्दी भाषा के मुसलमान कवियों का स्वर्णकाल

अक्षय कुमार देराश्री

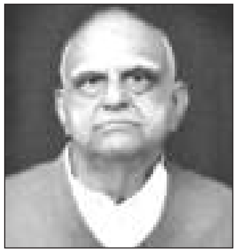

हिन्दी मन्दिर प्रयाग द्वारा 'कविता कौमुदी' नामक पुस्तक कई भागों में बहुत पहले प्रकाशित हुई थी। इसका पहला भाग वि.स.1974 में प्रकाशित हुआ। उसके शुरू में हिन्दी का संक्षिप्त इतिहास दिया हुआ है। उसमें लिखा है कि जब से कुछ मुसलमान शासक विदेश से इस देश में आये, उसी समय से उनका हिन्दी के साथ घनिष्ठ संबंध रहा है। यद्यपि शासक वर्ग की भाषा अरबी, तुर्की, या फारसी थी, परन्तु उत्तर भारत में अधिकांश लोग हिन्दी भाषी थे। गुजरात और महाराष्ट्र की भाषायें भी हिन्दी से मिलती जुलती थी। अधिकांश भारत में सामान्य हिन्दी समझी जा सकती थी। भारत के प्रत्येक प्रांत में इसके द्वारा काम चल सकता था। अतः शासकों को जनता से संपर्क रखने के लिए हिन्दी का प्रयोग करना पड़ता था। कविता कौमुदी में दिये 'हिन्दी का संक्षिप्त इतिहास' नामक अध्याय में लिखा है कि मुहम्मद कासिम, महमुद गजनवी और शहाबुद्दीन गोरी ने भारत में अपने दफ्तरों में हिन्दी में ही कार्य किया।

उपरोक्त कथन की पुष्ठि द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग कार्य विवरण दूसरा भाग (संवत् 1981) नामक पुस्तक से होती है। इसमें सैयद अमीरअली मीर का हिन्दी और मुसलमान शीर्षक के अंतर्गत एक लेख प्रकाशित हुआ था। सैयद अमीरअली ने अपने लेख में लिखा कि यहां के लोगों की बात समझने व अपनी बात समझाने के लिए महमूद गजनवी अपने साथ हिन्दी के जानकारों को रखता था। जब कालिंजर के राजा नन्द ने उसे एक दोहा लिखकर भेजा तो उसका अर्थ महमूद ने हिन्दी के विद्वानों से ही समझा था। अमीर अली के अनुसार राजस्व का हिसाब हिन्दी में ही लिखा जाता था। सिक्कों कपड़ों व हथियारों के भी नाम हिन्दी में ही दिये जाते थे। अमीर अली का परिचय जोधपुर के इतिहासकार मुंशी देवी प्रसाद से था। उनके अनुसार पूर्ववर्ती मुसलमान बादशाहों के सिक्कों पर लिखे गये हिन्दी अक्षरों से हिन्दी भाषा के प्रयोग की पुष्टि होती है।

- सन् 712 से 1581 तक मुसलमान शासकों के अधीनस्थ कार्यालयों की भाषा हिन्दी ही थी। परन्तु टोडरमल ने अपना रेकार्ड फारसी में रखना शुरू किया।
- अकबर ने हिन्दी सीखी थी। व उसमें फुटकर दोहे रचे। वह दोहा लिखता नहीं था। बुद्धि से रचकर पढ़ता था। जहांगीर को भी अकबर ने हिन्दी पढ़वाई। जहांगीर के बड़े लड़के खुसरो ने अपने हिन्दी अध्यापक भूदत्त भट्टाचार्य से हिन्दी सीखी। शाहजहां भी हिन्दी में बोलता था व इसे समझता था। दारा शिकोह हिन्दी व संस्कृत का विद्वान था।
- मुंशी देवी प्रसाद ने मुसलमानों के शासन काल के 78 मुसलमान हिन्दी कवियों की सूचि बनाई थी। अमीर अली ने हिन्दी के 7 और मुसलमान कवियों को ढूंढ निकाला।

● इसी काल में कुछ मुसलमान विद्वान संस्कृत के भी ज्ञाता थे। सरहिन्द निवासी काजी इबाहिम ने अथर्ववेद, नकीब खां, अब्दुल कादिर आदि ने महाभारत व रामायण, शेख अब्दुल फैजी, फजल ने लीलावती, गुजराती मुकम्मिल खान ने ताजक, मौलाना शाह मुहम्मद ने राजतरंगिणी, मौलाना शेरी ने हरिवंश व फैजी ने नल दमयंती का फारसी में अनुवाद किया था।

●16वीं सदी ई. में बादशाह अकबर, कादिर बक्श, खानखाना रहीम, अब्दुल फैज नागौरी, अब्दुल फजल, मलिक मुहम्मद जायसी, सैयद इब्राहिम, मुबारिक व 17वीं सदी में अहमद अब्दुल रहमान, अब्दुल जलील, 18वीं सदी में याकूब खां, जुल्लिफकार, अनवर खां, युसुफ खां, शाह बरकत (प्रेमी दमन) व आजिम व 19वीं सदी में सैयद गुलाम नबी, तारिब अली (रसनायक) व नबी ने हिन्दी में साहित्य सृजन किया। इनमें अहमद ने वेदान्त पर फुटकर कविता, वहाव ने बारह मासा, याकूब खां ने रसिक प्रिया, जुल्फिकार ने सतसई आजिम ने नखशिख पर टीकायें लिखी।

● हूमायूं, अकबर, दाराशिकोह, शाहजहां, औरंगजेब, पठान, सुल्तान, फाजिल अली रंगरेज, आसिफुद्दोला, मुहम्मद शाह, अली अकबरखां, कायम खां, शाह मुहम्मद अली आदि शासकों के दरबार में हिन्दी के कवि रहते थे।

● राजा मानसिंह, हिन्दुओं की परम्परा के अनुसार जब अटक पार करने में झिझक रहे थे तो अकबर ने निम्न दोहा लिख भेजा–

सबे भूमि गोपाल की, या में अटल कहा।
जाके मन में अटक के सोई अटक रहा।।

● मुसलमानों को हिन्दी का ज्ञान देने के लिए अमीर खुसरो ने 'खालिक बारी' नामक पुस्तक की रचना की थी।

● मुहर्रम के दौरान पाठ किये जाने वाले मरसियों में भी हिन्दी के पर्याप्त शब्द हैं।

● उपरोक्त लेखकों ने अन्हिलपुर पाटन (गुजरात) के सोलंकी राजा जयसिंह (संवत 1150 से 1200) के राज्य काल में कुतुबअली नामक हिन्दी के कवि का उल्लेख किया है।

● हिन्दी भाषा की नींव संभवतः सबसे पहले अमीर खुसरों ने रखी थी। उनका देहान्त संवत् 1382 में हुआ था।

● 17वीं सदी में सैयद मुबारक अली हुए। वे संस्कृत के विद्वान थे। इसी काल में ताज नाम की एक महिला भी हिन्दी की कवियत्री हुई। शहजाता मुअजुम के आश्रित आलम ने हिन्दी में 'आलम केली' नामक एक ग्रंथ लिखा था। नूरमुहम्मद ने संवत 1800 में 'इंद्रावती' नामक एक ग्रंथ बनाया था। इन्होंने जायसी के पदमावत की तरह ही 'इंद्रावती' ग्रंथ बनाया था।

● संत दादू जी के शिष्य रज्जबजी हिन्दी के विद्वान थे। उन्होंने सर्वांगी ग्रंथ रचा था।

● अकबर के दरबार में हिन्दी गवैयों को प्रमुखता मिली हुई थी। कविता कौमुदी के लेख, हिन्दी के संक्षिप्त इतिहास के अनुसार खानखाना बेंरामखां ने बाबा रामदास को एक ही दिन में एक लाख रुपये प्रदान किये थे। इस तरह इस लेख में लिखा गया कि मुगल साम्राज्य की उन्नति के साथ हिन्दी की उन्नति हुई और उसके पतन के साथ हिन्दी का भी रंग फीका पड़ गया। इस लेख के अनुसार किसी किसी मुसलमान कवि ने तो हिन्दी में सर्वोतम कवितायें लिखी थी।

संक्षेप में मध्य कालीन मुस्लिम शासन के दौरान हिन्दी खूब फली-फूली। इस युग में केवल हिन्दुओं ने ही नहीं, अपितु मुसलमानों ने भी हिन्दी में साहित्य सृजन किया। सभी मुगल बादशाह हिन्दी के प्रेमी थे।

संदर्भ ग्रंथ-

1. द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग कार्य विवरण दूसरा भाग प्रकाशक हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग संवत 1981)
2. नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग-2, अंक-3, संवत 1978
3. मिश्र बंधु विनोद प्रथम भाग
4. कविता कौमुदी।

●

रविकोट, पो. बानेड़ा, भीलवाड़ा
(राज.) - 300401, मो. 9413863100

मैं अचल सनातन आत्मा हूं

।।ॐ।। 'भोर की वेला में मैने अनुभव किया है कि– मैं देहरूप से रहित हूं। चारों ओर नीरवता है। कहीं कोई शब्द नहीं। सर्वत्र ही प्रकाशमय अवस्था है। प्रकाश ही प्रकाश है। मैं यह भी नहीं जान पा रहा हूं कि मैं कहां हूं। कि मुझे कहां जाना है? कि अब मुझे क्या करना है कुछ भी याद नहीं। मुझे अपना नाम भी याद नहीं आता। कोई स्मृति नहीं। एक अनाम अवस्था है। मैं स्मृति पर जोर देता हूं। किन्तु कुछ भी याद नहीं आ रहा है। मुझे अपने नाम का स्मरण भी नहीं हो पा रहा है। न परिवार का ही। कि मैं कौन हूं? कि मैं कहां से आया हूं। कि मुझे क्या करना है। या कि मुझे कहां जाना है। मेरी सब की सब स्मृति कहीं चली गयी है। मैं कुछ भी स्मरण कर नहीं पा रहा हूं। मैं कुछ याद करने का प्रयास करता हूं, किन्तु कुछ भी याद आता नहीं। स्मृति कोष पूर्णतः रिक्त है। न पीछे की कोई स्मृति है न आगे ही कुछ दिखाई/सूझ रहा है। मैं इस अनाम अवस्था में स्वयं को ही देख रहा हूं। स्वयं के अस्तित्व को जान रहा हूं। कि सर्वत्र ही स्थिरता है। सर्वत्र ही नीरवता है।' सर्वत्र ही शून्य का पसारा है। सर्वत्र ही अचलावस्था है। मैं केवल अचलावास्था का अनुभव कर रहा हूं। कहीं कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है। कहीं कोई दूसरा अस्तित्व नहीं। एक विराट भाव मात्र है। मैं अकुलाहट सी अनुभव करता हूं कि यह क्या हो गया। मुझे कोई भी निदान मिलता नहीं। मैं प्रयास करके भी अपना नाम स्मरण कर नहीं पा रहा हूं। मैं स्थिति में कोई परिवर्तन कर नहीं पा रहा हूं। मुझे कुछ भी याद आता नहीं कि मुझे अब क्या करना है? कि कहां जाना है? कुछ भी स्मरण नहीं। मैं केवल अस्तित्ववान हूं। किन्तु नाम और रूप से रहित हो गया हूं। मैं स्वयं को स्थिर और अचल सा अनुभव कर रहा हूं। एक जैसा पुरातन। चिर अस्तित्व है मेरा। लगता है मैं ही सर्वत्र व्याप्त हूं। मैं देख रहा हूं कि चारों ओर सर्वत्र एक ही प्रकाश व्याप्त है। कहीं कोई अंधकार नहीं। कहीं कोई आहट नहीं। कहीं कोई आकृति नहीं। कहीं कोई नहीं। केवल प्रकाश। केवल प्रकाश। सर्वत्र ही सन्नाटा व्याप्त है। एक अजीब सी मोहकता है। आकर्षण है। स्थिर अचलता है। मैं स्वयं को हाथ-पैर और देह से रहित अनुभव कर रहा हूं। कोई रंग-रूप नहीं। किन्तु मैं चारों ओर देख रहा हूं। मानों बहुत ही ऊंचाई पर हूं। मुझे अब अब क्या करना है, कहां जाना है, कुछ भी सूझता नहीं। कुछ भी स्मरण आता नहीं। सोचता हूं कि यह क्या हो गया। कि अब मैं क्या करूंगा? लगता है अब कुछ भी करना नहीं। कहीं कोई विगत की स्मृति नहीं। कोई आत्मनिर्देश भी नहीं। कोई प्रेरणा-स्वप्रेरणा नहीं। कोई जिज्ञासा भी नहीं। मैं अचल हूं। मैं स्थिर हूं। मैं अस्तित्ववान हूं। मैं स्वयं को ही देख जान रहा हूं। अचल, स्थिर और सर्वत्र व्याप्त हुआ। कहीं कोई शब्द नहीं। कोई थकान नहीं। मैं अचल हूं। मैं चाहकर भी इस अवस्था में कोई परिवर्तन कर नहीं पा रहा हूं। मुझे कुछ भी स्मरण आता नहीं। आगे पीछे कुछ भी दिखाई देता नहीं। आगे की कोई भी कल्पना नहीं। पीछे का कोई शेष नहीं। आगे-पीछे की कोई

स्मृति नहीं। केवल शून्य अवस्था है। एक अचल स्थिरता है। एक विराट भाव है। मात्र स्थिरता है। शांत निष्क्रियता है। यह अवस्था देर तक कुछ समय बनी रहती है। मैं धीरे-धीरे अब पुनः स्मृति प्राप्त करता हूं। मैं स्वयं को देहरूप में अनुभव करता हूं। बड़ी मुश्किल से मुझे स्वयं का नाम याद आता है। मैं अब स्वयं को ही सामान्य सा अनुभव कर रहा हूं। इस देहरूप को अस्तित्ववान होना जान रहा हूं। किन्तु अब वह बात नहीं, जो पहले थी। अब मुझे वक्त पर कुछ याद आता नहीं। परिचित नाम, स्थान, विवरण आदि का विस्मरण हो जाता है। मन-मस्तिष्क में एक स्थिरता सी रहती है। अब विस्मृत को पुनः स्मरण करने तथा आगत को जान लेने की उत्सुकता भी नहीं। स्मृति का भी अब कोई आधार नहीं। तदस्तु।। ॐ शम्।।

यह अन्तःस्थ प्रभु के प्रसादस्वरूप प्राप्त और माँ शारदा की कृपा से अभिव्यक्त हुआ निर्बीज/निर्विकल्प/शून्य समाधि अवस्था का अनुभव है जो कि योग-यात्रा (साधना) का अंतिम पड़ाव होता है- तद्गत् अवस्था को प्रकट करता हुआ।। ।।ॐ।।

गिरीश कुमार चौबे 'गोवेर्धन'
द्वारा- अक्षर अनुसन्धान केंद्र, (अनुपम अमृत विद्यापीठ)
37, क्षपणक मार्ग, दशहरा मैदान, 'ए' स्कीम,
उज्जैन, म.प्र. पिन- 456010, मोबा. 094250 74072

गीता और सूफीमत

प्रायः सभी जानते हैं कि भगवद्गीता के अस्तित्व में आने के शताब्दियों पश्चात् इस्लाम धर्म का उदय हुआ। इस्लाम में उदारवादी सूफीमत का अपना विशिष्ट स्थान है जो कि रूहानी सिलसिला (अध्यात्म परम्परा) पर आधारित है। भगवद्गीता में उपनिषदीय अध्यात्म परम्परा का समावेश है। भगवान कृष्ण की प्रतिज्ञा गीता में स्पष्ट है कि धर्मसंस्थापना हेतु मेरा सृजन होगा। ऐसा संस्थापना का कार्य अध्यात्म पम्परा के अनुरूप ही होगा। अतः यह सूफीमत को भी अवश्य ही प्रभावित करेगा और अध्यात्म का सहायक रहेगा। प्रसंगवश रामकृष्ण मिशन के विश्वविख्यात संत स्वामी विवेकानंद के समकालीन भारत में प्रसिद्ध नक्शबंदिया सूफी महात्मा फजल अहमद साहब ने इस्लाम में प्रचलित लौह परम्परा को तोड़कर बिना इस्लाम कबूल करवाये अपने हिंदू शिष्यों को उच्चतम अध्यात्म ज्ञान प्रदान किया था। अपने योग्यता हिंदू शिष्य महात्मा रामचंद्र को यह कहकर आत्म विद्या दी कि 'यह आत्म विद्या पहले हिंदुओं के पास थी और उनके पास से ही इस्लाम के पास आई। अब यह लौटाई जा रही है जिससे पुनः इसका हिंदुओं में प्रचार-प्रसार करो।' भक्तिकालीन युग में भारत में हिंदू संतमत और सूफीवाद समान रूप से फले-फूले थे। इस्लाम के पास यह हिंदुओं वाली विद्या कैसे पहुंची थी? इसका ऐतिहासिक कारण रहा है। इस्लाम के प्रवर्तक मोहम्मद साहब के पश्चात् उनके दो प्रमुख शिष्यों उमर तथा अली (दामाद) की हत्या हुई। कालांतर में अली के पुत्र हुसैन की भी हत्या (शहादत) कर्बला में हुई जिसे स्वयं मुसलमानों ने धोखा दिया था। इन प्रारंभिक हत्याओं के फलस्वरूप इस्लाम में अनिश्चितता छा गई। तब अली के पोते जैनुल अबीदीन ने अपने सूफी आत्मज्ञानी मित्र तौस अबु अब्दुल रहमान से सहायता मांगी। इस्लाम की कट्टरता तथा शरीअत की अनिवार्यता से मुक्त रहने की शर्त पर तौस का इस्लाम अपनाने पर स्वागत हुआ। तौस इस्लामी सूफीवाद के जन्मदाता बने। तत्कालीन हिंदू जोगियों (गेरुआवस्त्रधारी) तथा सफेद चोगाधारी ईसाई धर्म प्रचारकों के समानांतर तौस ने ऊनी टोपी तथा ऊनी लबादा धारण करके सूफी धर्म प्रचारकों के लिए वेष-भूषा का निर्धारण किया। अरबी भाषा में सूफ के अर्थ ऊन तथा स्वच्छता होते हैं। यूनानी भाषा में सूफ के मूल को सोफिया माना गया है जिसका अर्थ फिलासफी अथवा दर्शन होता है। किन्तु तत्कालीन अरब में मानव धर्म (हिन्दू धर्म) का प्रचलन था जो कि प्रकाश और अच्छाई के मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित था। संस्कृत शब्द शुभ का अर्थ अच्छाई या प्रकाश होता है। स्वयं अरब इतिहासकार याकूबी (नवीं शती) ने उल्लेख

किया है कि नवीं शती तक भारत की सीमाएं इराक तक थीं। स्पष्टतः मानवधर्म (हिंदू धर्म) और सूफीवाद की मौलिकता की परम्परा एक ही थी। तौस से पहले सूफी परम्परा कहां थी तथा सूफियों को यह आत्मज्ञान सबसे पहले कब और कहां मिला यह अज्ञात है। यदि सूफीवाद मानव धर्म परम्परा से नहीं रहा होता तो आज तक चले आ रहे इस्लामी अरब राष्ट्र सीरिया और इराक ने अपनी अपनी राजधानियों के हिंदू (भारतीय मूल के नाम दमिश्क (धम अ अशोक धम्म उ अशोक) तथा बगदात (भगदत्त अर्थात् भगवान के द्वारा दिया गया) का इस्लामी अनुवाद कर दिया होता अथवा बदल दिया होता। ई.पू. तीसरी शती में भारतीय सम्राट अशोक के धर्म संदेश सीरिया, यूनान तथा मिस्त्र तक भेजे गए थे। कालांतर में तीसरी शती में इराक-ईरान में काशीमूल के एक आत्मज्ञानी ब्राह्मण मई (मने अथवा मनु) के द्वारा मानवीय धर्म की स्थापना की गई थी। विभिन्न अरब तथा पश्चिमी एनसाइक्लोपीडियाओं में इस भारतीय मूल के मानवीय धर्म की खंडित अथवा अपूर्ण सूचना व्यक्त की गई है। अंततः यह विश्वास व्यक्त किया जा सकता है कि इस्लामी तथा हिंदू अध्यात्म परम्परा का यह समन्वित उदाहरण संपूर्ण मानवता को पुनः लाभान्वित करेगा। भगवद्गीता के भगवान कृष्ण के वचनों को सार्थक स्वरूप एवं विश्वव्यापी आयाम देने हेतु यह प्रत्यक्ष उदाहरण होगा।

वीरेंद्रनाथ भार्गव
12, महावीर नगर, जयपुर-302018

अद्वितीय-मेहकर बालाजी (विष्णु)

यह मंदिर बुलडाना (महा.) की प्रणीता नदी तट पर मेहकर में स्थित है। यह मूर्ति कई कारणों से अतिविशिष्ट है- 1. मूर्ति की सबसे ज्यादा ऊंची मूर्ति। 2. इसके बाईं ओर महेश एवं दाईं ओर ब्रह्मा बने हुए हैं, इस कारण से इसे त्रिनाथेश्वर की संज्ञा भी प्राप्त है। मुकुट में विष्णु का एक अवतार श्रन्गाधर उकेरा हुआ है। 3. इसके परिकर में दोनों ओर पांच-

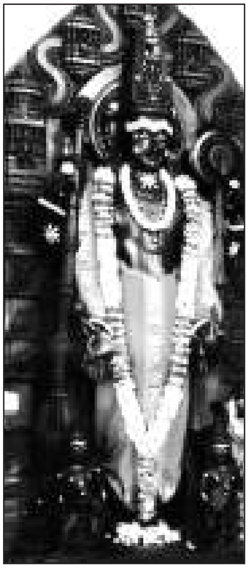

पांच छोटी मूर्ति खुदी हुई है, जो कि दशावतार के परिचायक हैं। 4. मूर्ति के पैरों के पास जय-विजय की मूर्तियां हैं। 5. मूर्ति के बाईं ओर पैरों के पास श्री देवी (लक्ष्मी)। 6. चर्तुभुज मूर्ति के ऊपर के हाथों में चक्र एवं गदा है। नीचे बायें हाथ में शंख है, दाहिने हाथ में एक पुष्प एवं सर्प है। 7. मुखारबिन्द से स्पष्ट दिखता है कि देव मुस्करा रहे हैं। 8. मूर्ति के उरुप के दर्शन होते हैं- प्रातः बालरूप, अपरान्ह-युवा, संध्या -प्रौढ़।

इतिहास के अनुसार वर्ष 1888 में खुदाई के समय वन क्षेत्र में चंदन के 4.5 मीटर लम्बे बक्से में मूर्ति एवं कुछ ताम्रपत्र मिले थे। ब्रिटिश इस मूर्ति को लंदन ले जाना चाहते थे, किन्तु ग्रामीण लोगों ने आनन-फानन में मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा सम्पन्न कर दी, जिस कारण मूर्ति को अंयत्र नहीं ले जा सके। नाराज प्रशासन ने 60 ग्रामीण को जेल में बंद कत्र दृदिया था। ताम्रपत्र ब्रिटेन भेज दिये गये थे, अतः उन पर क्या अंकित था, नहीं पता लग सका।

स्वर्ण मयूर घड़ी

यह घड़ी वर्ष 1777 में ब्रिटेन के यांत्रकीय विशेषज्ञ जेम्स काक्स ने बनाई थी एवं वर्ष 1797 में इसे रूस के Prince Grigory potenkin ने Catherine the Great Great के लिए खरीदा था, बताया जाता है कि वह उनकी पत्नी थीं, किन्तु समाज के लोगों को इसकी जानकारी नहीं थी। वर्ष 1799 में इसे रूस के ही Saint Petersburg स्थित Heritage Museum में रखवा दिया गया, प्रति गुरुवार को इसे चलाकर पर्यटकों को दिखाया जाता है। इसका नाम 'स्वर्ण मयुर घड़ी' अवश्य है, किन्तु यह स्वर्ण से निर्मित एक छोटा सा बगीचा है, जिसमें पेड़, मोर, उल्लू, डरैगन फ्लाई, गिलहरी एवं एक

मुर्गा देखे जा सकते हैं। अनेक गियर चक्र एवं लीवर से संचालित पक्षी जीवंत हो उठते हैं। एक विशेष चाबी लगा कर घुमाने से प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। पहले अल्प समय के लिए 'जिंगल बैल' धुन सुनाई देती है, फिर उल्लू अपना सिर घुमाता है, इसके बाद मोर अपनी पूंछ उठाता है, गर्दन घुमाता है, शरीर के ऊपर के पंख उठाता/फड़फड़ाता है, अंत में मुर्गा आवाज करता है। लीवर एवं गीयर इन पक्षियों के पास दिखाई नहीं देते हैं।

घड़ी तो एक कुकुरमुत्ते (Mushroom) में छिपी सी है, यह समय गणित के रोमन अंक में (घंटे, मिनट) दर्शाती है। यह देखकर आश्चर्य होता है कि आज से 250 वर्ष पूर्व भी ऐसे विशेषज्ञय होते थे जो इस प्रकार की जटिल यांत्रकीय ढांचा बनाने में समर्थ एवं सक्षम थे।

यूरोपीय सभ्यता में नदी को देवी मानना

लंदन की थेम्स (Thames) नदी को कम से कम 5500 वर्ष पूर्व भी देवी मानकर विभिन्न वस्तुएं अर्पित की जाती थी। हाल ही में इस नदी तट पर London Borough of Havering (near Rainham) के 60 मीटर चतुर्भुज क्षेत्र में हुई खुदाई में 6 मीटर वृत (Diameter) का मंदिर एवं एक मीटर गहरे चार गड्ढे मिले थे। इनमें से एक में 453 प्रकार की वस्तुएं थीं, अधिकांश टुकड़ों में थी, इनका भार 45 कि.ग्रा. था और इन्हें थैलों में भरकर रखा गया था। इनमें तलवार के टुकड़े-38, कांसे (bronze) की कुल्हाड़ी के टुकड़े-146, खंजर (Dagger), उस्तरे (Razor), भाले का मुख (Spear head) के टुकड़े-40 थे। बाकी गढ़ों में चीनी मिट्टी (Pottery) के टुकड़े थे। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वस्तुओं के टुकड़े कर अर्पण करने की परम्परा रही होगी। कई अन्य देशों में भी नदी की देवी मानने की परम्परा है।

जितेन्द्र नाथ जौहरी

ई-234, सैक्टर-14, हि.मगरी, उदयपुर-313002 (राज.)

मो. 8003188087

साग-सब्जियों में प्रचूर औषधि

हिन्दू धर्म में शाकाहार को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। हमारे बुजुर्गो का आरम्भ से ही यह मानना रहा है कि हमारा पेट कोई श्मशान घाट नहीं है जो हम मांसाहार पद्धति अपनाकर दूसरे जीव-जन्तुओं का भक्षण करें। मांसाहार करने वाले उसके पक्ष में यह तर्क देते आए हैं कि मांसाहार से यानि अण्डा, मांस मछली के सेवन से शाकाहार की अपेक्षा ज्यादा विटामिन, प्रोटीन, खनिज व लवणों की प्राप्ति होती है। मांसाहारियों का ऐसा सोचना सरासर गलत है। ऐसे लोगों को हम यह बता दें कि शाकाहार के द्वारा अनेक विटामिन, प्रोटीन, खनिज व लवणों की सहज ही प्राप्ति की जा सकती है। साग-सब्जियों और पत्तों में ऐसे प्रचुर खनिज लवण हुआ करते हैं, जिनसे हमारे शरीर के कई रोग खत्म हो सकते हैं। इस विषय पर श्री रामानुजाचार्य मठ, देवघाट, गया (बिहार) के स्मृति शेष स्वामी श्री राघवाचार्यजी महाराज से हुए वर्तालाप के आधार पर आइये, हम आपको यह बताते हैं कि किन सब्जियों में कौन-कौन से औषधिय गुण होते हैं और उनके सेवन से हम कौन-कौन से खनिज प्राप्त कर सकते हैं।

सरसों का साग (Musterd herb) : शीत ऋतु में मक्का की रोटी के साथ सरसों का साग खाने का एक अलग ही आनंद है। शीतऋतु में सरसों का साग खाने से स्नायु पुष्ट होते हैं। सरसों का साग पेट के लिए बहुत ज्यादा लाभकारी होता है। पेट में जमा गंदगी को साफ करने के साथ-साथ यह पाचन क्रिया को दुरुस्त रखता है। सरसों के साग में भरपूर विटामिन, लवण और खनिज पदार्थ होते हैं। पथरी को शरीर से बाहर निकालने में भी सरसों का साग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और मासिक धर्म अनियमित रूप से होता है और मासिक धर्म के समय ज्यादा पीड़ा का अनुभव होता है उन्हें सरसों का साग अवश्य खाना चाहिए। वैसे सरसों का साग कठिनाई से हजम हो पाता है पर इसमें सोया और अदरक मिलाकर इसका यह दुर्गण दूर किया जा सकता है।

लौकी (Pumpkin) : हर किसी की चाहत होती है कि उसके घर में बेटा पैदा हो पर उनकी यह इच्छा पूरी नहीं हो पाती है और उनके यहां बेटे की जगह बेटियां ही पैदा होती है जबकि बेटे और बेटी दोनों बराबर हैं। लोगों का कहना है कि जो लोग अपने आंगन में बेटे को खेलते देखना चाहते हैं, उन्हें लौकी का सेवन ज्यादा करना चाहिए। चिकित्सक भी लोगों की इस धारणा से सही ठहराते हैं। लौकी के नियमित सेवन से बेटे के पिता होने का गौरव प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि लौकी में पुरुषत्व ज्यादा मात्रा में होता है। लौकी की एक विशेषता यह है कि लौकी के सेवन से हृदय ग्रंथियों के आवरोध मुक्त रखकर हृदय ग्रंथियों को साफ-सुथरा रखा जा सकता है।

परवल (Pointed gourd) : बंगाल की महिलायें परवल की सब्जी का सेवन विशेष रूप से करती है। परवल में आयोडीन, फास्फोरस और आयरन भरपूर मात्रा में होता है। चूंकि बंगाल की महिलायें परवल का सेवन बहुतायत में करती है इसलिए बंगाली महिलाओं के बाल घने, चमकीले,लंबे और मोटे होते हैं। परवल की सब्जी जल्दी से पच जाती है। बालों की सुन्दरता बनाये रखने में और सिर का गंजापन दूर करने में परवल की सब्जी की मुख्य भूमिका रहती है। कड़वे परवल के पत्तों के रस की मालिश अगर सिर के बालों की जड़ों में की जाए तो बालों का झड़ना रोका जा सकता है। परवल की दो किस्में होती हैं - ***मीठा परवल व कड़वा परवल***

कड़वे परवल से औषधि का निर्माण किया जाता है और मीठे परवल को सब्जी बनाने के काम में लाया जाता है। मीठे परवल की सब्जी में फॉस्फोरस, कैल्शियम और लौह तत्व अधिक मात्रा में होते हैं, जिससे बालों को पुष्टता प्राप्त होती है और वे काले और घने होते हैं।

बथुआ (A pot-herb) : बथुआ में एक तरह से पौष्टिक तत्त्वों की भरमार सी रहती है। ज्यादा तला-भूना, ज्यादा गरिष्ठ भोजन करने से जिन लोगों के शरीर पर ज्यादा चर्बी चढ़ जाती है, उन्हें अपने आहार में बथुए को जरूर मिलाना चाहिए। बथुए में ऐसे तत्व बहुतायत में होती है, जिसके सेवन से शरीर में रक्त की मात्रा में वृद्धि होती है जिससे शरीर निरोगी रहते हुए स्वस्थ रहता है। बथुए को साग के रूप में भी खाया जा सकता है, उबले हुए बथुए को दही में मिलाकर भी बना सकते हैं। इसका सेवन किया जाए तो ऐसा करना स्वास्थ्य के लिए बेहद उत्तम होता है। खूनी बवासीर और वातजन्य बवासीर में बथुआ बहुत ज्यादा लाभ पहुंचाता है। सहायक औषधि के रूप में इसका सेवन नकसीर और टी.वी. रोग में भी किया जा सकता है।

चौलाई (Red and green vegitable) : जिन महिलाओं को ल्यूकोरिया प्रदर रोग हो, उन्हें चौलाई का सेवन बहुत ज्यादा लाभ पहुंचाता है। रक्त प्रदर रोग को भी चौलाई जड़ से मिटा डालती है। चौलाई शीतल गुण वाली होती है। इसलिए इसका सेवन वातरोगियों को नहीं करना चाहिए। वातरोगी अगर चौलाई का सेवन करते हैं, तो ऐसा करने से उसके पेट में वायु की बढ़ोत्तरी हो जाती है। चौलाई हरी पत्तियों वाली साग-भाजी होती है। जिन महिलाओं की छाती सूख जाती है, उन्हें चौलाई का सेवन अवश्य करना चाहिए, क्योंकि चौलाई के सेवन से उनकी छाती दोबारा भर आया करती है। चौलाई के सेवन से त्वचा की खुश्की दूर हो जाती है, जिससे त्वचा चिकनी और मुलायम हो जाया करती है। चौलाई का सेवन वायु उत्पन्न करता है। इसलिए अगर चौलाई में हींग और मेथी डालकर पकाया जाय तो चौलाई का वायु उत्पन्न करने वाला दोष मिट जाया करता है। महिलाओं के साथ-साथ पुरुषों को भी चौलाई का सेवन लाभ पहुंचाता है। बनवासी लोग अक्सर मकड़ी के जहर की औषधि के रूप में जंगली चौलाई की भाजी का खूब सेवन करते हैं।

आलू (Potato) : आलू की खेती को हर कोई पसंद करता है। पूरे विश्व भर में आलू हर मौसम में मिल जाता है। आलू के विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाकर लोग चाव से खाया करते हैं। हां,

यह बात अवश्य है कि आलू के ज्यादा सेवन से शरीर में वायुविकार उत्पन्न हो जाया करता है पर इसमें यह खूबी भी है कि इसके सेवन से आंते साफ होती है। आलू में पर्याप्त मात्रा में वसा और कार्बोहाइडेट होता है। आलू में बस एक कमी यह है कि वह व्यक्ति को मोटा करता है। आलू को कच्चा नहीं खाया जा सकता है। आलू के सेवन से आंतों की सड़न दूर होती है। आंतों में जमा हुए विषैले तत्वों को मिटाया जा सकता है। इसके सेवन से आंतों की सूजन भी मिटती है।

पालक (Spinach) **:** पालक लौह तत्व की एक खान के समान है। इसके सेवन से शरीर में लौह तत्व की कमी दूर होती है, जिससे शरीर को उचित ऑक्सीजन की आपूर्ति होती है और कार्बन डाईआक्साइड गैस शरीर से बाहर निकलती है। पालक के सेवन से रक्त साफ होता है, जंगली पालक के सेवन से पुरुषों की स्तम्भन शक्ति और बाजीकरण शक्ति में बढ़ोतरी होती है। पालक में सोडा भी होता है, इसलिए इसमें अलग से नमक मिलाने की आवश्यकता नहीं होती है।

फूलगोभी, पत्तागोभी (Cauliflower,Cabbage) **:** इन दोनों प्रकार की गोभी में लवण व गंधक की अधिकता होती है। मानव शरीर को अंदर और बाहर से स्वच्छ रखने में गंधक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके सेवन से शरीर दीर्घजीवी बनता है। बंदगोभी में क्लोरीन, सल्फर आदि खनिज पदार्थ होते हैं, इन खनिजों के सेवन से खाना सही तरह से पचता है और पेट भी साफ रहता है। चूंकि बंदगोभी वायु उत्पन्न करती है इसलिए इसका यह दुर्गण मिटाने के लिए बंदगोभी में जीरा और गरम मसाला अवश्य मिलाना चाहिए। कच्ची बंदगोभी से शरीर को विटामिन 'ए' मिलता है।

मटर (Pea)**:** मटर फली वाली सब्जी है। आलू मटर की सब्जी हर किसी को बहुत स्वाद लगती है। सर्दी के मौसम में मटर का उत्पादन खूब होता है। वैसे आजकल 12 महीने मटर बाजार में उपलब्ध रहती है। मटर के अंदर कैल्शियम तत्व की अधिकता होती है। स्नायु मंडल को इसके सेवन से ताकत मिलती है। जो शरीर से कमजोर और बौने होते हैं, उन्हें मटर की सब्जी का सेवन अवश्य करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से उनका शरीर भर जाएगा। मटर के सेवन से शरीर का रक्त शुद्ध होता है और रक्त के उत्पादन की बढ़ोतरी होती है। जिन महिलाओं को मासिक धर्म के समय ज्यादा कष्ट का अनुभव होता है, उन्हें मटर का सेवन अवश्य करना चाहिए। हरे मटर को कच्चा खाने से शरीर में गैस बनती है इसलिए कच्ची मटर का सेवन नहीं करना चाहिए। उबली हुई मटर को चीनी के साथ खाने से श्वास क्रिया में शुद्धता आती है। हरी मटर का सेवन करने से शरीर में मांस भी बढ़ता है।

मेथी (Fenugreek Plant) **:** मेथी के सेवन से खून रूकता है और बढ़ता भी है। मेथी पूर्ण रूप से एक औषधि के समान है। मेथी के पौधों की जड़ों में एक गुण यह भी होता है कि इसकी जड़ों में इतनी ताकत होती है कि वे बंजर जमीन को भी उपजाऊ बना सकती हैं इसलिए इसके सेवन से महिलाओं की गर्भधारण क्षमता में ज्यादा बढ़ोतरी होती है।

मेथी को दो तरह से प्राप्त किया जा सकता है। सर्दियों में मेथी हरे पत्तों के रूप में मिलती है। मेथी को दूसरे रूप में बीज के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। मेथी के बीजों की सब्जी भी बनायी जा सकती है। डायबीटीज के रोगियों को मेथी का सेवन बहुत लाभ पहुंचाता है। जिन महिलाओं की माहवारी नियमित रूप से नहीं होती है और बेहद कष्टदायी होती है उन्हें मेथी का सेवन अवश्य करना चाहिए। मेथी की सब्जी, टमाटर और पालक को मिलाकर बनायी जाती है। मेथी की पत्तियों में गंधक, मैंगजीन और लौह तत्व भी भरमार मात्रा में रहती है ये सभी तत्व महिलाओं को बेहद लाभ पहुंचाते हैं, इसलिए महिलाओं को मेथी का सेवन अवश्य करना चाहिए। जिन महिलाओं में रज की कमी होती है, उन्हें मेथी का सेवन पूर्ण महिला बनाता है।

गाजर (**Carrot**)**:** सर्दियों में गाजर का सेवन शरीर को खूब लाभ पहुंचाता है। गाजर के सेवन से

हमें विटामिन ए की भरपूर प्राप्ति होती है। इसके सेवन से आंखों की ज्योति बढ़ती है। मर्दाना ताकत को गाजर के सेवन से बढ़ाया जा सकता है। मस्तिष्क को गाजर का सेवन खूब लाभ पहुंचाता है। इसके सेवन से झाइयों और मुहांसों से भी छुटकारा पाया जा सकता है। गाजर के हलवे को लोग खूब चाव से खाते हैं। आधा शीशी का दर्द, पथरी व जिगर की गर्मी से गाजर के सेवन से छुटकारा पाया जा सकता है।

टमाटर (Tomato) : टमाटर आपको हर मौसम में बाजार में मिल जायेगा। टमाटर को सब्जी या सलाद किसी भी रूप में खाया जा सकता है। हमारे शरीर के खून की लालिमा को बनाए रखने के लिए टमाटर महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। टमाटर अनेक पौष्टिक तत्वों और खनिज पदार्थों का एक तरह से संगम है. इसके सेवन से पेट की सफाई होती है। साथ ही इसके सेवन से आंतों की भी सफाई होती है, जिससे गुर्दे सही रूप से काम कर पाते हैं। इसमें पोटैशियम भी होता है जिसकी वजह से आंखों की ज्योति बढ़ाती है। टमाटर के सेवन से शरीर को तो पुष्ट बनाया जा सकता है, साथ ही इसके सेवन से हृदय की घड़कनों को भी नियमित किया जा सकता है। खूबियों के साथ-साथ टमाटर में यह दोष भी है कि इसके सेवन से बीज पेट में इकट्ठे होकर पथरी का निर्माण कर देने में सहायक सिद्ध होते हैं। लेकिन यह अवस्था तब ही उत्पन्न होती है, जब पहले से ही किसी को पथरी की समस्या हो।

मूली (Radish) : सम्पूर्ण भारतवर्ष में मूली तरकारी के रूप में खायी जाती है। इसके बीजों और जड़ से जो तेल निकलता है, उसका सफेद रंग होता है। गाजर की तरह ही मूली का कद होता है। पत्ते लंबे होते हैं, फूल सफेद सरसों के फूल के आकार के होते हैं। कच्ची मूली को छीलकर लोग बड़े ही चाव से खाते हैं। मूली की सब्जी भी बनायी जाती है। मूली के बीजों में उड़नशील तेल होता है।

करेला (Bitter Gourd) : करेला यूं तो स्वाद से कड़वा होता है, पर यह एक तरह से गुणों की खान के समान है। इसमें गंध युक्त उड़नशील तेल, कैरोटीन, ग्लूकोसाइड, सेपोनीन होता है। इसके बीजों में 32 प्रतिशत विरेचक तेल होता है। मधुमेह के रोगियों को करेले का सेवन खूब लाभ पहुंचाता है। मधुमेह के रोगियों को करेले की सब्जी खानी चाहिए और इसके रस का सेवन करना चाहिए। करेला खून को साफ करता है। पाचन क्रिया में भी करेले का सेवन ठीक रखता है। करेला, तिक्त, शीतल, कड़वा, हल्का, कुष्ठ एवं ज्वरनाशक, कृमिनाशक, प्रमेह नाशक, पांडुरोग नाशक होता है, इसलिए इसके कड़वे स्वाद पर न जाकर इसकी सब्जी का सेवन बहुतायत से करना चाहिए।

भिण्डी (Lady's Finger) : गरमी के मौसम में भिण्डी भरपूर मात्रा में उपलब्ध रहती है। वैसे तो भिण्डी की सब्जी हर किसी को पसंद होती है, पर इसमें एक दोष यह है कि इसके सेवन से वसा की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे व्यक्ति मोटापे का शिकार हो जाता है। भिण्डी का यह दोष मिटाने के लिए इसकी सब्जी में जीरे और हींग का सेवन अवश्य करना चाहिए। भिण्डी में प्रोटीन और कार्बोहाइडेट की मात्रा भरपूर होती है। कभी भी भिण्डी को पानी में नहीं धोना चाहिए। धोने के बजाए भिण्डी को किसी साफ कपड़े के साथ साफ करना चाहिए।

बैंगन (Brinjal) : बैंगन में आयोडीन पर्याप्त मात्रा में होता है। बालों को उगाने में बैंगन बहुत ही उपयोगी भूमिका निभाता है। आलू, बैंगन की सब्जी को लोग खूब पसंद करते हैं। बैंगन एक सब्जी ही नहीं बैंगन एक औषधि भी है। इसके सेवन से बवासीर रोग ठीक होता है। अगर आप अनिद्रा के शिकार हैं तो बैंगन की सब्जी खूब खाने से आपको खूब गहरी नींद आने लगेगी। अगर आपके कानों में सूजन है और दर्द भी खूब हो रहा है तो बैंगन के थोड़े से टुकड़े को आग पर डाल दें और फिर इसके धुंए को अपने दर्द और सूजन वाले कान में जाने दें। ऐसा करने से कान के कीटाणु मर जायेंगे और आपको दर्द और सूजन से राहत मिल जायेगी। हृदय रोगियों को बैंगन की सब्जी बहुत ज्यादा लाभ पहुंचाती है।

-शँकरलाल सोमानी, कोलकाता

दीर्घकालीन प्रतीक्षोपरान्त 'वैचारिकी' का अंक जनवरी-फरवरी 2020 हस्तगत हुआ। भारतीय साहित्य व संस्कृति के संरक्षण, पोषण एवं प्रचार हेतु 'वैचारिकी' की अनूठी पठन-सामग्री अपनी विशिष्ट पहचान रखती है।

'विचार' शीर्षक अपने सम्पादकीय में वसंतोद्गम की चर्चा के साथ-साथ सार्थक सकारात्मक सोच की उर्जा भी दे जाता है, जिसकी कोविड 19 जैसी महामारी काल में अत्यंत आवश्यकता भी है। आज हम सभी अपने घरों में कैद अप्रत्याशित रूप से लड़ रहे हैं और अनजाने भय, मानसिक तनाव और अवसाद से जूझ रहे हैं। ऐसे वातावरण में एक सकारात्मक सोच संजीवनी का कार्य कर जाती है।

मैं सम्पादक महोदय के इस विचार से पूर्णतः सहमत हूँ कि यह अत्यंत लज्जाजनक विषय है कि स्वतंत्र भारत में आज तक हिन्दी 'राष्ट्र भाषा' के रूप में स्थापित नहीं हो पायी है। हमें अपने ही देश में इसे समादृत करने के लिए 'हिन्दी दिवस' या 'हिन्दी पखवाड़ा' मनाने की आवश्यकता पड़ रही है। हम लोग हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर स्थापित करने की आकांक्षा तो रखते हैं लेकिन अपने ही देश में इसे वह सम्मान नहीं दिला पा रहे जिसकी कि यह अधिकारिणी है।

विदुषी डॉ. अलकनन्दा शर्मा का आलेख 'काल गणना में खगोलीय तत्व' अत्यंत रोचक और ज्ञानवर्धक है। इसके लिए लेखिका बधाई की पात्र हैं। डॉ. विष्णु चन्द्र पाठक कृत 'भारत की अभिवादन संस्कृति' एक गवेषणात्मक सुदंर आलेख है। हमारी भारतीय संस्कृति माता-पिता, देवता तथा ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध गुरु जनों के प्रति सम्मान-प्रदर्शन के भाव को पोषित करती है- "अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनम्। चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।।" यह भी सच है कि पारस्परिक अभिवादन समाज में प्रेम, आत्मीयता तथा सम्मान की अभिवृद्धि करता है, लेकिन अभिवादन एवं आशीर्वाद प्राप्ति में भी वर्ण व्यवस्था के कठोर नियमों के कारण अभिव्यक्ति भेद मन को बेहद कचोटता है। यह देश जहाँ 'शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः' (श्रीमद्भगवतगीता 5/18) के सिद्धान्त का परिपोषक रहा है वहाँ मानव-मानव के मध्य भेद-बुद्धि अन्तस् को आहत करती है। सभी प्राणियों में अपनी अन्तरात्मा की छवि देखने वाले हम भारतीयों के चिंतन में शनैः-शनैः कैसे इतना ह्रास होता चला गया कि यह समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जैसे ऊवर्ग में बँट गया और श्रेष्ठ-हीन की भावना समाज में बलवती होती चली गयी। वास्तव में भेद बुद्धि रहित अभिवादन व आशीर्वाद प्रेषण ही शाश्वत आत्मा के सौन्दर्य का परिचायक हो सकता है।

डॉ. तेज सिंह गावई का 'भारतीय डायस्पोरा फिजी के विशेष संदर्भ में' लेख 19वीं सदी में अंग्रेजों द्वारा जबरन गिरमिटिया मजदूरों की शक्ल में मॉरिशस, सूरीनाम, फिजी, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में भेजे गये विवश भारतीयों की करुण गाथा कहता है लेकिन आज इन प्रवासी श्रमिकों की स्थिति बिल्कुल भिन्न है। अतीव कष्ट सहकर

इन्होंने अपने अनथक प्रयत्नों के फलस्वरूप समृद्धि और खुशहाली अर्जित की है। मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम आदि देशों में इन भारतीय मूल के निवासियों ने भारतीय संस्कृति और हिन्दी की अखंड ज्योति जलायी है। सरनामी हिन्दी, मॉरिशस की हिन्दी और फिजी की हिन्दी के रूप में इन्होंने हिन्दी को एक विशेष रूप दिया है और प्रचुर मात्रा में हिन्दी साहित्य का सृजन किया है।

डॉ. भवानी सिंह का 'हिमाचल प्रदेश की सांस्कृतिक धरोहर प्रसिद्ध लोकनाटयः करियाला एवं ठोडा' लेख पठनीय व शोधपरक है। एतदर्थ लेखक को साधुवाद। उत्तराखण्ड की पावन देवभूमि भी अद्‌भुत लोक नाट्यों और लोक गाथाओं से समृद्ध है। हिमाचल व उत्तराखण्ड के लोक नाट्यों की विषय-वस्तु और लोक वाद्यों जैसे- ढोल, दमाउ, रणसिंघा, तुरही, ढाल तलवार इत्यादि में अद्‌भुत समानता परिलक्षित होती है। पण्डवायण(महाभारत) की तर्ज़ पर उत्तराखण्ड के लोक नाट्यों में भी महाभारत की अनेक घटनाओं को आधार बनाया गया है।

-डा. मृदुल जोशी, हिन्दी विभाग
गुरु कुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

अप्रत्याशित आई कोरोना महामारी की मार से सारे संसार की व्यवस्थाएँ अव्यवस्थित हो गई हैं, प्रकाशन संस्थानों की जड़ें ही चरमरा गई हैं, निष्क्रिय होकर काल कवलित भी हो गई हैं। भारतीय विद्या मंदिर की पत्रिका ' वैचारिकी' भी कहीं ऐसी ही परिस्थिति के भंवर में फँस तो नहीं गई, मेरी आशंका थी। पर अचानक डिजिटल फर्म में निकलकर हाथ में आने की खबर कोलकाता से प्रबंधक श्री शंकरलाल सोमानी ने दी तो मुझे अप्रत्याशित खुशी हुई। प्रधान संपादक श्रद्धेय विट्ठलदास मूंधड़ा का संपादकीय संदेश पढ़ा तो तसल्ली मिली, उत्साह जागा और अत्यधिक प्रसन्नता हुई, क्योंकि उन्होंने लिखा है,' हम एक बार फिर नये जोश, उत्साह से अंग्रेजी नव वर्ष से' वैचारिकी' के प्रकाशन की निरंतरता एवं समयबद्धता के लिए दृढ़संकल्पित होने की दिशा में अग्रसर हो रहे हैं।' पाठकों, लेखकों तथा शुभचिंतकों के लिए इससे बड़ा उपहार क्या होगा? मेरी नज़र में 'वैचारिकी' अपने विशेष लक्ष्य को लेकर निश्चित दिशा की ओर बढ़ रही है जो देश दुनिया की भलाई के लिए आज जरूरी है। शोधपरक और अनुसंधानमूलक आलेखों को छापकर आप ने अपना राजमार्ग स्वच्छ और सटीक बनाया है जिसको सदा अग्रसर होने का बल और सहयोग मिलते रहना चाहिए। सबसे बड़ी और गौरव की बात यह भी है कि कलकत्ता महानगरी के लिए हिन्दी के विकास के नज़रिए से 'वैचारिकी' का प्रकाशन अति आवश्यक भी है, क्योंकि जहाँ तक मेरी जानकारी है, हिन्दी पत्रकारिता की नींव कलकत्ता में खड़ी हुई थी। श्री रावेल पुष्प जैसे सचेत और सजग साहित्यकार का सहयोग आप को मिल रहा है तो यात्रा उम्मीदों से भरी और सफल होती जाएगी। इस अंक में' काल गणना के खगोलीय तत्व', 'भारत की अभिवादन संस्कृति' , 'रुहेलखण्ड : नामकरण और विस्तार' 'ताजमहल महाराजा मानसिंह का महल था' और अन्य रचनाएं एक से बढ़कर एक , विचारणीय तथा उल्लेखनीय हैं। लेखकों को शुभकामनाएँ और बधाइयाँ।

–बिर्ख खडका डुवर्सेली
आमा खडकालय, दुर्गागढी,
प्रधाननगर, दार्जिलिंग-734003
मो. 9749053857

इस कोरोना काल में हर ओर त्राहि-त्राहि मची हुई है। ऐसे में रचनात्मक कर्म से जुड़े हुए लोगों में भी बेचैनी, व्याकुलता है। लिखने पढ़ने के सारे साधन सिमटते जा रहे हैं। पत्र-पत्रिकाएं लगभग बंद के कगार पर हैं; खासतौर पर लघु पत्र पत्रिकाएं विपत्ति के दौर से गुजर रही है। प्रायः दैनिकों के लघु संस्करण ही निकल रहे हैं। वैचारिकी का ऐसे समय

में ई-संस्करण आना शुभ संकेत है। कहना चाहिए कि पत्रिका किसी रूप में जीवित है। समय के प्रहार को मात देते हुए अपने लक्ष्य से कदम-ताल कर रही है। उम्मीद है भविष्य में भी यह क्रम बना रहेगा। संपादक और प्रकाशन मंडल को इस ई-अंक के लिए बधाई व शुभकामनाएं।

- सेराज खान बातिश
3-बी, बंगाली शाह, वारसी लेन,
खिदिरपुर, कोलकाता-23
मो. 9339847198

लंबे अंतराल के बाद अंक देखने को मिला। हिन्दी के प्रबुद्ध समाज में वैचारिकी के लिए बहुत सम्मानित जगह है। खास तौर पर इस स्तर की शोधपूर्ण सामग्री अन्यत्र देखने को नहीं मिलती। इस अंक में भी यह वैशिष्ट्य सुरक्षित है। इस अंक में भी कई शोधपूर्ण लेख हैं। उम्मीद करता हूं कि वैचारिकी नियमित निकलती रहेगी। धन्यवाद।

- प्रो. अमरनाथ,
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
कलकत्ता विश्वविद्यालय

पत्रिका के मार्च-अप्रैल अंक 2019 की सभी सामग्री पठनीय, उपयोगी है। ये विचित्र पुष्प के दर्शन दुर्लभ हैं, चित्र के जरिए दर्शन करवाया, धन्यवाद। राजभाषा हिन्दी का विकास : दशा व दिशा, उत्तर-पूर्वी राज्यों में हिन्दी भाषा शिक्षण :समस्याएं एवं समाधान, अण्डमान तथा निकोबार में हिन्दी भाषा-साहित्य के साथ-साथ काठमाण्डू यात्रा काफी रूचिदायक है। परिश्रम उत्तम है, साधुवाद।

-बी.एस. शांताबाई
प्रधान सचिव,
कर्नाटक महिला हिन्दी सेवा समिति
चामराजपेट,
बेंगलूर-560018

'वैचारिकी' पत्रिका के आरंभ से ही इसका पाठक रहा हूं। भारत के साहित्य, धर्म-दर्शन एवं अन्य विविध विषयों पर अनुसंधान की विश्वसनीय एवं विचारोत्तेजक लेखन सामग्री की यह एक अनोखी पहल वाली पत्रिका मुझे अत्यंत प्रिय रही है। बीच में इसके प्रकाशन में आई रुकावटों ने मन में एक रिक्तता की भावना भर दी थी। जनवरी-फरवरी 2020 का 'डिजीटल' अंक देख कर मन में असीम सुख-संतोष का भाव जगा था। आशा भी हुई कि अब छपी हुई प्रकाशित प्रति भी शीघ्र ही उपलब्ध हो सकेगी। यह कहने की शायद ही आवश्यकता हो कि ऐसी विद्वतापूर्ण खोजी लेखन सामग्री संग्रहणीय होने के कारण छपी हुई होने से ही स्थायी हो सकती है एवं हमेशा के लिये संदर्भ का महत्त्वपूर्ण स्थान दें सकती है।

जनवरी-फरवरी 2020 का अंक फिर अनेकों विविध विषयों पर ज्ञान का अनुसंधान-सम्मत भंडार रहा है। इसका हर लेख नई सूचनायें उपलब्ध कराता है, जो हर ज्ञानार्थी के लिये आवश्यक है। लेखकों का प्रयास तो प्रशंसनीय है ही, सम्पादकीय कार्य भी बड़ी जिम्मेवारी से सम्पन्न हुआ है। सम्पादकीय विचार चर्चा में डा. विट्ठलदासजी मूंधड़ा ने कई सामयिक विषयों पर बातें करते हुए आशाजनक भविष्य का विश्वास दिलाया था। लेकिन फिर से कोरोनावायरस महामारी के कारण फैली असुविधाओं के कारण 'वैचारिकी' का अगला अंक अभी तक प्रतीक्षित है। आशा है, अब शीघ्र ही इस प्रतीक्षा का शुभ-सुन्दर समापन होगा। नये अंक में और भी अधिक अनुसंधान-अधिकृत सामग्री होगी, जो हमें हमारे राष्ट्रीय गौरव से सही परिचय करवाने में सफल होगी।

मेरी हार्दिक शुभकामनाएं इस पत्रिका की सफलता के लिये है।

-राम मोहन लखोटिया,
लखोटिया निकेत,
सी/498, लेक गार्डेन्स,
कोलकाता -700045

भारतीय विद्या मंदिर के प्रकाशन

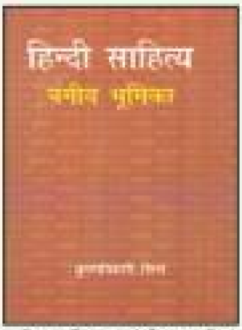

हिन्दी साहित्य बंगीय भूमिका
कृष्णबिहारी मिश्र
मूल्य 750/- पृ.सं. 551
ISBN : 978-81-89302-48-1

श्रीरामकथा की कथा (प्रथम खण्ड)
आचार्य सोहनलाल रामरंग
मूल्य 600/- पृ. सं. 379
ISBN : 978-81-89302-46-7

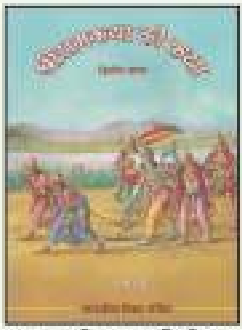

श्रीरामकथा की कथा (द्वितीय खण्ड)
आचार्य सोहनलाल रामरंग
मूल्य 600/- पृ. सं. 381
ISBN : 978-81-89302-50-4

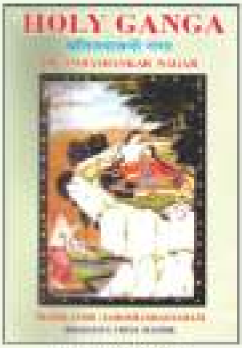

Holo Ganga
Tr. Jaikishandas Sadani
Price : Rs. 750/- Pages : 331
ISBN : 978-81-89302-62-7

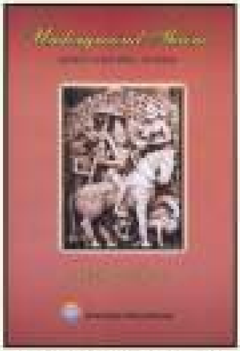

Underground Shrine
Jaikishandas Sadani
Rs. 200/- Pgs. 112
ISBN : 978-81-89302-39-9

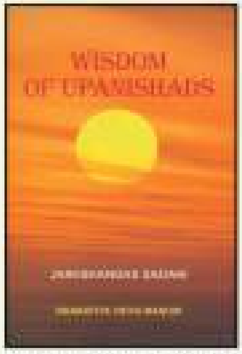

Wisdom of Upanishads
Tr. Jaikishandas Sadani
Rs. 130/- Pgs. 124
ISBN : 81-89302-04-3

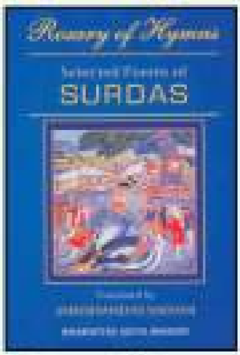

Rosary of Hymns
Tr. Jaikishandas Sadani
Rs. 150/- Pgs. 154
ISBN : 81-89302-01-9

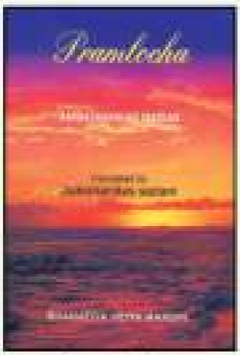

Pramlocha
Tr. Jaikishandas Sadani
Rs. 130/- Pgs. 126
ISBN : 978-81-89302-02-7

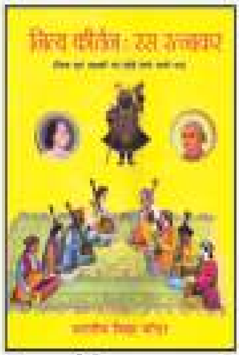

नित्य कीर्तन : रस रत्नाकर
मूल्य 900/-
ISBN : 978-81-89302-35-1

पुस्तकादेश हेतु संपर्क करें

शंकरलाल सोमानी, सिम्पलेक्स हाउस, 27, शेक्सपीयर सरणी, कोलकाता-700 017 दूरभाष : 033-23011504 मोबाइल : 09830559364

VAICHARIKI Bi-Monthly • ₹50/-   Mar-Apr/May-June 2020   R.N.I. No. 22298/71

From
BHARATIYA VIDYA MANDIR
12/1, Nellie Sengupta Sarani
Kolkata - 700087 *(W.B.)*

TO

Bharatiya Vidya Mandir
Supported by
Simplex Infrastructures Ltd

PMKVY के तहत

कामगारों के लिए रोजगारोन्मुखी
निर्माण कौशल प्रशिक्षण

प्रशिक्षण कार्यक्रम की मुख्य बातें:

1. 80% अभ्यास और 20% सिद्धांत
2. कार्यस्थल अभ्यास प्रशिक्षण में निम्नलिखित अभ्यास शामिल हैं:
   - स्टील रेंफोर्समेंट पर 10 दिन का प्रशिक्षण
   - शटरिंग फॉर्मवर्क एवं कारपेंट्री पर 10 दिन का प्रशिक्षण
   - मेसनरी एवं कंक्रीट टेक्नोलॉजी पर 10 दिन का प्रशिक्षण
   - सहायक इलेक्ट्रीशियन पर 10 दिन का प्रशिक्षण
   - श्रम प्रबंधन और साइट संगठन का ज्ञान
3. किसी भी प्रकार का शुल्क नहीं देना है
4. PMKVY के पाठ्यक्रम पूरा होने पर उत्तीर्ण कामगारों को CSDCI द्वारा प्रमाण पत्र दिया जाता है

सरकार की PMKVY योजना को आगे ले जाने के लिये **बी.वी.एम - सिम्प्लेक्स इंफ्रास्ट्रक्चर्स लिमिटेड**, परियोजना स्थलों पर कामगारों के लिये **कार्यस्थल अभ्यास प्रशिक्षण** की व्यवस्था कर रही है। इस प्रशिक्षण के द्वारा कामगार अपनी कमियों को दूर कर सकेंगे तथा सरकार से मान्यता प्राप्त सर्टिफिकेट भी प्राप्त कर सकेंगे।

इससे कामगारों के रोजगार में वृद्धि होगी

प्रशिक्षण अवधि एवं समय	• फ्लेक्सी प्रशिक्षण मॉड्यूल 10 दिन के लिये • समय: सुबह 9:00 बजे से शाम 5:30 बजे तक
बैच साइज	• न्यूनतम 20 कैंडिडेट तथा उच्चतम 30 कैंडिडेट प्रति बैच
प्रशिक्षण स्थान	• किसी भी कंस्ट्रक्शन साइट पर
कार्यक्रम शुल्क	• शुल्क मुक्त • CSDCI द्वारा कुशलता प्रमाण पत्र

सम्पर्क सूत्र

Kolkata (Regd. Office)
Mr. S. L. Somani
Bharatiya Vidya Mandir
12/1, Nellie Sengupta, Sarani
Kolkata – 700087, Mob. No. 9830539364
Email : shankar.somanibvm@gmail.com

New Delhi (Branch Office)
Col. N. B. Saxena
B.V.M – SIMPLEX
Vaikunth House, 82-83, Nehru Place
Delhi – 110019, Ph. No. – 011-49444200, Ext. 236
Web: www.bharatiyavidyamandir.org